मधुवर्षणम्

मौलिक-संस्कृत-काव्यम्

(हिन्दी-अनुवादसहितम्)



लेखक :—
दुर्गादत्त शास्त्री

डा० सत्यव्रत शर्मा, शास्त्री,
व्याकरणाचार्य,
अध्यक्ष, संस्कृत विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय की
सेवा में सादर भेंट।

मधुवर्षणम्

मौलिक-संस्कृत-काव्यम्

(हिन्दी-अनुवाद-सहितम्)

लेखकः

दुर्गादत्त शास्त्री
विद्यालङ्कारः, साहित्यरत्नम्,
(राष्ट्रीयपुरस्कारप्राप्तः)

प्रथमसंस्करणम्, आषाढ़, २०२९ मूल्यम्—७.००
जून, १९७२ (सात रुपये)

प्रकाशक :

रामरक्खीदेवी भारद्वाज, ग्राम—नलेटी,
डाकघर—नलेटी, द्वारा—नैहरनपुखर,
तहसील—देहरागोपीपुर, जिला—कांगड़ा (हि० प्र०)

लेखक की अन्य कृतियां :

१.	राष्ट्रपथप्रदर्शनम्	मौलिकं संस्कृतकाव्यम्	वर्ष—१९६७
२.	तर्जनी	,, ,, ,,	वर्ष—१९७०

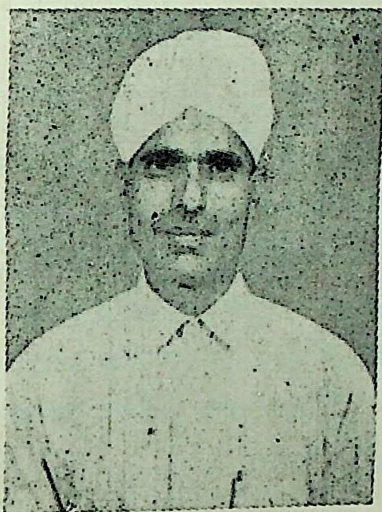
मुद्रक :

देवदत्त शास्त्री, विद्याभास्कर
विश्वेश्वरानन्द वैदिक रिसर्च
इन्स्टीच्यूट प्रैस, साधुआश्रम,
होशियारपुर (पंजाब)।

समर्पणम्

प्रथमं लिखितं काव्यं 'राष्ट्रपथप्रदर्शनम्' ।
द्वितीयं 'तर्जनी' नाम तृतीयं 'मधुवर्षणम्' ॥
समर्पितानि राष्ट्रार्थं काव्यानीमानि सादरम् ।
अधीत्य सकला लोका लभन्तां ज्ञानमुत्तमम् ॥

लेखक :



दुर्गादत्त शास्त्री

विद्यालङ्कार, साहित्यरत्न, (राष्ट्रीयपुरस्कारप्राप्त)
ग्राम—नलेटी, डाकघर—नलेटी, द्वारा—नैहरनपुखर,
तहसील—देहरा गोपीपुर, जिला—कांगड़ा (हि० प्र०)

प्राक्कथनम्

राष्ट्र की उपासना में मेरा यह तीसरा प्रयास है। इस काव्य के सम्बन्ध में मैं अधिक कहना नहीं चाहूंगा। पाठक इसका अध्ययन करके स्वयं इसके सम्बन्ध में अपनी धारणा बनाएंगे। हां, इतना संकेत अवश्य करूंगा कि प्रथम दो काव्यों में कोई शृङ्खलाबद्ध कथा नहीं है, उनका प्रत्येक अध्याय अपने में स्वतन्त्र है परन्तु प्रस्तुत काव्य में एक ही धारावाहिनी कथा है जो सात सर्गों में विभक्त है।

इस काव्य का रूप सुसंस्कृत करने में डा. शिवप्रसाद जी भारद्वाज, प्राध्यापक, साधु आश्रम होशियारपुर ने मुझे जो सुझाव दिये तदर्थ मैं उनका आभारी हूं तथा पीताम्बरदत्त जी शास्त्री ने प्रूफ-संशोधन-कार्य में जो मेरी प्रशंसनीय सहायता की है उसके लिये उनका भी कृतज्ञ हूं। भरसक प्रयत्न करने पर भी मुद्रण में यदि कहीं अशुद्धि रह गई हो तो उसके लिये विद्वानों से क्षमा चाहता हूं।

आषाढ़ संक्रान्तिः, २०२९ दुर्गादत्तः

विषय-सूची

मधुवर्षण-सन्देशः

[१]

रक्तेन वक्षसः पत्रं पत्ये लिखति भामिनी ।
गताय प्रथमे सर्गे जेतुं शत्रून् हिमालये ॥१॥

चिन्तां विहाय गेहस्य युध्यस्व तत्र वल्लभ ।
साधये सकलं साधु मम वेश्मनि निश्चितम् ॥२॥

नारयो वञ्चनं कुर्युः सतर्को भव सर्वदा ।
मातृभूमेर्हितं कर्तुं शत्रून् मारय भीमवत् ॥३॥

पश्चात्तापं करोत्येवं नानेष्यत्तां स संयुगम् ।
अन्यथा खड्गमादायाभविष्यत् सा सहायका ॥४॥

[२]

द्वितीये व्यस्ततां स्वीयां पत्रे लिखति सुन्दरी ।
गत्वा गृहे गृहे कोषमर्जयति शुभानना ॥५॥

अन्यानि बहुवस्तूनि प्रहेतुं सैनिकान् प्रति ।
कारयन्ती वयस्याभिर् व्यस्तातिष्ठत् प्रतिक्षणम् ॥६॥

व्रतानि चाचरत्येवं यावद् भर्ता रणस्थले ।
भूमौ स्वप्स्यति तावत् सा चन्द्रवेणीधराङ्गना ॥७॥

[३]

तृतीये पार्वतीरोषाद् विभ्यती धूर्जटेस्तथा ।
संयाचते पतिं वीरं रक्षितुं स्वं हिमालयम् ॥८॥

[४]

अधिक्षिपति शत्रून् सा चतुर्थे दुःखिता भृशम् ।
विस्मृत्योपकृतीः सर्वा आक्राम्यन् भारतं खलाः ॥९॥

शस्त्रास्त्रनिर्मितौ शीघ्रं भवेम स्वावलम्बिनः ।
तदैव रक्षितुं राष्ट्रं शक्नुमो नान्यथा पते ॥१०॥

सज्जिता विविधैरस्त्रैः सेना नो भवतु द्रुतम् ।
यस्या भयेन संसारः कम्पतां वल्लभानिशम् ॥११॥

नारिः कदापि मोक्तव्यो हस्तायातो भवेद्यदि ।
पृथ्वीराजो दयां कृत्वा पश्चात्तापाऽन्वितोऽभवत् ॥१२॥

पाकस्य सूचयत्येवं सती भूयो विखण्डनम् ।
केवलं दिक्समास्वेव ज्योतिर्विद्याविचक्षणा ॥१३॥

[५]

अलिखत् पञ्चमे नारी "वीरभोग्या वसुन्धरा" ।
बलिष्ठं भारतं तस्माद् जायतां मानवृद्धये ॥१४॥

एकतायां निबद्धाश्चेन्न कश्चिज्जेतुमर्हति ।
तस्मात्परस्परं भेदो नास्तु भारतवासिषु ॥१५॥

कर्तव्यं सैनिकाः स्वीयं पालयन्तु दिवानिशम् ।
स्वस्वस्थानस्थिताश्चान्ये सन्तु कर्मपरायणाः ॥१६॥

[६]

शत्रुभिः पीडिते राष्ट्रे वर्तते यादृशी स्थितिः ।
षष्ठे सा विशदं ब्रूते सर्गे मर्मस्पृशि ध्रुवम् ॥१७॥

धेनवः कुञ्जरा अश्वा विरक्ता राष्ट्रपीडया ।
अन्याऽपि सकला सृष्टिर्विकला दृश्यते पते ॥१८॥

दर्शयित्वा स्वशौर्यं त्वं सकलान् सुखिनः कुरु ।
हत्वा शत्रून् समायातो लप्स्यसे मानमुत्तमम् ॥१९॥

[७]

सप्तमे स्वागतं ब्रूते यथेयं कर्तुमिच्छति ।
वल्लभोऽस्या यदा जित्वा वेश्म प्रत्यागमिष्यति ॥२०॥

परन्तु भाषते स्पष्टं नाङ्गस्पर्शः प्रदास्यते ।
आगच्छसि न चेद् भर्तर् जित्वा शत्रून् रणस्थले ॥२१॥

A GIST

One thousand nine hundred and sixtytwo—a clouded night—a lady plunges into the past—thinks of the nights she passed in the arms of her husband—thunder, lightning—jolted into the present—

Worries about her husband who is at the front–my man must be fighting heroically—the enemy is cunning—how they took us shouting slogans of 'bhai-bhai' and all the time preparing for the war—but my husband is a brave man, a clever man———danger is there—so what ? —danger is everywhere—death is inescapable—why not die fighting for the motherland————one and all vigilant to-day—victory will be ours—contributing in their own small way———I'll look after my in-laws with greater care—make a greater effort for the defence fund———why would'nt they let me go and participate in active fighting———India has had its 'ranis of Jhansi'.

How she fought—we could be free a hundred years back—Gandhi and Nehru would'nt have had to go to gaol—oh ! what must my husband be going through

so far away——I could never be happy away from him—for whom should I dress—I'll use no make-up use no ornaments till he comes———what spirit has this war enthused in our people—how they are donating their ornaments—the loving gifts that brothers gave to sisters and husbands to wives——how they boast of things their men must be doing at the front—oh ! that new-wed was just funny—she could'nt say a word, but her eyes were full of praise———the prayers today are all directcd to a happy outcome of thr war———

———Himalaya is the home of gods—Parvati is its star-eyed daughter—if the enemy is'nt thrown out she may get annoyed—she is the only one to whom ladies can turn——How Lord Shiva loves her——If Parvati is annoyed, he also may get angry—and O God ! what anger and what would'nt he do to appease the lady of his heart—see what he did to Daksha Prajapati—no, no, the Himalayas has to be saved even if I lose my husband——how somewhere in the Himalayan ranges king Dileepa offered his own body to the mythical lion to save the cow———

———Evil has to be punished—the Kaurvas would never see reason—these ungrateful people have forgotten all we did for them———we have to be

more careful—peace without power is meaningless and short-lived—we have to be self-sufficient in all war-material—what heights of advancement in science had our ancestors achieved—-Shrikrishna's *Chakra* must have been a missile of today and Ramayana's *Pushpak* a space-ship—why could'nt we reach the same stage again—we could and then our armies and arms will be the best——this War has opened our eyes—none should catch us napping again—may be Pakistan also threatens us tomorrow—we'll then be ready for them—we have to be united—Indians first and Indians last—these quarrels over languages and regions are'nt good—we could best serve the motherland by burying that hatchet.

——These differences weaken us as a Nation—and all boss over the weak—how sad and meaningless is life to-day——not only the living, the natural objects also are sad—the skies are all the time over-cast with dust-laden clouds———the Sun always is brighter after a rainy day—this Nation has seen worse days——every struggle gives birth to a strong and wise leader———in near future, a Lady shall come to the fore here—we'll grow stronger and stronger under her leadership—the whole world will be proud of her————

——Nothing is to be for ever—these days will also go—and then my man, my husband will be back with me—victorious when he comes, people will jealously see me moving about with him——but he touches me only if he puts up an heroic fight—to him also my body shall yield any pleasure only in that case—— how he'll enjoy resting on my breast—ah ! and then these clouds—the rains will come with all the pleasantary—the greenary will be honey-suckle and manna dew—the dew drops will be "Madhu-Varshanam" —Life will be all gay and lovely and lively.

These are the thoughts the Lady words in the letter, she is sending her husband somewhere at the front—

अथ प्रथमः सर्गः



काचित्कान्ता लिखति समरे युध्यमनाय पत्रं
पत्ये स्वाय प्रचुरबलिने संयुगेऽग्रेसराय ।
किञ्चित्स्वान्ते स्मरति विकलाऽपूर्वभावान् वहन्ती
नेत्रे रक्ते द्रुतमथ मनो लक्ष्यते लेखिकायाः ॥१॥

कोई नारी लड़ाई में सदा आगे रहने वाले तथा युद्धक्षेत्र में लड़ रहे बहुत बलवान् अपने पति के लिये पत्र लिख रही है। अनोखे विचारों को धारण करने वाली व्याकुल वह स्त्री अपने अन्तःकरण में कुछ सोच रही है। उसके नेत्र लाल हैं और मन उतावला प्रतीत हो रहा है ॥१॥

ध्यायं ध्यायं लिखति चतुरा लेखनीं भूषयन्ती
मुद्रा तस्या भवति च यथा प्रस्तुता विग्रहार्थम् ।
काये कम्पो हृदि घनतमः सङ्कटं वीक्ष्य भूमेः
पत्रेणासौ मनसि निहितं भावमाविष्करोति ॥२॥

अपनी लेखनी को सजाती हुई वह चतुर नारी बार-बार ध्यान करके लिख रही है। उसका आकार ऐसा है मानो कहीं

युद्ध करने के लिये जा रही हो। मातृभूमि के संकट को देख कर उसका शरीर कांप रहा है और दिल में घना अंधेरा छाया हुआ है। वह पत्र के द्वारा अपने मन के भाव प्रकट कर रही है ॥२॥

रूपं तस्या विचलति यथा गेषते नष्टवस्तू-
न्यादत्ते सा क्षिपति च पुनर् लेखनीं स्त्रीयहस्तात् ।
मस्या लेख्यं नहि नहि मया स्वासृजा शोभनं स्या-
देवं मत्वा प्रथमलिखितं कर्गलं क्षिप्तमासीत् ॥३॥

उसका आकार इस प्रकार विचलित हो रहा है मानो वह खोई वस्तुओं को ढूंढ रही हो। वह कभी अपने हाथ में कलम को ले रही है और कभी उसे फैंक रही है। क्या मुझे स्याही से लिखना चाहिये ? नहीं नहीं, अपने खून से लिखना ही अच्छा रहेगा। इस प्रकार सोच कर उसने पहले लिखे हुए कागज को फैंक दिया ॥३॥

भूमिं नत्वा शिरसि रजसो रेणुमाचष्ट कृत्वा
पूज्यास्माकं भवसि वसुधेऽवेक्ष्य दुःखं त्वदीयम् ।
दुष्टोऽत्यन्तं भवति मनुजो यस्य चित्तं न दूनं
कृच्छ्रं त्वत्कं भवतु गलितं प्राणदानेन नोऽम्ब ॥४॥

उसने भूमि को नमस्कार करके धूलि का एक कण सिर पर रखा और कहा—हे मातृभूमि, तू हमारी पूज्य है। तेरे दुःख को देख कर जिस मनुष्य के हृदय को ठेस नहीं पहुंचती

है वह बहुत ही दुष्ट होता है। हे माता, तेरा कष्ट हमारे प्राणों के बलिदान से भी दूर हो जाना चाहिये ॥४॥

आदायैकं स्वकरकमले तीक्ष्णधारं लवित्रं
वक्षोमध्ये त्रिकुलरमणी गाढमर्मिं चकार ।
कृत्वा रक्तं हरितपुटके लेखनीं पञ्चशाखे
मङ्क्ष्वारेभे ज्वलनतुलनांल्लेखितुं सार्थवर्णान् ॥५॥

उसने अपने हाथ में तेज धार वाला एक चाकू लिया और उससे अपनी छाती में एक गहरा घाव कर लिया। एक हरे दोने में घाव के खून को डाला और कलम हाथ में ले ली। फिर वह शीघ्र ही आग के समान चमकीले सार्थक अक्षरों को लिखने लग पड़ी ॥५॥

पत्रं भर्तर् लिपिकृतमिदं वक्षसो रक्त-मस्या
रात्रेरस्याः प्रियतम मया पश्चिमेषु क्षणेषु ।
प्राधीत्यैतद् गहनमनसा सावधानं पते मे
पूर्णं कृत्वा मम सुवचनं भारते मानमेहि ॥६॥

हे पतिदेव, रात्रि के अन्तिम क्षणों में अपनी छाती के खून की स्याही से मैंने यह पत्र लिखा है। हे पतिदेव, आप सावधान हो कर बड़ी गहराई से इस पत्र को पढ़ें और मेरे वचन को पूरा करके भारत में मान को प्राप्त करें ॥६॥

येयं रात्रिः परमसुखदा नाथ साकं त्वया मे
संलापैस्तैः श्रवणमधुरैः सर्वदा गच्छति स्म ।
साद्य क्रूरा भवति महती किं न जानासि सर्वं
लोके गुप्तं नहि मतिमतां वर्तते कान्त किञ्चित् ॥७॥

हे पतिदेव, जो यह रात सदा ही आप के साथ कानों को मीठा लगने वाली बातों को करते हुए बीतती थी वही रात आज सचमुच क्रूर बन कर सामने खड़ी है। क्या आप सब कुछ जानते नहीं हैं? संसार में बुद्धिमानों से कोई बात छिपी हुई नहीं रहती ॥७॥

एतद् ज्ञातं सरलहृदयैर्मानवैर्भारतीयैः
सीमास्माकं चरणमथिताऽरातिभिर्मित्रवेषैः ।
"भिन्नो नाहं" वितथवचनैः सख्यमापादयद्भिः
पापैरन्तर्विमलहृदयं बाह्यतो दर्शयद्भिः ॥८॥

सरल हृदय वाले भारतवासियों को यह प्रतीत ही है कि मित्र का वेश रखने वाले, "मैं आपसे भिन्न नहीं हूं" इस प्रकार के झूठे वचनों से मित्रता दिखाने वाले, अन्दर पाप भरे हुए और बाहर से निर्मल हृदय को दिखाने वाले शत्रुओं ने हमारी सीमा पर पैर रख दिया है ॥८॥

ज्ञातुं शक्तः प्रिय न सुजनो मानसं दुर्जनानां
सोऽयं वेत्ति स्वहृदयसमं संसृतेः सौम्यरूपम् ।
एवं दुष्टश्छलयति सदा सज्जनान् स्वच्छचित्तान्
सर्पोऽसर्पो न भवति पते तर्पितो दुग्धपानैः ॥९॥

भला आदमी दुष्टों के मन को नहीं पहचान सकता। वह अपने दिल के समान ही सारे संसार को साफ समझता है। इस प्रकार दुष्ट आदमी सदा ही निर्मल दिल वाले लोगों को ठगता है। हे पतिदेव, दूध पिलाने से भी सांप अपने स्वभाव को नहीं छोड़ता है ॥९॥

नैवास्माभिः प्रियतम कृतं शोभनं तिब्बतेऽस्य
स्वच्छस्वान्तैः कपटरहितैः स्वीकृतो योऽधिकारः ।
आनीतोऽसौ स्वनिकटमहो ! स्वाङ्घ्रिदंशाय दूराद्
दत्त्वा दुग्धं विषधरविषं वर्धितं कान्त नूनम् ॥१०॥

हे पतिदेव, कपट से सदा दूर रहने वाले, निर्मल अन्तः-करण वाले हम भारतीयों ने तिब्बत पर जो उसका अधिकार स्वीकार कर लिया यह अच्छी बात नहीं हुई। हम शत्रु को अपना पैर डंसाने के लिये स्वयं ही समीप ले आए। मानों हमने सांप को दूध पिला कर उसके विष को बढ़ा दिया ॥१०॥

एतेनासीद् भुवनविदितं प्रेम कान्तास्मदीयं
सत्कारोऽत्र प्रियतम कृतो बन्धुवत्तस्य चाओः ।
ऐणेयेऽसौ कपटहृदयो लक्षितो व्याघ्र एव-
च्छद्माच्छन्नं द्रुततरमिमं नग्नतां त्वं नयस्व ॥११॥

इससे हमारा जो स्नेह था उसे सारा संसार जानता था। चाऊ जब यहां आया तो हमने एक मित्र के समान उसका सत्कार किया। परन्तु यह तो मृगचर्म में ढका कपटी बाघ ही निकला। हे पतिदेव, कपट से ढके हुए इस शत्रु को शीघ्र ही नंगा करो ॥११॥

औदार्यं न प्रिय हितकरं मानवे पापलिप्ते
तत्तु श्रेष्ठं भवति मतिमन् केवलं सज्जनेषु ।
एतत्सिद्धं भवति भुवने पाण्डवानां प्रसंगा-
त्तेषां धृष्टा न किल कुरवोऽमानयन् साधुभावम् ॥१२॥

हे प्रियतम, पापी मनुष्य के साथ उदारता दिखाने का कोई लाभ नहीं। वह तो सज्जन पुरुषों में ही लाभदायक होती है। संसार में यह बात पांडवों के प्रसंग से मालूम होती है। धूर्त कौरवों ने उनकी सज्जनता का आदर नहीं किया था ॥१२॥

जिह्वायुग्मं भजति भुजगस्तादृशः शत्रुरेष
"भ्राता भ्राता" वदति मधुरं सच्छलं त्वेकयाऽस्मान् ।
अन्यां कृत्वा गरलतरलां दंशमस्मासु धत्ते
दुष्टेनैवं प्रियतम वयं वाञ्चिताः साधुवृत्ताः ॥१३॥

जैसे सांप की दो जिह्वाएं होती है उसी प्रकार इस शत्रु की भी दो जीभें हैं। एक जीभ के साथ तो यह छलपूर्वक हमें भाई-भाई बोलता है और दूसरी में विष भर कर हमें डंग मारता है। हे पतिदेव, इस दुष्ट ने सज्जन स्वभाव वाले हम लोगों को ठग लिया ।।१३।।

पश्चात्तापो न भवति परं संसृतौ शूरपुंसां
ते कुर्वन्ति प्रियतम तथा तीव्रबुद्धेः प्रयोगम् ।
तेषां पादो द्रुततरमिवाभीलशीर्षे स्थितः स्याद्
भर्तः शीघ्रं कुशलधिषणां सङ्कटेऽस्मिन् प्रयुङ्ग्धि ।।१४।।

हे पतिदेव, संसार में बहादुर पुरुष पश्चात्ताप नहीं करते हैं। वह इस प्रकार अपनी तीव्र बुद्धि का प्रयोग करते हैं जिससे शीघ्र ही संकट पर नियंत्रण पा लेते हैं। हे प्रिय, आप भी इसी प्रकार संकट में अपनी तीव्र बुद्धि का प्रयोग करें ।।१४।।

चिन्ता कार्या प्रियतम न मे शोभना स्वे गृहेऽहं
सर्वं कार्यं सुनिपुणतया सद्मनोऽहं करोमि ।
पित्रोः सेवां विमलमनसा सावधानाऽऽचरामि
क्षिप्रं भूमे रिपुरपि पते मर्दनीयो भवद्भिः ।।१५।।

हे पतिदेव, आप चिन्ता न करें, मैं अपने घर में अच्छी हूं, घर के सारे काम को अच्छे ढंग से कर रही हूं। माता-पिता

की सेवा भी बड़ी सावधानी से कर रही हूं। हे प्रिय, आप मातृभूमि के शत्रु को शीघ्र ही मार भगाएं ॥१५॥

चेतोवृत्तिर्नहि भवति चेत्साध्यकार्ये नरस्य
क्वासौ वोढुं प्रभवति तदा कार्यभारं सुखेन।
तस्माच्चित्तं भवतु भवतः स्वीयकार्यप्रसक्तं
चिन्तां हित्वा भव मम पते सावधानः समीके ॥१६॥

हे पतिदेव, यदि मनुष्य का मन अपने काम में ठीक ढंग से न लगा हो तो वह काम के भार को आसानी से कैसे उठा सकता है? इसलिये आप का मन अपने काम में ही लगा हुआ होना चाहिये। आप घर की चिन्ता को छोड़ कर युद्ध में सावधान होकर रहें ॥१६॥

नायं कालो भवति सुपते वेश्मनश्चिन्तनानां
सर्वो देशो विकलहृदयः पश्यति त्वां सुवीरम्।
एकाग्रेण प्रबलमनसा राष्ट्ररक्षां प्रकुर्या-
श्छिन्ने मूले प्रियतम कुतः पत्रशाखादिसत्ता ॥१७॥

हे पतिदेव, यह समय घर की चिन्ता का नहीं है। व्याकुल हुआ सारा देश तुझ बहादुर को देख रहा है। तुम एकाग्र और बलवान् मन से राष्ट्र की रक्षा करो। यदि मूल ही कट गया तो पत्ते और शाखाएं कहां रहेंगी? ॥१७॥

युद्धक्षेत्रे क्षणमपि किल ध्यानभङ्गो न साधु-
श्छिद्रान्वेषी भवति तु रिपुर्यत्र तत्र प्रहर्तुम् ।
तस्माच्चिन्तां परिहर पते मामकीं वेश्मनो वा
गर्वं हर्तुं दयित समरे वैरिणां स्याः सतर्कः ॥१८॥

हे पतिदेव, युद्ध के मैदान में एक पल के लिये भी ध्यान टूटना अच्छा नहीं होता। शत्रु तो प्रहार करने के लिए जहां तहां त्रुटि को ढूंढता ही रहता है। इसलिये आप मेरी या घर की चिन्ता को छोड़ दें और युद्ध में शत्रु का घमंड तोड़ने के लिये सावधान हो जाएं ॥१८॥

प्रातःकाले प्रतिदिनमहं नित्यचर्यां प्रकुर्वे
पश्चात्स्नात्वा नियममनुगा मन्दिरं यामि कान्त ।
तत्र स्थित्वा सकलजगदाधारमीशं नमामि
प्रत्यागत्य प्रिय च सदने व्यापृताहं भवामि ॥१९॥

हे पतिदेव, मैं प्रतिदिन प्रातःकाल अपनी नित्यचर्या को पूरा करती हूं, फिर स्नान कर के नियमानुसार मंदिर को जाती हूं। वहां सारे संसार के स्वामी भगवान् को नमस्कार करती हूं और फिर वहां से लौट कर घर के काम में जुट जाती हूं ॥१९॥

विस्मर्तव्यः प्रिय न भगवान् संसृतेर्हेतुभूत-
स्तस्याधीनं भवति सकलं स्थावरं जङ्गमं च ।
प्रभ्वादेशे भ्रमति निखिलं चक्रमेतच्च सृष्टेर्
दद्यादीशः सुविमलयशो युद्धभूमौ त्वदर्थम् ॥२०॥

हे पतिदेव, संसार के कारण भगवान् को कभी नहीं भूलना चाहिये। यह चर और अचर सारी सृष्टि उसके ही अधीन है। यह संसार का सारा चक्र ईश्वर की आज्ञा से ही घूमता है। वह प्रभु युद्ध-भूमि में आपको निर्मल यश प्रदान करे ॥२०॥

मन्यन्ते ये सकलजगतः कारणं नैव विष्णुं
तेषां बुद्धिर्भवति पतिता नास्तिकानां भुवीह ।
एते पापाः दयित भुवने दुःखदाः सज्जनानां
कृत्वोद्योगं भविकमतिभिः स्मारणीयः प्रभुस्तान् ॥२१॥

जो लोग सारे संसार के कारण विष्णु भगवान् को नहीं मानते हैं उन नास्तिक लोगों की बुद्धि इस संसार में पतित होती है। पापी नास्तिक लोग सज्जनों के लिए सदा दुःखदायी होते हैं। अच्छी बुद्धि वाले लोगों को चाहिये कि वह उद्योग कर के उन लोगों को उस प्रभु का स्मरण करवाएं ॥२१॥

गोविन्दे चेद् दयित भवति प्रत्ययः सत्यसिक्तो
धाता दत्ते प्रियतम तदा कार्यसिद्धिं नरेभ्यः ।
धृत्वा चित्ते सकलजगतः कारणं देवदेवं
हृत्वा कष्टं स्वजननभुवो वल्लभायाहि वेश्म ॥२२॥

हे पतिदेव, यदि ईश्वर पर सच्चा विश्वास हो तो वह निश्चय ही लोगों के काम सिद्ध करता है। इसलिये संसार के कारण देवताओं के देवता भगवान् को अपने दिल में धारण

करके मातृभूमि के कष्ट को दूर करो और फिर शीघ्र ही घर चले आओ ॥२२॥

प्राचीनेऽपि प्रिय दितिसुता देवतानामकुर्वन्
कष्टं घोरं विविधविधिभिश्चेतसा दूषितेन ।
चक्रे नाशं मनुजवपुषा राक्षसानां स्वयंभू-
रेवं भर्तश्छलबलवतां गर्वहन्ता त्वमेधि ॥२३॥

हे पतिदेव, प्राचीन काल में भी दैत्यों ने अपने मलिन मन के कारण देवताओं को अनेक प्रकार से भयानक कष्ट दिये थे। तब ईश्वर ने मानव शरीर धारण करके राक्षसों का नाश किया था। इसी प्रकार तुम भी छलबल रखने वाले इन शत्रुओं के घमंड को तोड़ो ॥२३॥

युद्धे जीयास्त्वमिति मनसा पूजयेऽहं भवानी-
मायुष्कामा दयित भवतः शङ्करं तोषयामि ।
सस्यश्यामा विविधमणिभिर्भूषिता मातृभूमिर्
हस्ताच्छत्रोः कथमपि पते नाप्नुयान्मानभङ्गम् ॥२४॥

हे पतिदेव, आपकी युद्ध में जीत हो इस भावना से मैं पार्वती की पूजा करती हूं और आपकी आयुवृद्धि के लिये शिव की उपासना भी करती हूं। हे प्रिय, खेती से हरी-भरी अनेक मणियों से सजी हुई इस मातृभूमि का शत्रु के हाथ से किसी भी प्रकार अपमान नहीं होना चाहिए ॥२४॥

शक्तेः पूजा भवति शुभदाऽमोघशक्तेरवाप्त्यै
शत्रून् हन्तुं मलिनहृदयान् हर्तुमिच्छून् भुवं नः ।
शुम्भं दैत्यं विपुलबलिनं तादृशं वा निशुम्भं
हत्वा देवी सकलजगतो भारमल्पं चकार ॥२५॥

हे पतिदेव, दूषित चित्त वाले हमारी भूमि को हरने की इच्छा वाले शत्रुओं को मारने के हेतु अपार शक्ति प्राप्त करने के लिये शक्ति की पूजा बहुत ही शुभकारक होती है। उस देवी ने भारी बल को धारण करने वाले शुंभ और निशुंभ दैत्य को मार कर सारे संसार का भार हल्का किया था ॥२५॥

दैत्या अस्या अशुभहृदया मानहानिं यदैच्छन्
सिंहारूढा भयदवदना खड्गमागृह्य हस्ते ।
नाशं तेषां प्रिय कृतवती संसृतिर्मोदमाप
स्मृत्वा तस्याः कुरु विशसनं वैरिणां संप्रहारे ॥२६॥

दूषित हृदय वाले दैत्यों ने जब शक्ति (चंडी) के मान को कुचलना चाहा तो क्रोध से भयानक मुखवाली देवी ने शेर पर चढ़ कर और हाथ में तलवार लेकर उनका नाश कर दिया और सारी सृष्टि में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। हे पतिदेव, आप उस चंडी को याद करके युद्ध में शत्रुओं का नाश करें ॥२६॥

दुष्टा एते न दयित ।विदुर् भारतस्याङ्गनानां
शौर्यं श्लाध्यं सकलभुवने विद्यते पूर्वकालात् ।
नार्यः सर्वाः स्वरिपुरुधिरं पातुकामाः कवोष्णं
कोपग्रस्ताः सुभग समयं कामयन्ते सुवीराः ॥२७॥

हे पतिदेव यह दुष्ट इस बात को नहीं जानते हैं कि भारतवर्ष की नारियों की शूरवीरता प्राचीनकाल से ही सारे संसार में प्रशंसा प्राप्त करती आई है। इस देश की सभी वीर नारियां अपने शत्रु का कुछ कुछ (ताजा) खून पीने के लिये समय की प्रतीक्षा में बैठी हैं ॥२७॥

मन्ये नित्यं दयित पितरौ मन्दिरे देवतुल्यौ
यावच्छक्यं भवति सुपतेऽभ्यर्चनामाचरामि ।
वेद्मि श्वश्रूममलमनसा पार्वतीं शम्भुतुल्यं
पूज्यं तातं सरलहृदयं प्रत्ययं मे कुरुष्व ॥२८॥

हे पतिदेव, मैं घर पर माता पिता को देवताओं के समान समझती हूं। जहां तक मुझ से हो सकता है मैं उनकी सेवा करती हूं। मैं सास को पार्वती के बराबर समझती हूं और सरल हृदय, पूज्य पिता (ससुर) को महादेव के समान समझती हूं। आप मेरा विश्वास करें ॥२८॥

नारी येह स्वपतिपितरौ नाद्रणोति प्रगल्भा
निन्द्या भर्तर् भवति भुवने मङ्गलं नास्ति तस्याः ।
मातुः पुत्रं चपलवचनैरात्मसात्सा करोति
श्वश्रूर् दूरे भवति च वधूर्वेश्मनः स्वमिनी स्यात् ॥२९॥

हे पतिदेव, जो वाचाल नारी इस लोक में अपने पति के माता-पिता का आदर नहीं करती है उसकी सब जगह निन्दा होती है और उसका कभी कल्याण नहीं होता। सास ससुर का अनादर करने वाली ऐसी नारियां अपनी चापलूसी से माता के पुत्र को अपना बना लेती हैं। तब सास बेचारी दूर हो जाती है और बहू घर की मालकिन बन बैठती है ॥२९॥

हत्वा शत्रूनपगतभयां मातृभूमिं प्रकुर्या
दुष्टः शत्रुः सपदि भवता दण्डनीयः स एवम्।
कुर्याद् दृष्टिं न स हिमगिरौ भूय एवं कदाचि-
त्तृप्तां भूमिं स्वरिपुरुधिरेणाचिरात्त्वं विधेहि ॥३०॥

शत्रुओं को मारकर मातृभूमि के भय को दूर करो। उस शत्रु को जल्दी ऐसा दण्ड दो कि वह फिर कभी भी हिमालय पर दृष्टि न डाले। आप शीघ्र ही अपने शत्रु के खून से मातृभूमि को तृप्त करें ॥३०॥

एषा भूमिर्भवति तृषिता याचते शत्रुरक्तं
भाग्येनैव प्रियतम रिपुश्चागतः सन्निधेऽस्याः।
ध्यानं देयं सबलमनसा जीवितो नैष गच्छे-
त्तृप्तामेनां कुरु मम पते पाययित्वारिरक्तम् ॥३१॥

हे प्रिय, यह मातृभूमि प्यासी है और अपनी प्यास बुझाने के लिये शत्रु का खून मांगती है। शत्रु भाग्य से ही आज इसके

निकट आया है। आप अपने मन को बलवान् बना कर इस प्रकार ध्यान दें कि यह शत्रु जीता न जाने पाए। उसका खून पिला कर इस मातृभूमि को तृप्त करो ॥३१॥

दर्शं दर्शं तव भुजबलं कान्त शत्रुर्जघन्यः
कर्णस्पर्शं स भजति यथा साहसं दर्शयस्व ।
शस्त्राघातैं रिपुबलवधे तिष्ठ कौन्तेयवत्त्वं
जित्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥३२॥

हे पतिदेव, ऐसा हौंसला दिखाओ कि वह नीच शत्रु आप की भुजाओं की शक्ति को देख कर अपने कानों से हाथ लगाए कि मैं आगे के लिये कभी ऐसा नहीं करूंगा। तुम अपने शस्त्र के वारों से शत्रु की सेना का वध करने में अर्जुन के समान बल दिखाओ। शत्रुओं को मार कर जब तुम घर आओगे तो मैं आप का स्वागत करूंगी ॥३२॥

कौन्तेयोऽसौ रिपुबलहरो युद्धभूमावमुह्यद्
गीता तस्मै भुवनविदिता श्राविता माधवेन ।
एवं तस्मै दितिजरिपुणा स्मारितः क्षात्रधर्मो-
गाण्डीवं स्वं प्रियतम तदोत्तोलयामास सोऽभ्रे ॥३३॥

हे पतिदेव, शत्रुओं का संहार करने वाला अर्जुन जब युद्धभूमि में मोह में फंस गया तो श्रीकृष्ण भगवान् ने उसे संसार में प्रसिद्ध गीता का उपदेश दिया और इस प्रकार उन्होंने उसे क्षत्रिय धर्म की याद दिलाई। तब अर्जुन का मोह दूर हो गया और उसने अपने गांडीव धनुष को आकाश में उठाया ॥३३॥

एवं तेन प्रियतम तदोज्जासनं कौरवाणां
कृत्वा भूमेर्वृजिनतमसो नाशनं संव्यधायि ।
धृत्वा शस्त्रं कुरु विशसनं वैरिणां त्वं स्वशक्त्या
गीतां मत्वा रुधिरलिखितं पत्रमेतन्मदीयम् ॥३४॥

हे पतिदेव, इस प्रकार अर्जुन ने कौरवों का विनाश करके भूमि से पाप रूपी अन्धकार को मार भगाया। आप रुधिर से लिखे मेरे इस पत्र को ही गीता समझें और हाथ में शस्त्र ले कर अपने शत्रुओं का शीघ्र ही संहार करें ॥३४॥

नैवाहूतं दयित समरं स्वेच्छया त्वागतं भो-
आयातोऽयं भवति च रिपुर्निर्बलान् कान्त मत्वा ।
दृष्ट्वा शौर्यं वरद भवतो धारणाऽस्य मृषा स्यात्
पश्चात्तापे पतति स यथा तादृशं त्वं यतस्व ॥३५॥

हे पतिदेव, हमने युद्ध बुलाया नहीं है, यह तो हम पर थोपा गया है। यह शत्रु हमें दुर्बल मान कर ही आया है। हे प्रिय, आप की बहादुरी को देख कर जिस प्रकार इस की धारणा झूठी हो जाए और यह पश्चात्ताप में पड़ जाए, तुम ऐसा ही यत्न करो ॥३५॥

"बापू" गान्धेर्विविधकृतिभिर् मातृभूमिः स्वतन्त्रा
न स्यात् सेयं रिपुकरगता प्राणनाशेऽपि कान्त ।
प्राणान् वीरा अजुहवुरिमां बन्धनान्मोचयन्तः
स्मृत्वा तेषां सुशुभचरितं त्वं कुरुष्वात्मदानम् ॥३६॥

हे पतिदेव, बापू गान्धी के अनेक प्रयत्नों से जो यह मातृभूमि स्वतन्त्र हुई है, यह प्राणों का नाश होने पर भी शत्रु के हाथ में नहीं जानी चाहिये। इस मातृभूमि को परतंत्रता के बंधन से छुड़ाते हुए जिन लोगों ने अपने प्राणों का बलिदान किया है तुम उनके अच्छे चरित्र की याद करके अपना बलिदान कर दो ॥३६॥

यैर्यैर्वीरैः स्वजननभुवे जीवनं कान्त दत्तं
लोकन्ते तेऽखिलगातिविधिं साम्प्रतं स्वर्गलोकात् ।
भूयान्नास्या रिपुकरगता बल्लभैका वितस्तिर्
येन स्याम प्रिय नहि वयं पूर्वजानां कृतघ्नाः ॥३७॥

हे पतिदेव, जिन-जिन बहादुरों ने मातृभूमि के लिये अपने प्राणों का बलिदान किया है वह स्वर्ग लोक से तुम्हारी सारी गतिविधि को देख रहे हैं। इस मातृभूमि का एक चप्पा के बराबर भी भाग शत्रु के हाथ में नहीं जाना चाहिये। ऐसा न हो कि हम अपने बुजुर्गों के कृतघ्न कहलाएं ॥३७॥

नेतारो ये प्रिय समभवन् जन्मभूमेः सुवीराः
सङ्घर्षं ते समधिकतमं मातृभूम्या अकुर्वन् ।
स्वाधीन्यार्थं सकलमपि तैरर्पितं दानवीरैर्
वृत्तं तेषां भवति परमं प्रेरकं देशभक्तेः ॥३८॥

हे पतिदेव, जन्मभूमि के जो बड़े-बड़े बहादुर नेता हुए हैं उन्होंने मातृभूमि की मुक्ति के लिये भारी संघर्ष किया। उन

दानवीरों ने स्वाधीनता के लिये अपना सब कुछ अर्पण कर दिया। उनका चरित्र देशभक्ति की बड़ी प्रेरणा देता है ॥३८॥

लालः पालः प्रियतम तथा बालगङ्गाधराद्या--
अन्ये चापि प्रखरमतयः पुण्यराष्ट्रस्य वेदौ।
स्वीयान् प्राणान् मुदितमनसा चक्रिरे हव्यरूपाँ-
स्तेषां कीर्तिर्न भवतु पते दूषिता शत्रुभीत्या ॥३९॥

हे पतिदेव, लाला लाजपतराय, गोपालकृष्ण गोखले, बाल गंगाधर तिलक तथा और भी जो उच्च बुद्धि वाले नेता थे उन्होंने पवित्र राष्ट्र की वेदी में प्रसन्न मन से अपने प्राणों को होम दिया। उनकी कीर्ति कहीं शत्रु के भय से मलिन न हो जाये ॥३९॥

गोविन्दोऽसौ प्रियतम गुरुर्मातृभूम्यै जुहाव
स्वीयप्राणान् नहि निजदृशा पारतन्त्र्यं शशाक।
तस्य द्रष्टुं विमलचरितं गीयते भारते स्वे
मृत्वा लोके मरणरहितो राष्ट्रहेतौ हतो यः ॥४०॥

हे प्रिय, गुरु गोविन्दसिंह ने मातृभूमि के लिये अपने प्राणों का बलिदान कर दिया, परन्तु वह अपनी आंख से राष्ट्र की परतंत्रता को न देख सका। आज हमारे भारत में उसका शुभ चरित्र सब जगह गाया जाता है। वास्तव में राष्ट्र के लिये जो आदमी मरता है वह मर कर भी अमर होता है ॥४०॥

वैधव्यं चेद् दयित मिलति प्राणहान्या रणे ते
काचिच्चिन्ता न भवति तदा सङ्गमश्चावयोः स्यात् ।
स्वर्गे लोके किल सुकृतिनो वीक्षिता यत्र गत्वा
कार्यैः पुण्यैर्भुवनविदितैर्मृत्युबन्धाद्विमुक्ताः ॥४१॥

हे पतिदेव, यदि युद्ध में आपकी प्राणहानि से मैं विधवा भी हो जाऊं तो भी मुझे किसी बात की चिन्ता नहीं है। हमारा समागम उस स्वर्गलोक में होगा जहां पर संसार में प्रसिद्ध पुण्य कार्यों से लोग मौत के बन्धन से मुक्त देखे गए हैं ॥४१॥

शास्त्रेष्वेवं भवति लिखितं शत्रुभिर्युध्यमाना
मृत्वा वीरा निदधति पदं निश्चितं नाकलोके ।
स्वर्गस्याप्तिर्भवति मरणे जीवितानां यशः स्याद्
द्वाभ्यां लाभो भवति गुणितो भूतले सैनिकानाम् ॥४२॥

शास्त्रों में ऐसा लिखा हुआ है कि शत्रुओं से जूझता हुआ जो बहादुर युद्ध में मारा जाता है उसे निश्चित ही स्वर्ग मिलता है। सैनिक यदि युद्ध में मारा जाए तो उसे स्वर्ग मिलता है और यदि जीवित रहे तो यश की प्राप्ति होती है। इस प्रकार योधाओं को दोनों ओर से लाभ ही लाभ होता है ॥४२॥

मृत्योर्मुक्तिर्न नयनगता यत्र तत्र स्थितानां
श्रेष्ठे हेतौ यदि च मरणं जीवनात् सुन्दरं स्यात् ।
एवं मत्वा त्यज मम पते प्राणमोहं रणस्थो
जेता भूया अमरपदवीं वाऽऽप्नुहि त्वं विकल्पे ॥४३॥

हे पतिदेव, चाहे कोई कहीं भी चला जाये मौत से छुटकारा कहीं भी दिखाई नहीं देता है, इसलिये यदि अच्छे निमित्त के लिये मौत हो तो वह जीने से भली होती है। हे प्रिय, आप युद्ध में प्राणों का मोह छोड़ कर या तो विजेता बनो, या अमर पदवी को प्राप्त करो ॥४३॥

सौभाग्यं मे नहि रुचिकरं भीरुसिद्धस्य पत्युः
शूरस्याहं यदि च विधवा रोचते मह्यमेतत् ।
भावानेतान्निजमनसि भो धारयित्वा मदीयान्
कुर्याः कार्यं दयित समरे मातृभूमेर्हितार्थम् ॥४४॥

मुझे भीरु पति का सौभाग्य अच्छा नहीं लगता है। इसके विपरीत यदि मैं बहादुर की विधवा बनूं तो वह मुझे अधिक अच्छा लगता है। हे पतिदेव, आप अपने सरल हृदय में इन विचारों को धारण करके युद्ध में ऐसा काम करो जो मातृभूमि के लिये लाभदायक हो ॥४४॥

एत्यागारं दयित मधुरं चुम्बनं मे यदीष्टं
मा भैषीस्त्वं प्रियतम तदाऽऽलिङ्गनान्मृत्युनार्याः ।
मां वा मृत्युं चिनुहि मनसा वीरधर्माधिगामी
जित्वा शत्रुं गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥४५॥

हे पतिदेव सुनो, यदि घर आकर मेरा मधुर चुम्बन करना चाहते हो तो मौत रूपी नारी के आलिङ्गन से मत डरो। वीरों के धर्म पर चलने वाले आप मुझ या मौत में से एक को चुन लो। यदि आप शत्रु को जीत कर घर आओगे तो मैं तुम्हारा स्वागत करूंगी ॥४५॥

पुण्यं कार्यं भवति भुवने नाधिकं प्राणदानाद्
रक्षाहेतोः स्वजननभुवः कान्त गत्वा समीकम् ।
तेऽद्य स्तुत्यैः विशदचरितैः शौर्यधर्मावलिप्तैर्
मोक्षो मेऽपि प्रिय हि भविता योगिनामेत्य लोकम् ॥४६॥

हे पतिदेव, अपनी मातृभूमि की रक्षा के हेतु युद्ध में जाकर प्राण देने से बढ़कर और कोई बड़ा भला काम नहीं है। आप के शूरवीरता के धर्म से संबन्ध रखने वाले अच्छे चरित्र से योगियों के स्थान को प्राप्त करके मेरा भी मोक्ष हो जाएगा ॥४६॥

नाम स्थायि प्रिय च भुवने मानवस्य स्वकार्यैः
ख्यातं नूनं भवति सकले हेतुना नापरेण ।
एवं कार्यं सुभग भवता नाम जिह्वातले स्या-
ल्लोकानां नौ स्वजननभुवे भद्रकार्यैस्त्वदीयैः ॥४७॥

हे पतिदेव, संसार में मनुष्य का नाम अपने कार्यो से ही स्थायी तथा प्रसिद्ध होता है। आप ऐसा काम करें जिससे मातृभूमि के लिये किये गये आपके भले कामों से हमारा दोनों का नाम लोगों की जीभ पर रखा हुआ हो ।।४७।।

नाथ त्यागं विदधति च ये मातृभूमेर्निमित्तं
गाथास्तेषां सकलमनुजा आयुगं कीर्तयन्ति ।
एतत्सत्यं भवति दयितानश्वरो यो बुभूषुर्
दद्यात्प्राणान् विमलमनसा राष्ट्ररक्षानिमित्तम् ।।४८।।

हे पतिदेव, जो लोग मातृभूमि के लिए त्याग करते हैं, सब मनुष्य युग पर्यन्त उनकी कीर्ति को गाते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि जो आदमी अमर होना चाहता हो उसे चाहिए कि वह राष्ट्र की रक्षा के हेतु निर्मल मन से अपने प्राणों को दे दे ।।४८।।

दातुं भीतिं स्वरिपुहृदये सिंहवद् गर्ज भर्तर्
धारासारः प्रपतति यथा "गोलि"-वर्षां विधेहि ।
हत्वानेकान् गमय परतो मृत्युभीतांस्तथाऽन्यान्
यावत् सर्वे न यमपुरगास्त्वं विरामं न कुर्याः ।।४९।।

हे पतिदेव, शत्रु के मन में भय पैदा करने के लिये शेर के समान गर्जना करो, गोलियों की ऐसी वर्षा करो जैसे मुसलाधार वर्षा पड़ती है। बहुतों को मार दो और मौत से डरे हुए दूसरों को परे हटा दो। जब तक सभी यमराज के घर न पहुंच जाएं तब तक आप विश्राम न करें ।।४९।।

निद्रा तावद् भवति विरला बीजनाशो न याव-
च्छत्रोरास्ति प्रिय च भुवने पण्डितैरुक्तमेतत् ।
एतज्ज्ञात्वा कुरु विमथनं शत्रुसङ्घस्य भर्तर्
वारं वारं न भवतु यथा वेदना मस्तकस्य ॥५०॥

पंडित आदमियों ने संसार में यह बात ठीक कही है कि जब तक शत्रु का बीजनाश न हो जाय तब तक नींद नहीं आती है। यह जान कर हे पतिदेव, शत्रुओं का इस ढंग से संहार करो कि बार बार यह सिरदर्दी न हो ॥५०॥

उष्ट्रारोही भवति च यथा शासने तस्य शक्तः
कृत्वा दक्षः प्रियतम दृढां नासिकायां सुरज्जुम् ।
एवं शत्रुं कुरु निजवशे पृष्ठतस्ते स यायाद्
बद्ध्वा हस्तौ तव च चरणौ दीनदृष्ट्येक्षमाणः ॥५१॥

जैसे ऊंट का सवार उसकी नाक में एक मजबूत रस्सी डालकर उसको अपनी इच्छा अनुसार चलाता है उसी प्रकार तुम भी शत्रु को इस ढंग से वश में करो कि वह हाथ बांधकर और आप के चरणों को दीन दृष्टि से देखता हुआ आपके पीछे पीछे चले ॥५१॥

प्राणार्थी चेत् पतति पदयोः कान्त शत्रुर्जघन्यः
सोऽप्यानेयः दयित सदनं शृङ्खलाबद्धहस्तः ।
बोधिष्यामो विविधविधिभिर् वैरिभेदं हि तस्मा-
देवं भर्तर् भवति सुविधा दुर्हृदां नाशनाय ॥५२॥

हे पतिदेव, यदि नीच शत्रु प्राणों की चाहना से आपके पैरों में पड़ जाए तो भी उसे छोड़ना नहीं बल्कि शृङ्खला से बांध कर घरको ले आएं। हम उसके अनेक प्रकार से शत्रु के भेद को मालूम करेंगे। इस प्रकार शत्रुओं का नाश करने में बहुत सुविधा मिलती है ॥५२॥

याक्च्छत्रुर् दयित पुरतो विक्रमं दर्शय स्वं
नासौ यायात् कथमपि पते जीवितः सम्मुखात्ते ।
शौर्याख्यानं भवति विफलं लक्ष्यवेधेन हीनं
याते सर्पे नहि फलवती ताडिता तस्य रेखा ॥५३॥

हे पतिदेव, जब तक शत्रु सामने है, भरपूर अपना पराक्रम दिखाओ। वह तुम्हारे सामने से किसी भी प्रकार जिन्दा न जाने पाये। उस शूरवीरता के बखान करने से क्या लाभ जो लक्ष्य को ही न बींध सके। सांप के भाग जाने पर लकीर पीटने से कोई लाभ नहीं होता ॥५३॥

सर्पग्राही रदनरहितं संविधायाहिमुग्रं
पुंसामग्रे प्रतिदिनमथ स्वेच्छया नर्तयित्वा ।
अर्जत्यर्थं प्रियतम तथा ते वशे स्यात् स वैरी
क्रीडां दृष्ट्वा भवतु मनसो मातृभूमेर्विनोदः ॥५४॥

सपेरा भयानक सांप के दान्तों को निकाल कर उसे लोगों के आगे नचा कर प्रतिदिन पर्याप्त धन कमाता है। हे पतिदेव, तुम भी उसी प्रकार शत्रु को वश में करो जिससे उसकी खेल देखकर मातृभूमि का मनोरंजन हो ॥५४॥

भूयो भूयो यदि भवति रुक् क्षीणतां याति कायः
कार्या तस्याः कुशलमतिभिः शोभनैवं चिकित्सा ।
नैवाक्राम्येत् परिचितवपुः सा पुनर्भुक्तपूर्वं
शान्तिं लब्धुं सकलवयसे मूलनाशो विधेयः ॥५५॥

यदि कोई रोग बार बार हो तो उससे शरीर दुर्बल हो जाता है। बुद्धिमानों को चाहिये कि वह उस रोग की ऐसे ढंग से चिकित्सा करें कि फिर कभी वह रोग होने ही न पावे। सदा के लिये शान्ति प्राप्त करने के हेतु रोग को जड़ से ही उखाड़ देना चाहिये ॥५५॥

स्थित्वाऽस्माभिः सह च कुटिला मित्रवन्मित्रपङ्क्तौ
दुष्टा एते स्वयमपि पते पञ्चशीलं विरच्य ।
राष्ट्रेऽस्माकं चरणमधमं धारयित्वा विनाशं
कुर्वन्त्येते वचनविमुखा निर्दयं तस्य कान्त ॥५६॥

हे पतिदेव, यह कुटिल और दुष्ट शत्रु मित्र के समान मित्रों की पंक्ति में बैठे और स्वयं ही पंचशील का निर्माण किया। परन्तु अब हमारे राष्ट्र की पवित्र भूमि पर अपना नीच पैर रख कर यह निर्दयता से अपने वचन का भंग करते हुए उस पंचशील का विनाश कर रहें हैं ॥५६॥

वाचोभङ्गं गणयति न यः प्रत्ययो बुद्धिमद्भिः
कार्यस्तस्य प्रिय न हृदये धारणीयं वचो मे ।
भूयः सोऽयं कपटवञ्चनैर्वंचयेन्नैव यस्मा-
द्धासस्तेषां भवति बहुशो वञ्चिता ये भवन्ति ॥५७॥

जो मनुष्य अपने वचन का पालन नहीं करता है बुद्धिमान् को चाहिये कि वह उसका कभी विश्वास न करे। इस मेरी बात को आप अपने मन में धारण कर लें। वह फिर कपट भरी बातों से हमें ठगने का प्रयास न करे। जो लोग बार बार ठगे जाते हैं संसार में उनकी सब जगह हंसी होती है ॥५७॥

सिंहश्चापि प्रिय सकरुणं लोकते जालबद्धो
यस्मात्तस्मात् करुणहृदयो मोचयेत् कश्चिदेनम्।
किन्तून्मुक्तो भवति स यदा हन्ति हेतुं स्वमुक्तेर्
हस्ते शत्रुर्भवति पतितो माऽवहेलां कुरुष्व ॥५८॥

शेर जब जाल में फंसा हो तो वह दयाभरी दृष्टि से देखता है कि उसे कोई उस फन्दे से छुड़ा दे। किन्तु ज्यों ही वह फन्दे से छूटता है तो पहले छुड़ाने वाले को ही खाता है। हे पतिदेव, इस समय शत्रु आप के हाथ में आया है इसकी लापरवाही मत करो ॥५८॥

कामं किञ्चिद् भवतु बलवन् सन्ति नोपेक्षणीया
एते दण्ड्या विविधविधिभिर् घोरदण्डं प्रदाय।
नालोचन्तां कथमपि पुनः शैलराजं हिमाद्रिं
विश्वासो मे रिपुविमथने सन्ति दक्षा भवन्तः ॥५९॥

हे बहादुर पतिदेव, चाहे कुछ भी हो इनको लापरवाही से जाने नहीं देना चाहिये। इन्हें अनेक प्रकार से घोर दंड दे कर इस प्रकार दण्डित करो कि यह फिर कभी भी हमारे पर्वतराज हिमालय को न देखें। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप शत्रु के मारने में पूरी चतुराई रखते हैं ॥५९॥

दन्तह्रासो भवतु च यथा सर्पतुल्यस्य शत्रो-
रुत्साहोऽस्य प्रिय नहि भवेद्दंशने भारतस्य ।
दन्तैर्हीनं सकलशिशवः प्रस्तरैस्ताडयन्ति
व्यालो दीनो भवति विकलो "हा ! प्रियेऽहं कथं न" ॥६०॥

सांप के समान इस शत्रु के इस प्रकार दान्त तोड़े जाएं कि फि- दूसरी बार भारत को डंग मारने का इसका हौंसला ही न हो। तोड़े हुए दांत वाले सांप को सभी बच्चे कंकरों से पीटते हैं तो दीन सांप व्याकुल हो कर मन में सोचता है कि हाय ! मैं मर क्यों नहीं जाता हूं। (यही दशा इस की होनी चाहिये) ॥६०॥

जेता भूत्वा प्रियतम रिपोरेहि मानं त्वमेवं
कृत्स्ने देशे भवतु दयिताकीर्तनं ते सुकीर्तेः ।
गर्वं कुर्यामहमपि पते कस्य भार्या भवामि
स्तुत्यः सर्वैर् भवसि यदि भो स्वागतं ते करिष्ये ॥६१॥

हे पतिदेव, शत्रु को जीतकर तुम ऐसा मान प्राप्त करो कि सारे देश में तुम्हारी कीर्ति हो। मुझे भी इस बात का गर्व हो कि मैं किस की पत्नी हूं। यदि राष्ट्र के सब लोग आपकी प्रशंसा करेंगे तो मैं निश्चय ही आपका स्वागत करूंगी ॥६१॥

पत्युः कार्यैर्भवति ललना मूर्ध्नि सीमन्तिनीनां
गौर्याः पूजा भवतु दयिताकारि या नाफला सा ।
"वीरं याचे भगवति ! पतिं मातृभूमेर्धुरीणं
नैतच्छक्यं यदि तु गिरिजे रक्ष मां त्वं कुमारीम्" ॥६२॥

पति के महान् कार्यों से ही नारी अन्य स्त्रियों की सिर-ताज कहलाती है। हे पतिदेव, मैंने बड़े कष्ट के साथ जो पार्वती की पूजा की है वह निष्फल न जाए। भवानी से मैंने इस प्रकार प्रार्थना की थी कि हे पार्वती! मुझे ऐसा बहादुर पति दो जो मातृभूमि की धुरा का भार उठाने वाला हो। यदि ऐसा संभव न हो तो आप मुझे कुमारी ही रखें ॥६२॥

एवं कृत्वा बहुविधजपं निर्जलं यापयन्ती
गौर्याः प्रीत्यै प्रियतम तदाऽतीतसङ्ख्यान्यहानि ।
स्वप्ने प्रोक्तं दयित शिवया "तेऽहमस्मि प्रसन्ना
भर्तारं त्वं मनसि निहितं लप्स्यसे मङ्क्षु पुत्रि" ॥६३॥

हे पतिदेव, पार्वती को प्रसन्न करने के लिये इस प्रकार जप करके मैंने विना जलपान के ही अनगिनत दिनों को बिताया है। तब भवानी ने मुझे स्वप्न में कहा था कि हे पुत्री! मैं तुझ पर प्रसन्न हूं, तू शीघ्र ही अपने मनचाहे पति को प्राप्त करेगी ॥६३॥

गौर्याः सत्यं भवतु वचनं हे पते प्रार्थयेऽहं
शौर्यं श्रुत्वा तव च महिला एत्य मे वेश्म कान्त ।
ईर्ष्यापूर्णा ददतु तिलकं मस्तके मे सुरम्यं
"धन्या धन्या भवसि ललने वीरपत्नी त्वमेव" ॥६४॥

हे पतिदेव, मेरी यही प्रार्थना है कि पार्वती का वचन सच्चा हो जाय और आपकी बहादुरी को सुन कर स्त्रियां

ईर्ष्या से भरे हुए मन वाली मेरे मस्तक पर सुन्दर तिलक लगा कर कहें कि हे नारी! तूं धन्य है, वास्तव में राष्ट्र में बहादुर की पत्नी तो तूं ही है ।।६४।

प्रोक्ता नारी पतिसुचरितैः सर्वतः पूजनीया
सिद्धं चैतद् भवति सुचिराद् भ्रान्तिरास्ते न काचित् ।
एवं कार्यं दयित भवता मानमेयां यथाहं
तास्मिन्नष्टे क्षणमपि पते जीवितुं कामये न ।।६५।।

हे प्रिय, पति के अच्छे चरित्र से ही नारी सब ओर पूजनीय कहलाती है। यह बात प्राचीन काल से ही सिद्ध है, इस में कोई सन्देह की बात नहीं है । आप ऐसा काम करें जिससे मेरा सब ओर मान ही मान हो । उसके नष्ट होने पर मैं पल भर भी जीवित नहीं रहना चाहती हूं ।।६५।।

सीता पूर्वं तदनु च पते कीर्त्यते रावणारिः
कृष्णः पश्चाद् भवति पुरतो राधिकाया अभिख्या ।
गौरीमुक्त्वा सकलजनता शङ्करं भाषतेऽत्र
प्राचीनेऽपि प्रिय सुमहिला लेभिरे मानमेवम् ।।६६।।

हे पतिदेव, पहले सीता का नाम बोला जाता है और फिर राम का, राधा का नाम पहले और कृष्ण का पीछे से। इसी प्रकार सब लोग पहले गौरी का उच्चारण करते हैं और फिर शंकर का । जैसे—सीताराम, राधाकृष्ण, गौरीशंकर । हे प्रिय, इस प्रकार प्राचीन काल में भी नारियों ने बड़ा मान पाया है ।।६६।।

स्वीयं धर्मं जनकतनयाऽपालयद्रामपत्नी
प्रासादात् सा वनमुपगता कण्टकान् शोधयन्ती ।
तस्याः कीर्तिः सकलभुवने चन्द्रिकेवास्ति याता
नारीधर्मः परमगहनः पालितो लाभदः स्यात् ॥६७॥

जनक की पुत्री राम की भार्या सीता ने अपने पतिव्रत धर्म का पालन किया। वह महल को छोड़कर पति के मार्ग के कांटों को साफ करती हुई वन को चली गई। उसका यश सारे संसार में चान्दनी के समान फैल गया। नारी का धर्म बहुत गहरा है। यदि इसका पालन किया जाय तो यह बहुत ही लाभदायक होता है ॥६७॥

नाहं राधा न जनकसुता वल्लभा नापि विष्णोर्
विप्रस्यास्मि प्रिय तु तनया केवलं निर्धनस्य ।
आस्तां चित्तं तव चरणयोर् हे पते यावदायुः
प्रौढः कामो भवति मम भो जीवनस्यास्य कान्त ॥६८॥

हे पतिदेव, न मैं राधा हूं, न सीता हूं और न ही लक्ष्मी हूं; मैं तो एक निर्धन ब्राह्मण की पुत्री हूं। मेरा चित्त आयु-पर्यन्त आपके ही चरणों में लगा रहे यही मेरे जीवन की सब से बड़ी कामना है ॥६८॥

भक्तिर्मेऽस्ति प्रियतम परन्त्वाश्रिताद्य प्रतिज्ञां
मां न स्प्रष्टुं प्रभवसि गृहे शत्रुहन्ता न चेत्त्वम् ।
ध्यानं देयं मम सुवचने नान्यथेदं पते स्या--
च्छाणेऽघृष्टो न भवति मणिर्मौलियोग्यो नृपाणाम् ॥६९॥

हे पतिदेव, परन्तु मेरी भक्ति ने आज एक प्रतिज्ञा कर ली है कि यदि आप शत्रु का नाश न कर सकेंगे तो मेरा स्पर्श नहीं कर सकते। मेरे वचन पर ध्यान दो, यह बदलेगा नहीं। जो मणि शाण पर चढ़ा कर साफ न की गई हो वह राजाओं के मस्तक पर लगाने के योग्य नहीं होती है ॥६९॥

भर्तर् ज्ञातं भवति रिपवश्छद्मवेषं भजन्ते
धूर्ता एते सकलभुवने पूर्वमेव प्रसिद्धाः ।
कूटैस्तेषामतिपरिचितः सावधानो भवेस्त्वं
कच्चिन्न स्याद् विकटघटना कान्त जानासि सर्वम् ॥७०॥

हे पतिदेव, यह प्रतीत ही है कि शत्रु कपट का भेष धारण करते हैं। यह तो सारे संसार में पहले ही धूर्त नाम से प्रसिद्ध हैं। उनके छल-कपट से आप को बड़ी सावधानता से परिचित होना चाहिये। कहीं कोई अशुभ घटना न घटित हो जाय, आप सब बातों को जानते ही हैं ॥७०॥

चाराणां ताः सकलगतयः सावधानं निरीक्ष्याः
कूटं कृत्वा विविधवचनैर्वञ्चयन्ति प्रलोभैः ।
विश्वासो न प्रियतम मतः शोभनो युद्धकाले
संग्रामज्ञा विमलमतयः प्राक्तनाः प्राहुरेतत् ।७१॥

हे पतिदेव, गुप्तचरों की सारी चालों को सावधानी से देखना चाहिए। यह छल-कपट करके अनेक प्रकार के वचनों द्वारा प्रभोलन देकर ठगी करते हैं। युद्ध के समय में विश्वास करना तनिक भी अच्छा नहीं होता इस प्रकार कुशल बुद्धि वाले तथा संग्राम विद्या को जानने वाले प्राचीन लोग कहते आए हैं ॥७१॥

साधोर्वेषे भवति मिलित सैनिकेष्वेव कश्चिद्
भेदं हर्तुं प्रियतम ततो गुप्तरूपेण याति।
एवंरूपा भवतु न यथा वञ्चना त्वस्मदीया
तीव्रा दृष्टिर् दयित भवता सर्वतः पातनीया ॥७२॥

कोई भेद लेने के लिए साधु के भेष में ही सैनिकों में मिल जाता है और फिर भेद लेकर गुप्तरूप से चला जाता है। इस प्रकार हमारी कोई भी ठगी नहीं होनी चाहिये। हे पतिदेव, सब ओर से तेज नज़र रखें ॥७२॥

स्वीयो भेदो यदि रिपुगतः सङ्कटे स्याम मग्नाः
शत्रुं हन्तुं प्रियतम ततो नैव शक्ता भवेम।
तस्माद् भर्तर् भव सुनियतं जागरूकोऽरिसङ्घे
हत्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥७३॥

हे पतिदेव, यदि अपना कोई भेद शत्रु तक पहुंच गया तो हम संकट में पड़ सकते हैं और फिर उसे मारने में कभी समर्थ न होंगे। इस लिए हे पतिदेव, शत्रु के समूह में सदा सावधान हो कर रहें। शत्रुओं को मारकर तुम घर आओगे तो मैं आपका स्वागत करूँगी ॥७३॥

कुर्वन्त्येते कपटबहुलां शत्रवः कान्त मायां
धृष्टः कश्चिद् भवति पुरतः कामिनीरम्यरूपे।
अन्यश्चैवं धृतनटतनुर् जायते वा प्रत्यक्षं
नैवास्माभिः क्वचिदपि पते वञ्चितव्यो निजात्मा ॥७४॥

यह शत्रु कई प्रकार की माया को धारण करते हैं। कोई धूर्त नारी के रूप में सामने आता है तो कोई नटुए का रूप धारण करके सामने आकर खड़ा हो जाता है। हे पतिदेव, हमारी कहीं भी ठगी नहीं होनी चाहिए ॥७४॥

आयास्यन्ति प्रिय तत्र पुरो भारतीयेऽपि वेषे
येन त्वं स्या भ्रमपरिगतः सैनिकः स्वीय एव।
तेषां छद्म क्वचिदपि पते नैव हानिं विदध्या-
च्छस्त्रेणैषां क्षितितलगतान् मस्तकान् संविधेहि ॥७५॥

हे पतिदेव, वह भारतीयों के भेष में भी तुम्हारे सामने आएंगे जिससे तुम्हें भ्रम हो जाए कि यह कोई हमारा ही सैनिक है। उनका छल-कपट कहीं किसी प्रकार की हानि न करे। आप शस्त्र से इनके सिरों को काटकर धरती पर गिरा दें ॥७५॥

घस्रेऽतीते प्रिय च महिलारूपमास्थाय शत्रुर्
भ्राम्यन्नेको नयनविषयं ग्राममध्ये प्रयातः।
शङ्काऽस्माकं सपदि हृदये तस्य चेष्टासु जाता
बद्ध्वा चैनं निकटशिविरे नीतवन्तो वयं तम् ॥७६॥

पिछले दिन एक शत्रु नारी के रूप में घूमता हुआ ग्राम के बीच नजर आया। उसकी चेष्टाओं से हमारे हृदय में शंका पैदा हो गई। हम शीघ्र ही उसे बांध कर निकट की छावनी में ले गए ॥७६॥

भेदास्तत्र प्रिय च बहवोऽनावृतास्तेन गुप्ताः
सेनासङ्ख्याऽखिलगतिविधिः कर्णयोरागता नः ।
श्रुत्वा सर्वं जनरलवरो धन्यवादं चकार
ग्रामीणानां प्रियतम च ये साहसं चक्रुरेवम् ॥७७॥

उसने वहां पर शत्रु के बहुत सारे गुप्त भेद हमें बता दिये। सेना की संख्या तथा उनकी सब प्रकार की हलचल का हमें पता लग गया। छावनी का अधिकारी जनरल यह सब कुछ सुन कर बहुत प्रसन्न हुआ और ग्राम के उन सब लोगों का धन्यवाद किया जिन्होंने यह साहस दिखाया था ॥७७॥

छत्रैः सार्धं शृणु वरद ये सैनिकास्तस्य शत्रो-
रायान्त्यत्र प्रिय सुभुवि नः कर्तुमेवाव्यवस्थाम् ।
शीघ्रं हत्वाऽखिलकुचरितान् मस्तकान् वेश्मशृङ्गे
कृत्वा भर्तः सकलसुहृदो विस्मये पातयामः ॥७८॥

हे पतिदेव, शत्रु के जो सैनिक हमारी धरती पर गड़बड़ मचाने के लिये छातों के साथ उतर रहे हैं हम उन दुष्टों को शीघ्र ही मार कर उनके सिरों को काट कर घरों के ऊपर लटका रहे हैं और इस प्रकार सब बन्धुओं को आश्चर्य पैदा कर रहे हैं ॥७८॥

चिन्ताऽत्रत्या न भवतु पते संयुगे क्वापि तुभ्यं
सर्वं कार्यं प्रियतम वयं साधयामः सतर्कम् ।
सीमारक्षा भवति तव वै केवलं कृत्यरेखा
राष्ट्रस्यान्तः सकलमपि यन्निर्भरं स्त्रीषु तत्स्यात् ॥७९॥

हे पतिदेव, युद्धक्षेत्र में आपको यहां की कोई भी चिन्ता नहीं करनी चाहिये। हम यहां के सारे काम को बड़ी सावधानी से कर रही हैं। आपका काम केवल सीमा की रक्षा करना ही है। राष्ट्र के अन्दर का जो भी काम है उसे स्त्रियों के सहारे छोड़ देना चाहिये ॥७९॥

प्राचीनेऽपि प्रिय च बहवो राक्षसा एत्य मायां
चक्रुः कष्टं विविधविधिभिर्देवतानां प्रगाढम् ।
मारीचोऽसौ हरिणवपुषा वञ्चयामास रामं
केशी धृत्वा हय इव तनुं कृष्णमत्तुं दधाव ॥८०॥

प्राचीन काल में भी बहुत सारे राक्षस माया को धारण करके अनेक प्रकार से देवताओं को दुःख देते रहे हैं। मारीच नें हरिण के रूप में राम को ठगा था और केशी घोड़े का रूप धारण कर कृष्ण को खाने के लिये दौड़ा था ॥८०॥

बीजेशस्य प्रिय च सचिवो हन्तुमैच्छच्छिवाजिं
पत्रं सन्धेरफजलखलः प्राहिणोत् साहुपुत्रम् ।
धृत्वा हस्ते स निशितमसिं पापमादाय चित्ते
द्रष्टुं प्राप्तः परमकुटिलश्छद्मनैवं प्रहर्तुम् ॥८१॥

बीजापुर के सुलतान के वज़ीर अफजलखां ने साहूजी के पुत्र शिवाजी को छल से मारने के लिये सन्धि का पत्र भेजा। वह मन में पाप लिये हुए और हाथ में तेज तलवार लेकर कपट से प्रहार करने के लिये उसे देखने आया ॥८१॥

साहोः पुत्रः पटुतरशिवो नाऽभवन्मन्दबुद्धिः
सर्वामेतां कपटरचनां पूर्वमेव व्यजानात् ।
यावद् दुष्टो रिपुरफजलः कर्तुमैच्छत् प्रहारं
प्राज्ञो राजा निज''वघनखं'' तस्य कुक्षौ चकार ॥८२॥

परन्तु शिवाजी मूर्ख नहीं था, वह बहुत चतुर था उसने इस कपट की रचना को पहले ही जान लिया था। ज्यों ही शत्रु अफजलखां ने प्रहार करना चाहा तो बुद्धिमान् शिवाजी ने अपना वघनख उसके पेट में घुसेड़ दिया ॥८२॥

नारीभाग्ये न भवति पते युद्धभूमौ प्रयाणं
''टैङ्के'' स्थित्वा भयदवदना चण्डिकावद्धरिस्था ।
शत्रून् हत्वा गणनरहितान् भारमल्पं व्यधास्यं
सोऽयं खेदो मम तु सुभगार्धाङ्गिनी विग्रहे न ॥८३॥

हे पतिदेव, नारी के भाग्य में युद्धभूमि में जाना नहीं लिखा है। नहीं तो मैं शेर पर चढ़ी हुई चंडी के समान टैंक में बैठ कर, अनगिणत शत्रुओं को मार कर राष्ट्र के भार को हल्का करती। मुझे यही खेद है कि मैं युद्ध में आपकी अर्धाङ्गिनी नहीं हूं ॥८३॥

सर्वत्रैव प्रिय चरणयोश्चिह्नमाश्रित्य वर्ते
कार्यं किञ्चिन्न भवति पते यत्र नाहं सहाया ।
नैतज्ज्ञातं प्रियतम कथं बाधिका संयुगे स्त्री
पश्चात्तापो भवति बहु मेऽर्धाङ्गिनी नाहवे ते ॥८४॥

हे पतिदेव, मैं सब जगह आपके चरण-चिह्नों पर चलती हूं। कोई भी ऐसा काम नहीं जिस में मैं आपकी सहायक न हूं। मुझे यह मालूम नहीं कि स्त्री युद्ध में कैसे बाधक हो सकती है। मुझे इस बात का बहुत ही पश्चात्ताप है कि मैं युद्ध में आपकी सहायक नहीं हूं ॥८४॥

अर्धाङ्गिन्याः कठिनपदवी सार्थिका मे कथं स्या-
देषा चिन्ता तुदति हृदयं रात्रिकाले दिवा च ।
अन्यायोऽयं भवति बहुलो नीतवाँस्त्वं न भर्तः
स्नेहस्यायं न भवति विधिर्वञ्चिता शौर्यकार्यात् ॥८५॥

हे पतिदेव, मेरी अर्धाङ्गिनी की कठिन पदवी कैसे सार्थक होगी, यही चिन्ता रात-दिन मेरे हृदय को दुःखी कर रही है। आपने यह बहुत ही अन्याय किया कि आप मुझे साथ न ले गये। भला यह भी कोई प्यार दिखाने का तरीका है? आपने मुझे वीरता के काम से वंचित कर दिया ॥८५॥

व्याजेन त्वं समरमपि चेत् केनचिन्मामनेष्यः
शौर्यं श्रेष्ठं स्वजननभुवो योषितोऽदर्शयिष्यम् ।
सव्ये खड्गं दायित दधती खर्परं चापरस्मिन्
पायं पायं स्वरिपुरुधिरं तृप्तिमाप्ताऽभविष्यम् ॥८६॥

हे पतिदेव, यदि आप किसी बहाने से भी मुझे युद्धभूमि में ले जाते तो मैं अपनी मातृभूमि की नारी की श्रेष्ठ वीरता को दिखा देती। मैं दाएं हाथ में तलवार और बाएं हाथ में खप्पर लेकर शत्रु के खून को पी पी कर तृप्त हो जाती ॥८६॥

दग्धं कोपे नहि भवति यद् भारतस्याङ्गनायाः
किञ्चिल्लोके न नयनगतं नाथ जानन्ति सर्वे ।
सीतादृष्ट्या दशमुखपुरी स्वर्णलङ्का विनष्टा
दैत्यैः सर्वैः सह च कुटिलैः किं वदेयं तवाग्रे ॥८७॥

हे पतिदेव, इस बात को सभी जानते हैं कि भारत की नारी के कोप में सब कुछ ही भस्म हो जाता है। सीता की दृष्टि से रावण की सोने की लंका सारे कुटिल राक्षसों के साथ जल गई थी, मैं आप को क्या क्या बताऊं ॥८७॥

दैत्या देवैः प्रियतम यदा चक्रिरे घोरयुद्धं
साहाय्यार्थं दशरथनृपो देवतानां जगाम ।
कैकेयी सा पतिमनुगताऽऽलोकितुं तस्य शौर्यं
दर्शं दर्शं नृपभुजबलं मोदमाप्नोदमन्दम् ॥८८॥

हे पतिदेव, जब दैत्यों के साथ देवताओं का घोर युद्ध हुआ तो राजा दशरथ देवताओं की सहायता के लिये गया। तब कैकेयी भी उसकी वीरता को देखने के लिये अपने पति के साथ गई और वहां राजा की भुजाओं की शक्ति को देख देख कर उसे बड़ी प्रसन्नता हुई ॥८८॥

दैवाद् वाजी पतिरथयुतः संहतो बाणविद्धः
कष्टग्रस्तः सबलनृपतिः किङ्कृतिं न व्यजानात् ।
शीघ्रं गत्वा चतुररमणी स्कन्ध आदाय भारं
निर्विघ्नं सा दशरथरथं चालयामास सङ्ख्ये ॥८९॥

भाग्यवश पति दशरथ के घोड़े को तीर लगा और वह मर गया। तब राजा भयानक कष्ट में फंस गया और उसे कुछ पता नहीं लग रहा था कि वह क्या करे। तब कैकेयी ने शीघ्र ही आगे बढ़ कर जुए का भार कन्धे पर उठा लिया और दशरथ के रथ को युद्ध में विना विघ्न के चला दिया ॥८९॥

शौर्यं तस्या अनुपमतमं वाजिनश्चण्डरश्मेर्
दृष्ट्वाऽऽकाशे प्रियतम तदा तत्यजुः स्वां गतिं ते ।
रुद्धः सूर्यः सकलभुवनं विस्मयापन्नमासीद्
वृष्टिर्व्योम्नः शुभसुमनसामापतद् युद्धभूमौ ॥९०॥

उस कैकेयी की अद्भुत वीरता को देख कर सूर्य के घोड़ों ने आकाश में अपनी चाल को छोड़ दिया, सूर्य रुक गया और सारा संसार विस्मय में डूब गया। तब युद्धभूमि में आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी ॥९०॥

भर्ता तस्या दशरथनृपस्तां प्रसन्नो बभाषे
भार्ये ब्रूहि स्ववरयुगलं ते प्रसन्नो ददामि ।
"राजन्! न्यासो भवतु वरयोर्मे द्वयोर्हस्तयोस्त
याचिष्येऽहं मम वरयुगं कामना मे यदा स्यात्" ॥९१॥

तब उसका पति राजा दशरथ प्रसन्न हो कर उसको बोला। हे भार्ये! तू कोई दो वर मांग ले, मैं तुझे प्रसन्न

होकर देता हूं। तब कैकेयी बोली कि हे राजन्! मेरे दो वर आपके हाथ में इमानत के रूप में रहें, जब मेरी इच्छा होगी, मैं मांग लूंगी ॥९१॥

न त्वं भूत्वा दशरथनृपो नीतवान् संयुगं मां
शौर्यं यन्मे मनसि निहितं व्यक्ततां नागतं तत्।
इच्छा त्वत्तो दयित यदि मे जागृयाद् भो वराणां
याचिष्येऽहं कथमिव पते दर्शितं नैव किञ्चित् ॥९२॥

आप दशरथ बनकर मुझे युद्ध को न ले गये। मेरे मनमें जो वीरता के भाव थे वह प्रकट न हो सके। हे पतिदेव, यदि मेरी इच्छा आप से कोई वर मांगने की हो तो मैं कैसे मांगूंगी, मैंने तो कुछ भी करके नहीं दिखाया ॥९२॥

चित्ते कार्यं भवति निहितं नैव यायात् प्रकाशं
भारस्तस्य प्रियतम तदा वर्धते नित्यमेव।
नाहं याता दयित समरं दर्शितुं स्वीयशौर्यं
सीता भूत्वा कथमिव मया नाग्रहोऽकारि तेऽग्रे ॥९३॥

मन में जो काम सोचा हुआ हो यदि उसको पूरा न किया जाए तो उसका भार दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जाता है। हे पतिदेव, मैं अपनी वीरता दिखाने के लिये युद्धभूमि में नहीं गई। मुझे पश्चात्ताप है कि मैंने सीता के समान आप के साथ जाने का हठ क्यों नहीं किया ॥९३॥

पश्चात्तापस्तुदति हृदयं वेदना मस्तके मे
भारं शीर्षे प्रिय समधिकं चोष्ट्रभाराद्वैमि ।
नैनं वोढुं सुचिरमयि मे मानसं सक्षमं स्याद्
देह्यादेशं सपदि समरे वैरिणां मे दिदृक्षा ॥९४॥

पश्चात्ताप मेरे हृदय को कुरेद रहा है और मस्तक में पीड़ा है। मैं इस भार को अपने सिर पर ऊंट के भार से भी भारी समझ रही हूं। हे पतिदेव, मेरा मन इस भार को अधिक देर उठाने में समर्थ न हो सकेगा। मुझे आज्ञा करो, मैं युद्ध में अपने शत्रु को शीघ्र ही देखना चाहती हूं ॥९४॥

कान्ताऽस्थास्यं यदि च भवता युद्धक्षेत्रे सहाऽहं
तत्राद्रक्ष्यं सुदृढभुजयोः पाटवं तेऽरिहन्तुः ।
एषोऽभावः प्रिय तुदति मे लोचनेऽश्मेव चित्तं
नायं न्यायो भवति समरे कामिनीनां निषेधः ॥९५॥

हे पतिदेव, यदि मैं युद्धक्षेत्र में आपके साथ खड़ी होती तो शत्रुओं को मारने वाले आप की भुजाओं की चातुरी को देख लेती। यह अभाव मुझे इस प्रकार तंग कर रहा है जैसे नेत्र में पड़ा कंकर तंग करता है। युद्ध में स्त्रियों के प्रवेश पर जो रोक लगा रखी है यह कोई न्याय नहीं है ॥९५॥

सङ्ख्ये नारी कथमिव पते नार्हति ब्रूहि गन्तुं
दोषस्तत्र क्वचिदपि न मे लक्ष्यते कान्त कश्चित् ।
स्त्रीणामेतद् भवति परमं वञ्चनं पुंस्कृतं भो
नैते तस्या बलमनुपमं बोद्धुमद्यापि शक्ताः ॥९६॥

भला नारी युद्ध में क्यों नहीं जा सकती? मुझे तो इसमें कोई दोष नहीं दिखाई देता। यह पुरुषों ने स्त्री जाति से बड़ी भारी ठगी की हुई है। यह आज भी उसकी शक्ति को समझ नहीं सके हैं ॥९६॥

कच्चित् पुंसां भवतु लघुता चक्षुषोर्नैव नार्या
एतेनैव प्रिय च महिला युद्धभूमेर्निषिद्धाः ।
स्वार्थस्तेषां भवति निहितः कान्त तस्मिन्निषेधे
बाह्वोः शक्तिर्भवति महती योषितां मानवेभ्यः ॥९७॥

कहीं पुरुषों के छोटेपन का नारी को पता न लग जाय इस भाव से हो नारियों को युद्धभूमि में नहीं जाने दिया जाता। उस रोक में पुरुषों का अपना ही स्वार्थ दिखाई देता है। स्त्रियों को भुजाओं की शक्ति पुरुषों से भी बढ़ कर है ॥९७॥

जन्मादाय प्रवरपुरुषाः कामिनीभ्यः स्वयं ते
मन्यन्ते भो प्रियतम ततः स्वात्मनो दुर्बलास्ताः ।
भूमेः शक्तिर्भवति महती भूमिजानां पते वा
न्यायं चैनं स्वयमपि भवान् निश्चितं कर्तुमर्हः ॥९८॥

यह पुरुष स्त्रियों से जन्म पाकर बाद में उनको दुर्बल मानने लग जाते हैं। क्या भूमि की शक्ति बड़ी है या भूमि से पैदा होने वालों की शक्ति बड़ी है। हे पतिदेव, आप इस बात का अपने आप ही न्याय कर सकते हैं ॥९८॥

धूमादग्निर्भवति जनितो मन्यते नैनमूनं
स्वस्माद् भर्तः प्रकृतिनियमाः कीदृशाः सन्ति रम्याः।
शीर्षे स्वीये वहति पितरं सर्वदा मानहेतोर्
वह्निः पश्चाच्चलति पुरतो गर्विता याति सोऽपि ॥९९॥

आग धूंएं से पैदा होती है तो वह धूंएं को अपने से कमजोर नहीं समझती है। प्रकृति के यह नियम कितने सुन्दर हैं। आग अपने जन्मदाता उस धूम को मान के लिये सदा इस प्रकार सिर पर रखती है कि आग पीछे पीछे चलती है और धुआं गौरव के साथ आगे आगे चलता है ॥९९॥

वारंवारं बहुलपुरुषैर्भाषितः पण्डितश्चेन्-
"मूर्खो मूर्खः" प्रियतम ततो मूढतामेव याति।
दत्तं नार्यै सकलजगता फल्गु नामाबलाया-
स्तस्माज्जातं सबलमहिलामानसं दुर्बलं नु ॥१००॥

यदि बहुत सारे भले लोग किसी पंडित को भी बार बार मूर्ख कहें तो वह मूर्ख ही बन जाता है। संसार ने नारी को अबला की तुच्छ संज्ञा दे दी इस लिये स्त्री का बलवान् मन भी दुर्बल बन गया ॥१००॥

भूयो भूयो भवति गदितः पाठकैः प्राज्ञशिष्यः
शब्दार्थं न प्रभवसि वटो मेधया ज्ञातुमीषत् ।
बुद्धिस्तस्य प्रियतम तदा भ्रान्ततां किं न गच्छे-
त्तेषामेवं वचनविकलो रोदिति स्वीयभाग्यम् ॥१०१॥

यदि अध्यापक लोग किसी बुद्धिमान् शिष्य को बार बार कहें कि अरे ! तू तो शब्दार्थ को तनिक भी नहीं समझ सकता तो उसकी बुद्धि भला भ्रान्त क्यों न हो ? इस प्रकार उनके वचनों से व्याकुल हो कर वह अपने भाग्य को रोता रहता है ॥१०१॥

क्रूरा श्वश्रूर् वदति निपुणां स्वां वधूं 'भो जडा त्वं'
घस्रे घस्रे पुनरपि पुनः क्षुद्रकार्येषु कान्त ।
दीनापाङ्गा भवति विकला कर्मणि व्यस्तहस्ता
कार्यं तस्याः सुगममपि तद् भ्रष्टतामेव याति ॥१०२॥

क्रूर स्वभाव की सास अपनी निपुण बहू को प्रतिदिन छोटे छोटे कामों में भी जब बार बार मूर्ख कहती है तो उसके नेत्रों से दीनता टपकती है और काम में लगी हुई वह घबरा जाती है। उस बेचारी का आसान से आसान काम भी बिगड़ जाता है ॥१०२॥

इति प्रथमः सर्गः समाप्तः ।

अथ द्वितीयः सर्गः

लक्ष्मीबाई रिपुविमथने सिद्धहस्ता प्रसिद्धा
पादं चक्रे प्रथममिह सा मुक्तये मातृभूमेः ।
दृष्ट्वा तस्या अनुपमतमानाङ्गलाः खड्गपातान्
धावन्तोऽग्रे चकितनयनाः पृष्ठतस्तामपश्यन् ॥१॥

लक्ष्मीबाई शत्रुओं का संहार करने में कितनी चतुर थी। सब से पहले उस ने ही मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिये बीड़ा उठाया था। उसके अनुपम तलवार के बारों को देख कर चकित नेत्रों वाले अंग्रेज आगे आगे दौड़ते थे और भय से पीछे से उसको देखते थे ॥१॥

अश्वारूढा प्रियतम यदा रक्तमाधाय वस्त्रं
लक्ष्मीबाई विपुलबलिनी शत्रुसङ्घं विवेश ।
वायोर्गत्या निजरिपुदलं मर्दयन्ती बभासे
विद्युद्रेखा गगनतलगा भेदयन्तीव मेघान् ॥२॥

भारी बल को धारण करने वाली लक्ष्मीबाई लाल वस्त्र पहन कर और घोड़े पर चढ़कर शत्रुदल में घुस गई। वह वायु के समान तेज गति से शत्रुओं को मसलती हुई इस प्रकार

शोभा दे रही थी जैसे आकाश में बिजली बादलों को चीरती हुई शोभा देती है ॥२॥

पाण्योस्तस्या असिसुयुगलं दन्तमध्ये खलीनः
सव्ये सव्यं प्रियतम रिपुं वामभागे च वामम् ।
रक्तापाङ्गा प्रधनचतुरा मृत्युना मेलयन्ती
साक्षाच्चण्डी विकटसमरे लोकिता सर्वलोकैः ॥३॥

उसके दोनों हाथों में तलवारें थीं और घोड़े की लगाम दाँतों में थी। वह दाएं से दाएं शत्रु को और बाएं से बाएं शत्रु को मौत के घट उतार रही थी। युद्ध-चतुर, लाल नेत्रों वाली उस रानी को उस भयानक युद्ध में लोगों ने साक्षात् चंडी के समान देखा था ॥३॥

केचिन्मूर्खाः प्रियतम नृपा आश्रिताः शत्रुपक्षं
स्वीये पादे स्वयमपि जडाः शृङ्खलां ते बबन्धुः ।
तत्र ह्रासो यदि मम पते लक्षितो नैकताया
नायं देशः कथमपि तदा खण्डितोऽभूद् द्विभागे ॥४॥

तब कुछ मूर्ख राजा लोग शत्रु के पक्ष में हो गए। उन मूर्खों ने अपने पैरों में आप ही बेड़ियां डाल लीं। हे पतिदेव, यदि उस समय एकता न टूटती तो यह देश दो भागों में खंडित न होता ॥४॥

तस्याः सैन्ये सकलमनुजा हिन्दवो मुस्लिमा वा
सिक्खा एवं प्रिय युयुधिरे मुक्तये मातृभूमेः ।
धर्मं श्रित्वा क्वचिदपि कलिर्भारते नैव दृष्टो
बीजः सोऽयं कपटहृदयैराङ्गलैरुप्त एव ॥५॥

उस की सेना में हिन्दु, मुसलमान और सिक्ख सभी धर्मों के लोग मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिये लड़े थे। उस समय धर्म के आधार पर भारत में कहीं भी झगड़ा नहीं होता था। इस झगड़े का बीज तो कपटी अंग्रेजों ने ही भारत में बोया था ॥५॥

अध्यक्षत्वं प्रियतम तदा गर्विणो भूपलोका-
स्तस्या नार्याः पतितमतयश्चेतसा नासहन्त ।
"एषा नारी सबलपुरुषानीहते कर्तुमस्मान्
नीचैरेवं भवति परमा मानहानिर्नराणाम्" ॥६॥

तब कुछ घंमडी तथा मूर्ख राजाओं ने मन से लक्ष्मीबाई के नेतृत्व को सहन नहीं किया। वह सोचने लगे कि यह नारी हम बलवान् पुरुषों को नीचा दिखाना चाहती है, इस प्रकार पुरुषों की बड़ी मानहानि होगी ॥६॥

सर्वे चेत्ते सरलमनसैवान्वयास्यन् स्त्रियं तां
स्वातन्त्र्यं नः प्रियतम तदा प्राप्तमेवाभविष्यत् ।
कारागारं मनुजविबुधो मोहनो नागमिष्य-
त्तेषां कार्यैरधमसदृशैर्लम्बिता दासताऽभूत् ॥७॥

अगर वह सब राजा लोग सरल मन से उस नारी के पीछे चलते तो उन्हीं दिनों में स्वतंत्रता प्राप्त हो गई होती। हे पतिदेव, तब मनुष्य रूपी देवता मोहनदास गान्धी को कैद में न जाना पड़ता। उन राजाओं के नीच कामों से हमारी दासता सौ वर्ष और लम्बी हो गई ॥७॥

बुद्धिस्तेषां परमकृपणा योषितं ये समाहुर्
दीनां हीनां भयविचलितां साधनं वासनायाः ।
तस्याः कोपो निखिलभुवनं भस्मसात्कर्तुमर्हः
शक्तेः साक्षाद् भवति रमणी सत्यमेवावतारः ॥८॥

जो लोग नारी को दीन-हीन, डरपोक और वासना का साधन कहते हैं वह मूर्ख हैं। उसका क्रोध सारे संसार को जला सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि नारी साक्षात् शक्ति की अवतार होती है ॥८॥

शत्रुर्ज्ञेयोऽपरिमितबलो बोधनीयो न फल्गुर्
हन्तुं भर्तर् हरिरिव बलं धारणीयं त्वयाऽद्य ।
सिंहः शौर्यं जनयति सदा कुञ्जरे जम्बुके नो
कालस्त्याज्यः प्रिय न भवता वीरतादर्शनस्य ॥९॥

यह शत्रु बलवान् है, इसे तुच्छ मत समझिये। इसे मारने के लिये शेर के समान शक्ति दिखानी होगी। शेर अपनी वीरता को हाथी पर ही प्रकट करता है गीदड़ पर नहीं। हे पतिदेव, आज वीरता दिखाने का समय आ गया है, इसे जाने न दीजिये ॥९॥

वायुर्वृक्षानधिकरभसा भूमिसुप्तान् विधत्ते
नासौ किन्तु प्रियतम तृणे कोपमेवं प्रयाति ।
भर्तस्तेऽद्य प्रखरबलिनः कर्तुमीहे परीक्षां
त्वं चेदस्यां भवसि सफलो वीरपत्नी तदाऽहम् ॥१०॥

वायु अपने प्रबल वेग से पेड़ों को धरती पर सुला देता है परन्तु वह तिनके पर इस प्रकार क्रोध नहीं दिखाता है। हे पतिदेव, आपकी शक्तिशालिता की मैं आज परीक्षा करना चाहती हूं। यदि आप इसमें सफल हो गये तो मैं अपने आप को वीरपत्नी समझूंगी ॥१०॥

शीताङ्गारे भवति चरणं दुष्करं नेह धर्तुं
किन्त्वेतस्मिन् धरति मनुजो लोहिते यः पदं स्वम् ।
तस्यैवास्ति प्रिय तु गणना पुंसु वीरेषु लोके
नृत्यं भर्तः कुरु सुरुचिरं वैरिवैश्वानरे त्वम् ॥११॥

बुझे ठंडे अंगारे पर पैर रखना कठिन नहीं होता है। परन्तु जो मनुष्य लाल गर्म (जलते) अंगारे पर पैर रखता है, संसार में वही शूरवीर गिना जाता है। हे पतिदेव, शत्रु रूपी आग में सुन्दर नाच करो ॥११॥

क्षुद्रं स्रोतो भवति सुकरं बालकैः कान्त तर्तुं
मर्त्यस्तीर्त्वा विपुलसरितं केवलं मानमेति ।
पारे कृत्वा प्रिय सुमहतीं वैरिणां वाहिनीं भो-
एहि क्षिप्रं सुभग सदनं त्वामहं सत्करिष्ये ॥१२॥

छोटे झरने को तो बालक भी आसानी से तर सकते हैं परन्तु जो मनुष्य विशाल नदी को तैर कर पार करता है वही मान का अधिकारी होता है। हे पतिदेव, शत्रुओं की लम्बी सेना को पार करके जल्दी घर आओ। मैं आपका स्वागत करूंगी ॥१२॥

लङ्कां गन्तुं पवनतनयः सागरं सन्ततार
लोके ख्यातो प्रिय समभवत् पूज्यते देववत् सः ।
पारावारो भवति पुरतो वैरिणां तेऽद्य भर्त-
स्तीर्त्वा शीघ्रं भव सुविदितो भारते पुण्यराष्ट्रे ॥१३॥

हनुमान् ने लंका जाने के लिये समुद्र को तैर कर पार किया था तो वह सारे संसार में प्रसिद्ध हो गया और आज उसकी देवता के समान पूजा की जाती है। हे पतिदेव, आज तेरे सामने शत्रुओं का समुद्र उमड़ रहा है। तुम इसे तर कर अपने पुण्य राष्ट्र भारत में प्रसिद्धि को प्राप्त करो ॥१३॥

स्मृत्वा शौर्यं कठिनभुजयोर्वैरिणां ते प्रहर्तु-
र्जायन्ते मे दयित बहुलाः कल्पना मानसेऽद्य ।
दर्शं दर्शं विपुलनयने क्रोधरक्ते समीके
रक्तस्नाताः कथमिव पते शत्रवः संपतन्ति ॥१४॥

हे पतिदेव, शत्रुओं पर प्रहार करने वाले आप की भुजाओं की शक्ति का स्मरण करके मेरे मन में कई प्रकार की कल्पनाएं पैदा हो रही हैं। युद्धभूमि में आप के क्रोध से लाल विशाल

नेत्रों को देख कर खून से लथपथ शत्रु किस प्रकार गिर रहे होंगे ॥१४॥

क्रोधग्रस्तं भवति तव भो भीतिदं कान्त रूपं
तच्च द्रष्टुं प्रिय न सुकरं वैरिणामन्तकारि ।
तेजः सोढुं परमकठिनं नेत्रयोः क्रुद्धयोस्ते
सर्वं भर्तर् मम हि सदने साधकं कल्पनानाम् ॥१५॥

जब आप क्रोध में होते हैं तो वैरियों का नाश करने वाला आपका रूप बहुत भयानक होता है, उसे देखने से भी भय लगता है। क्रोध से भरे आपके नेत्रों के तेज को सहन करना बहुत कठिन होता है। हे पतिदेव, आप की यह सब बातें घर पर मेरी कल्पनाओं को जन्म दे रही हैं ॥१५॥

भूमेरस्याः कुटिलमनसो वैरिणो द्रावयित्वा
संसारे त्वं तुहिनधवलामर्जयित्वा स्वकीर्तिम् ।
आशाः सर्वा दयित सफलाः संविधायाऽऽहवे भो-
वेश्मायाहि द्रुततरमथ स्वागतं ते करिष्ये ॥१६॥

हे पतिदेव, अपनी इस मातृभूमि से कुटिल मन वाले इन शत्रुओं को दूर भगाकर, संसार में अपने लिये कीर्ति पैदा करके और युद्ध भूमि में मेरी सब आशाओं को पूरा कर के तुम शीघ्र घर चले आओ। मैं आपका स्वागत करूंगी ॥१६॥

बाह्वोर्वीर्यं प्रियतम रिपुस्ते न सोढुं समर्थो
जानाम्येतत् कपटकुशलो वामनो बुद्धिहीनः ।
खद्योताभा भवति विकला भास्करस्य प्रकाशे
भारं हृत्वा स्वजननभुवः शीघ्रमायाहि गेहम् ॥१७॥

हे पतिदेव, मैं यह जानती हूं कि वह बौना, बुद्धिहीन, कुटिल शत्रु आपकी भुजाओं की शक्ति को सहन नहीं कर सकेगा । सूर्य के प्रकाश में जुगनु की चमक फीकी पड़ जाती है । आप मातृभूमि के भार को हल्का कर के शीघ्र ही घर आ जाएं ॥१७॥

वीराः पङ्क्तौ दयित भयदा वैरिणां येऽग्रिमायां
तेषां प्रेयस्त्वमपि बहुशः साहसं वर्धयस्व ।
शीर्षण्यः सन् गमय सकलानग्रतो जेतुकामान्
नेता श्रेष्ठो भवति समरे सिद्धिरन्वेति पादौ ॥१८॥

हे पतिदेव, अगली पंक्ति में शत्रुओं के लिए भयंकर जो बहादुर सैनिक हैं तुम स्वयं उनके साहस को बढ़ाओ । आप आगे हो कर विजय की इच्छा वाले उन सब को ले चलो । यदि युद्ध में नेता अच्छा हो तो सिद्धि पैरों को चूमती है ॥१८॥

नेता पश्चाच्चलति युधि चेत् किं करिष्यन्ति वीरा
अग्रे गत्वा प्रियतम कथं साहसं दर्शयेयुः ।
तस्माद्धुर्यो भव मम पते वैरिणस्त्वं निहन्तुं
संपूर्यैतद् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥१९॥

यदि युद्ध में नेता पीछे रहे तो बहादुर सैनिक क्या करेंगे, वह आगे जा कर साहस कैसे दिखाएं। इसलिये हे पतिदेव, आप शत्रुओं को मारने के लिए सब से आगे रहो। मेरी बात को पूरा कर के जब आप घर आएंगे तो मैं आप का स्वागत करूंगी ॥१९॥

पूर्वं चापि प्रिय च समरो यत्र यत्रास्ति जातः
सेनाधीशाः सकलपुरतो जग्मुरुत्साहवन्तः ।
भीष्मो द्रोणः प्रियतम तथा पाण्डवाः वीरकर्णो-
मार्गं तेषामनुसर शुभं निश्चितां सिद्धिमाप्तुम् ॥२०॥

पहले समय में भी जहां जहां युद्ध हुआ है, उत्साह वाले सेनानायक सब के आगे रहे हैं। भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य, वीर कर्ण तथा पांडव सब ने ऐसा ही किया था। हे प्रियतम, आप भी उनके दिखाए मार्ग पर चलें। तब निश्चय ही आप को कार्य-सिद्धि प्राप्त होगी ॥२०॥

नेता भीरुर्भवति यदि भो निर्बलाः सैनिकाः स्यु-
स्तेषां शौर्यं प्रियतम मतं नायकस्यानुसारम् ।
आदर्शं स्वं धर च पुरतस्त्वं पते तत्समक्षं
हत्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥२१॥

यदि नेता डरपोक हो तो सैनिकों का उत्साह भी गिर जाता है। उनकी वीरता नेता पर ही आधारित होती है। इसलिए हे पतिदेव, आप उनके सामने अपना आदर्श रखो।

शत्रुओं को मार कर जब आप घर आओगे तो मैं आपका स्वागत करूंगी ॥२१॥

आनेतव्यं प्रियतम रिपोः शीर्षमेकस्य गेहं
वेणावुच्चे चिकुरसहितं लम्बमानं करिष्ये ।
आयास्यन्ति प्रिय न विहगाः क्षेत्रमेतेन भीता
एवं मुक्तिः सुभग भविता वादनाद् डिण्डिमस्य ॥२२॥

हे पतिदेव, एक शत्रु का सिर अपने साथ घर अवश्य ले आइये । मैं उसे केशों सहित ऊंचे बांस पर लटकाऊंगी । इस से डर कर पक्षी हमारे खेत में नहीं आया करेंगे । इस प्रकार मुझे ढोल बजाने से भी छुटकारा मिल जाएगा ॥२२॥

नीता नास्मि प्रियतम युधं कुत्र शत्रुं समीक्षे
जीवन्तो ये न नयनगता द्रष्टुमीहे गतासून् ।
मुण्डैस्तेषां निजगलकृते लम्बमालां च कृत्वा
गेहे गेहे सकलपुरतो वीरतां दर्शयिष्ये ॥२३॥

हे पतिदेव, आप मुझे युद्धभूमि को न ले गये, अब मैं शत्रु को कहां देखूं । मैं उन्हें जीता न देख सकी तो मुझे मरे हुए ही दिखा दो । मैं उनके सिरों की अपने गल के लिये लम्बी माला बना कर, घर घर में जा कर आपकी बहादुरी दिखाऊंगी ॥२३॥

यावन्तो मे शिरसि सुकचास्तावतः कान्त शत्रून्
हत्वाऽऽकाङ्क्षां कुरु फलयुतां विक्रमं दर्शयित्वा ।
नैवासाध्यं किमपि भवते वेद्मि शौर्यं त्वदीयं
कृत्वा पूर्णं मम सुलिखितं बल्लभायाहि गेहम् ॥२४॥

हे पतिदेव, जितने मेरे सिर के केश हैं, आप पराक्रम दिखा कर उतने ही शत्रुओं को मार कर मेरी इच्छा को सफल बनाएं । आप के लिए कोई भी काम करना कठिन नहीं है । मेरे लिखे को पूरा करके आप शीघ्र ही घर आ जाएं ॥२४॥

नार्या यस्याः शिरसि दयिताऽसङ्ख्ययूका भवन्ति
ह्रासस्तासां प्रिय न सुकरः केवलं स्यान्नखाभ्याम् ।
किञ्चिद् भर्तर् विषसुमिलितं त्वौषधं तत्र देयं
तेषामेवं कुरु विशसनं स्वीयशस्त्रैर्विषाक्तैः ॥२५॥

हे पतिदेव, जब किसी नारी के शिर में अनगिणत जूंएं पड़ जाती हैं तो उनको केवल नाखूनों से नहीं मारा जा सकता है। वहां तो कोई न कोई जहरीली दवाई ही डालनी पड़ती है । इसी प्रकार आप भी अपने विषैले शस्त्रों से उन शत्रुओं का नाश करें ॥२५॥

एषां सङ्ख्या भवति विपुला संसृतौ याऽद्वितीया
तस्या गर्वः प्रियतम मतो वैरिणां वामनानाम् ।
एतां शीघ्रं कुरु परिमितां मस्तकान् कर्तयित्वा
सृष्टिर्यस्माद् भवतु सुखिनी ते प्रतापेन सर्वा ॥२६॥

इनकी संख्या बहुत बड़ी है, संसार में इतनी वड़ी संख्या और किसी देश की नहीं है। इन बौने शत्रुओं को इस संख्या का ही घमण्ड है। हे पतिदेव, इनके मस्तकों को काट कर इनकी संख्या को कम करो। जिससे आपके प्रताप से सारा संसार सुखी हो ॥२६॥

स्वल्पा तेषां भवतु गणना काकवच्चीनदेशे
गर्वो यस्माद् गलतु तुहिनेऽसङ्ख्यसङ्ख्यानिबद्धः।
गच्छन्त्येते शलभसदृशा धर्षितुं चान्यदेशान्
साधूपायं कुरु मम पते न्यूनतां ते यथेयुः ॥२७॥

जैसे चीन देश में कौए बहुत कम पाए जाते हैं इसी प्रकार इनकी संख्या भी कम हो जाए जिस से इनका अधिक संख्या का घमंड बर्फ में गल जाए। यह टिड्डीदल के समान दूसरे देशों पर आक्रमण करने के लिये चल पड़ते हैं। हे पतिदेव, कोई ऐसा उपाय करो जिससे इनकी संख्या कम हो जाए ॥२७॥

एका वेणी शिरसि मम भो निश्चितं स्थास्यतीयं
नाधास्येऽहं वपुषि नियतं चाङ्गरागं छटायै।
रक्ते रागे प्रियतम न मे संस्करिष्ये नखान् स्वान्
यावद् भूत्वा समरविजयी गर्वितो नैषि गेहम् ॥२८॥

हे पतिदेव, जब तक आप युद्ध को जीत कर गर्व के साथ घर नहीं आ जाते, मैं अपने सिर पर एक ही चोटी करूंगी।

मैं अपने शरीर पर शोभा के लिये कोई अङ्गराग (पौडर आदि) न लगाऊंगी तथा अपने नाखूनों को सुर्खी से लाल भी नहीं करूंगी ॥२८॥

सिन्दूरं स्वे प्रियतम तथा केशवेशे न दास्ये
योक्ष्ये नाहं शुभकटितटे किङ्किणीं कान्त चारुम् ।
मुक्ताहारो मम च कुचयोरन्तरे शोभिता नो
यावद् भूत्वा समरविजयी गर्वितो नैषि गेहम् ॥२९॥

हे पतिदेव, जब तक आप युद्ध में जीत कर गर्व के साथ घर नहीं आजाते मैं अपनी मांग में सिन्दूर नहीं लगाऊंगी और अपनी कमर में सुन्दर किंकणी को नहीं बाँधूंगी। मोतियों का हार भी मेरी छाती पर नहीं दिखाई देगा ॥२९॥

धास्ये कृष्णं किल न शुभयोर्नेत्रयोरञ्जनं मे
भर्तर्नाहं रदनपुटयो रक्ततां दर्शयिष्ये ।
यास्याम्येवं न जनकगृहं कान्त सत्या प्रतिज्ञा
यावद् भूत्वा समरविजयी गर्वितो नैषि वेश्म ॥३०॥

हे पतिदेव, मैं प्रतिज्ञा करती हूं कि जब तक आप युद्ध में विजय प्राप्त करके गौरव के साथ घर नहीं आ जाते तब तक मैं अपने नेत्रों में काजल नहीं लगाऊंगी, अपने होटों को सुर्खी से लाल नहीं करूंगी और न ही अपने पिता के घर जाऊंगी ॥३०॥

ताम्बूलं न प्रियतम मुखे धारयिष्यामि तावद्
वेण्या भूषा प्रिय न भविता सुन्दरैर्गुल्मपुष्पैः ।
तैलं किञ्चिन्मम न वदने गन्धयुक्तं प्रयोक्ष्ये
यावद् भूत्वा समरविजयी संस्तुतो नैषि गेहम् ॥३१॥

हे पतिदेव, जब तक आप युद्ध में विजयी हो कर और प्रशंसा पाकर घर नहीं आ जाते, मैं पान नहीं खाया करूंगी, अपनी चोटी को सुन्दर फूलों से नहीं सजाऊंगी और अपने शरीर में सुगन्धित तेल भी नहीं लगाऊंगी ॥३१॥

स्वादिष्ठा ये सुमधुरतमाः सन्ति लोके पदार्था-
स्त्यागं तेषां सबलमनसा सर्वथाऽहं करिष्ये ।
भोक्ष्ये तावत् सलवणमिदं केवलं भोजनं मे
यावद् भूत्वा समरविजयी संस्तुतो नैषि गेहम् ॥३२॥

हे पतिदेव, जब तक आप युद्ध में विजय प्राप्त करके और प्रशंसा पाकर घर नहीं आ जाते, मैं संसार के सारे स्वादिष्ट पदार्थों का त्याग करूंगी और भोजन भी केवल नमक के साथ ही खाया करूंगी ॥३२॥

शय्या मेऽथ क्षितितलगता निश्चिता वल्लभैवं
खट्वास्पर्शं कथमपि पते कर्तुमिच्छामि नाहम् ।
एकं वस्त्रं कटतलकृतं स्नस्तरं मेऽथ तावद्
यावद् भूत्वा समरविजयी संस्तुतो नैषि गेहम् ॥३३॥

हे पतिदेव, जब तक आप युद्ध में विजय प्राप्त करके और प्रशंसा पाकर घर नहीं आ जाते मैं चारपाई का स्पर्श नहीं करूंगी, धरती पर ही सोया करूंगी। चटाई पर रखा एक वस्त्र ही मेरा बिछौना होगा ॥३३॥

शृङ्गारोऽद्य प्रिय न फलदः सङ्कटे मातृभूमिर्
नारी काचिद् दयित कुरुते शोभनं नास्ति तस्याः।
कालं ज्ञात्वा चलति पुरुषो नाङ्गना वा पते चे-
त्तेषां बुद्धिर्भवति पतिता सज्जना उद्धरन्तु ॥३४॥

हे पतिदेव, आज जब मातृभूमि संकट में है तो शृंगार करने का क्या लाभ! यदि कोई नारी ऐसा करती है तो उसके लिये यह अच्छा नहीं। जो पुरुष या नारी समय को देख कर नहीं चलते हैं उनकी बुद्धि गिर चुकी है। सज्जन लोग उनका उद्धार करें ॥३४॥

भर्ता तिष्ठेद् विकटसमरे शत्रुभिर्युध्यमानः
शृङ्गारं स्वं विविधविधिभिर् या प्रकुर्याद् गृहस्था।
निन्दा तस्या भवति सुपते योषितः सर्वदेशे
नारी काचिद् विमलकुलजा कान्त नैवं करोति ॥३५॥

पति घोर युद्ध में शत्रुओं से जूझ रहा हो और नारी घर पर अपने शृंगार में लगी रहे तो ऐसी स्त्री की सारे देश में निन्दा होती है। अच्छे कुल की कोई भी नारी ऐसा काम नहीं करती है ॥३५॥

स्त्रीशृङ्गारो भवति ललितः केवलं कान्त पत्ये
नायं प्रोक्तोऽखिलजनमनः कर्तुमाह्लादमग्र्यम् ।
हट्टस्येदं प्रियतम मतं दर्शनार्थं न रूपं
बुद्ध्वा सर्वं सकलमहिला मार्गमायान्त्वनिन्द्यम् ॥३६॥

स्त्री का शृंगार केवल पति के लिये ही शोभादायक होता है। यह सब लोगों को प्रसन्न करने के लिये नहीं होता। यह रूप कोई दुकान की वस्तु नहीं है कि जिसे लोगों को दिखाने के लिये रखा जाए। यह सब कुछ समझ कर सब नारियों को चाहिए कि वह निन्दाहीन मार्ग पर चलें ॥३६॥

माता दुःखे भवति यदि भो कीदृशो नो विनोदः
कुर्वन्त्येवं कुटिलपुरुषा द्रोहिणो मातृभूमेः ।
धिक् ताँल्लोकान् मलिनमनसो राष्ट्रदुःखानभिज्ञान्
नान्नं भुक्तं वरद सफलं चेदृशानां नराणाम् ॥३७॥

यदि मातृभूमि दुःख में है तो हमें विनोद क्यों कर हो ? इस प्रकार की स्थिति में जो कुटिल पुरुष विनोद करते हैं वह मातृ-भूमि के द्रोही होते हैं। ऐसे मलिन मन वाले और राष्ट्र के दुःख को न जानने वाले लोगों को धिक्कार है। ऐसे लोगों का खाया हुआ अन्न कभी सफल नहीं हो सकता ॥३७॥

केचित्पापा मतिविरहिताः सङ्ग्रहे सन्ति लीना
अर्थं कर्तुं दशगुणमितं निर्दयं तेऽपि दण्ड्याः ।
जानन्त्येतत् प्रिय न कुटिला राष्ट्ररक्षा न चेत्स्या-
न्न प्राणानां दयित भविता रक्षकं भूरि वित्तम् ॥३८॥

कुछ मूर्ख पापी लोग दशगुना धन कमाने के लिये संग्रह में ही लीन हैं, उनको भी निर्दयता से दंड देना चाहिये। यह कुटिल लोग इस बात को नहीं जानते हैं कि यदि राष्ट्र की रक्षा ही न हो सकी तो इकठ्ठा किया हुआ बहुत सारा भी धन प्राणों को न बचा सकेगा ॥३८॥

पूर्वे घस्त्रे प्रियतम मया भर्त्सिता मूढलोका
मद्यं पीत्वा मलिनमतयो द्यूतखेलाप्रसक्ताः।
"हा हा युष्मान् पतितहृदयान् मर्त्यदेहे कुरङ्गान्
सीमा स्पृष्टा कुटिलरिपुभिर्यूयमत्र प्रमत्ताः" ॥३९॥

हे पतिदेव, पिछले दिन शराब पी कर जुआ खेल रहे मलिन बुद्धि वाले लोगों को मैंने बहुत फटकारा। अरे दृष्टो! तुम्हें धिक्कार है। तुम्हारा मन गन्दा है, तुम मनुष्य के शरीर में पशु हो। उधर तो राष्ट्र की सीमा पर शत्रु ललकार रहा है और तुम यहां उन्माद में मस्त हो ॥३९॥

शङ्का कार्या मम न विषये मानसे स्वे त्वया भो
भार्यां मां न प्रिय च गणयेर्यादृशीं तादृशीं वा।
सम्पत्तौ वा विपदि सुपते तुल्यरूपं दधेऽहं
चिन्ताहीनः समरविजयी कान्त भूयास्त्वमेवम् ॥४०॥

हे पतिदेव, मेरे वारे में आप अपने मन में तनिक भी चिन्ता न करें। आप मुझे कोई ऐसी वैसी नारी न समझें।

मैं सुख और दुःख में समान रूप को ही धारण करती हूं। आप मेरी चिन्ता को छोड़ कर युद्ध में विजय प्राप्त करें ॥४०॥

देशस्यास्य प्रिय च महिला भर्तृधर्मप्रसक्ता
कालाद् दीर्घात् सकलभुवने ख्यातिमाप्ताऽस्ति नूनम्।
अश्रूण्येषा पिबति न परं मुञ्चते स्वीयधर्मं
चिन्तां न त्वं कुरु मम पते सावधानो युधि स्याः ॥४१॥

हे पतिदेव, भारत की नारी पतिव्रत-धर्म की पालिका होने के कारण प्राचीन काल से ही सारे संसार में प्रसिद्ध है। यह आंसुओं के घूंट पी कर निर्वाह कर लेती है परन्तु अपने धर्म को नहीं छोड़ती। इस लिये आप मेरी चिन्ता छोड़ कर युद्ध में सावधान हो कर काम करें ॥४१॥

चेत्त्वं मोहे भवसि पतितः कान्त गूढे मदीये
नैवैकाग्रं तव तु हृदयं संयुगे स्यात् सुलग्नम् ।
चित्तं तेऽस्तु प्रियतम रिपोर्नाशकार्ये निमग्नं
भूर्नो भर्तर् भवतु भवतो गौरवेणान्विताऽद्य ॥४२॥

हे पतिदेव, यदि इस समय आप मेरा मोह करेंगे तो तुम्हारा मन एकाग्रता से युद्ध में नहीं लगेगा। आपका मन केवल शत्रुओं के विनाश के काम में ही लगा होना चाहिये जिससे यह मातृभूमि आज आपके गौरव से अलंकृत हो जाय ॥४२॥

शुश्रूषामि प्रिय तव कथाः शौर्यलिप्ता जनेभ्यः
श्रुत्वा चैताः परममुदिता कान्त यस्माद् भवेयम् ।
तस्मात् कृत्वा रिपुविशसनं जन्मभूम्यै सुधैर्यं
दत्त्वा मानं सुगुणविहितं त्वं लभस्वाऽद्य राष्ट्रे ॥४३॥

हे पतिदेव, मैं लोगों से आपकी वीरता की कथाएं सुनना चाहती हूं जिससे इन्हें सुन कर मेरी मन की प्रसन्नता पूरी हो जाय। इस लिये तुम आज शत्रुओं का संहार करके और मातृभूमि को धीरज बंधा कर अपने गुणों के अनुसार राष्ट्र में मान को प्राप्त करो ।॥४३॥

दत्ता कोषे शृणु मम पते पारितथ्या मदीया
मुक्त्वा चैनां प्रियतम मया साधितोऽस्ति प्रभावः ।
अन्या नार्यः सुभग सहसा साहसे विस्मिता मे
दानं चक्रुः सरलमनसा भूषणानां समोदम् ॥४४॥

हे पतिदेव, मैंने अपनी सोने की सिंगारपट्टी को रक्षाकोष में दे दिया और इसे दे कर अपना प्रभाव पैदा कर लिया। दूसरी नारियां मेरे हौंसले पर विस्मित हो कर सरल मन से प्रसन्नता के साथ अपने भूषणों को देने लग पड़ी हैं ॥४४॥

मोहो नार्या भवति परमो भूषणानां निजानां
प्राणेभ्योऽपि प्रिय समधिकं नाथ जानन्ति तानि ।
कष्टे दृष्ट्वा स्वजननभुवं कान्त ता अद्य सर्वे
राष्ट्रस्यार्थे निजगृहगतं प्रस्तुताः सन्ति दातुम् ॥४५॥

हे पतिदेव, नारी को अपने भूषणों का बड़ा मोह होता है, वह उन्हें प्राणों से भी प्यारा समझती है परन्तु आज अपनी मातृभूमि को कष्ट में देख कर वह अपने घर का सर्वस्व देने को भी तैयार है ॥४५॥

स्वीया माता भवति गहने वारिधौ सङ्कटानां
शीघ्रं सर्वं प्रियतम ततो जन्मभूम्यर्पणं स्यात् ।
स्नेहः सत्यो भवति विदितः केवलं कष्टकाले
सत्यामृद्धौ सकलमनुजा ज्ञापयन्ति स्वभक्तिम् ॥४६॥

हे प्रियतम, जब अपनी मातृभूमि संकट के सागर में पड़ी हो तो अपना सब कुछ इसके अर्पण कर देना चाहिये । केवल दुःख के समय में ही सच्चा प्यार प्रतीत होता है। समृद्धि के समय में तो सब लोग अपनी भक्ति को दिखाते हैं ॥४६॥

प्राणाधाराः प्रवरपतयः प्रेषिता मातृभूमे
रक्षार्थं भो विकटरिपुतः प्रस्तरीकृत्य चित्तम् ।
याभिस्तासां कथमिव पते भूषणे स्याद् विमोहो
ज्ञातुं भक्तिर्भवति सुगमा योषितां जन्मभूम्यै ॥४७॥

जिन नारियों ने अपने हृदय को पत्थर बना कर अपने प्राणों के सहारे पतियों को कुटिल शत्रु से मातृभूमि की रक्षा के लिये भेज दिया उनका भूषणों से मोह कैसे हो सकता है । इससे मातृभूमि के लिये स्त्रियों का भक्तिभाव आसानी से जाना जा सकता है ॥४७॥

शोभा नार्या न भवति पते भूषणैरङ्गसंस्थैः
शीलेनेयं सकलभुवने पूज्यते सर्वलोकैः।
तस्मिन् नष्टे सकलमहिमा क्षीणतां याति तस्या
राष्ट्रस्यास्य प्रिय सुचरितैर् ज्ञातुमर्हं समस्तम् ॥४८॥

नारी की शोभा अङ्गों में पहने भूषणों से नहीं होती है, यह तो सारे संसार में अपने चरित्र से ही पूजी जाती है। उसके नष्ट होने पर नारी की सारी महिमा ही नष्ट हो जाती है। हे पतिदेव, आप इस राष्ट्र की कथाओं से सब कुछ ही जान सकते हैं ॥४८॥

सर्वा नार्यो दयित ददते भूषणानि प्रकामं
देशस्नेहं समधिकतमं नाथ विज्ञापयन्ति।
बाला वृद्धाः सकलमनुजा राष्ट्ररक्षानिमित्तं
प्राणान् दातुं तरलमनसा कामयन्ते स्ववारम् ॥४९॥

हे पतिदेव, सब नारियां पर्याप्त संख्या में भूषणों को दे रही हैं और इस प्रकार देश के प्यार को प्रकट कर रही हैं। बच्चे-बूढ़े सभी राष्ट्र की रक्षा के लिये अपने प्राण देने के लिये चंचल मन से अपनी अपनी वारी की प्रतीक्षा कर रहे हैं ॥४९॥

यस्मिन् राष्ट्रे भवति विमला देशभक्तिर्जनाना-
मेवं तस्य प्रिय न रिपवः कर्तुमर्हन्ति किञ्चित्।
दृष्ट्वास्माकं बलमनुपमं सद्म यास्यन्ति धृष्टा
धैर्यं धार्यं नहि स समयो विद्यते दूरवर्ती ॥५०॥

हे पतिदेव, जिस राष्ट्र में लोगों की अपने देश के प्रति इस प्रकार की भक्ति हो उसका शत्रु कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। हमारे अनुपम बल को देख कर यह धृष्ट अपने घर लौट जाएंगे। आप धीरज धारण करें, वह समय अब दूर नहीं है ॥५०॥

यस्मिन् यस्मिन् मम च गमनं जायते कान्त गेहे
तस्मिन् तस्मिन् परमसुखदा दृश्यते राष्ट्रभक्तिः।
भोज्ये नापि प्रियतम जनाः स्वां रुचिं धारयन्ते
राष्ट्रक्लेशे कथमिव वयं भोजनं भक्षयेम ॥५१॥

हे पतिदेव, मैं जिस जिस घर में जाती हूं उस उस घर में परम सुखदायक राष्ट्रभक्ति दिखाई देती है। लोगों को अपने भोजन में भी रुचि नहीं है। वह कहते हैं कि जब हमारी मातृभूमि क्लेश में है तो हम भोजन कैसे खाएं ॥५१॥

चिन्तायां न प्रियतम सुखं विन्दते कोऽपि लोके
दग्ध्वा कायं तृणसममियं मानवानां करोति।
तस्मादेनां परिहर पते स्वस्य राष्ट्रस्य शीघ्रं
हत्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥५२॥

हे पतिदेव, चिन्ता में कोई भी आदमी सुख नहीं पाता है। यह मनुष्य के शरीर को जला कर तिनके के समान कर देती है। इसलिये आप शीघ्र ही राष्ट्र की चिन्ता को दूर करो। आप शत्रुओं को जीत कर जब घर आएंगे तो मैं आपका स्वागत करूंगी ॥५२॥

यावच्छक्यं सकलजनता रक्षितुं मातृभूमिं
यत्नासक्ता भवति निखिले भारते सावधाना ।
एकाकी त्वं न भवसि पते वैरिणो हन्तुमेतान्
पश्चात्तेऽत्र प्रियतम जनाः कोटिशः पङ्क्तिबद्धाः ॥५३॥

हे पतिदेव, सारे भारत में सभी लोग अपनी अपनी शक्ति के अनुसार मातृभूमि की रक्षा के लिये प्रयत्न में लगे हुए हैं। शत्रुओं को मारने के लिये तुम अकेले ही नहीं हो, आपके पीछे करोड़ों आदमी पंक्ति में खड़े हैं ॥५३॥

रक्षाकोषे समधिकधनं कर्तुमीहेऽथ भर्तर्
गेहे गेहे प्रतिदिनमहं यत्र तत्र प्रयामि ।
नार्यो मह्यं ददति बहुलं केवलं नैव मर्त्याः
सत्यं भाषे शृणु मम पते निश्चितोऽन्ते जयो नः ॥५४॥

मैं रक्षाकोष में अधिक से अधिक धन इकट्ठा करना चाहती हूं और इसके लिये प्रतिदिन घर घर में जा रही हूं। मुझे केवल पुरुष ही नहीं स्त्रियाँ भी बहुत कुछ दे रही हैं। हे पतिदेव, सुनो मैं सच कहती हूं कि अन्त में जीत हमारी ही होगी ॥५४॥

वित्ताभावे कथमिव वयं वैरिणो जेतुमर्हाः
सर्वत्रैव प्रियतम धनं कार्यसिद्धौ प्रधानम् ।
संहारार्थं विविधविधिभिर्वैरिणां मातृभूमे-
रक्षाकोषेऽपरिमितधनं शीघ्रमेवार्जनीयम् ॥५५॥

पैसे के अभाव में हम शत्रुओं को कैसे जीत सकते हैं ? कार्यसिद्धि में सब जगह धन ही प्रधान होता है। मातृभूमि के शत्रुओं का अनेक प्रकार से संहार करने के लिये रक्षाकोष में अपरिमित धन इकट्ठा करना चाहिये ।।५५।।

रक्षाकोषो विमलचरितैः कथ्यते पावनोऽसौ
भागो नास्य क्वचिदपि पते सम्प्रयुक्तः कदाचित् ।
कार्यो धीरैरमलपुरुषैर्देशरक्षातिरिक्तं
विश्वासो न प्रियतम यथा दानिनां स्याद्विनष्टः ।।५६।।

निर्मल चरित्र वाले लोग रक्षाकोष को बहुत ही पवित्र समझते हैं। धीर एवं निर्मल पुरुषों को चाहिये कि इसके थोड़े से भी भाग को देशरक्षा के अतिरिक्त और कहीं भी प्रयुक्त न करें, जिससे दानियों का विश्वास नष्ट न हो ।।५६।।

लोभः कार्यः क्वचिदपि न भो राष्ट्रवित्तस्य लोकै-
स्तस्यार्थं यद् भवति निहितं तस्य तस्मै प्रयोगः ।
कार्यः सौम्यैः पुरुषमणिभिश्चिन्तयित्वा निमित्तं
तेषामेवं भवति विदिता देशभक्तिर्वरिष्ठा ।।५७।।

लोगों को चाहिये कि वह राष्ट्र के धन का लालच न करें। उसकी रक्षा के लिये जो वस्तु रखी हो, श्रेष्ठ पुरुषों

को चाहिये कि वह निमित्त को सोच कर उसीके लिये उसका प्रयोग करें। इस प्रकार उनकी देश के प्रति गूढ भक्ति जानी जाती है ॥५७॥

वीरा भूमे रिपुवधकृते ये प्रयाता हिमाद्रिं
शीतं यत्र प्रभवति यथा सान्द्रतामेति रक्तम् ।
तेभ्यो नार्यो विविधवसनान्यूर्णया साधयन्ते
नेत्री भूत्वा शृणु मम पते कार्यभारं वहामि ॥५८॥

मातृभूमि के जो वीर, शत्रुओं को मारने के हेतु हिमालय पर गये हैं वहां पर इतनी सर्दी पड़ती है कि खून भी जम जाता है। नारियां उनके लिये ऊन से अनेक प्रकार के वस्त्र तैयार कर रही हैं। हे पतिदेव, मैं अगुआ बन कर इस सारे काम के बोझ को धारण कर रही हूं ॥५८॥

स्पर्धां तीव्रां दधति महिलाः कर्तुमेतत्सुकार्यं
ता अन्योन्यं ददति सुपते शंसनीयं सहायम् ।
दृष्ट्वा सर्वं दयित हृदयं मोदमाप्नोत्यमन्दं
शङ्का काचित् प्रियतम न मे निश्चितोऽन्ते जयो नः ॥५९॥

इस भले काम को करने के लिये स्त्रियों में भारी स्पर्धा (एक दूसरे से आगे बढ़ने की भावना) पाई जाती है। वह एक दूसरों को प्रशंसनीय सहयोग दे रही हैं। हे पतिदेव, यह

सब कुछ देख कर मुझे बड़ी भारी प्रसन्नता हो रही है। इसमें कोई संदेह नहीं कि अन्त में जीत हमारी ही होगी ॥५९॥

अद्रेः कूटा हिमपरिवृताः शीतलाः सन्त्यमन्दं
गत्वा तत्र प्रिय दृढभुजाः शत्रुभिर् युध्यमानाः ।
वीराः पूज्याः सकलपुरुषैर्देशरक्षानिमित्तं
यैः स्वप्राणाः करतलकृता गेहमोहं विसृज्य ॥६०॥

बर्फ से ढ़की हुई हिमालय की चोटियाँ बहुत ही शीतल हैं। वहां जा कर देश की रक्षा के निमित्त शत्रुओं से युद्ध करते हुए, दृढ भुजाओं वाले वीरों की सब लोगों को पूजा करनी चाहिये, जिन्होंने घर के मोह को छोड़ कर अपने प्राण हथेली पर रखे हुए हैं ॥६०॥

शत्रो रक्तं हिमपरिगतं भासते चित्रवर्णं
कूटे शीर्षं प्रियतम रिपोर्भ्रान्तिमेतां करोति ।
प्राणी कश्चिद् भवति शयितः स्वस्तरे पाटलेऽथो
निद्रा तस्य प्रलयसमये केवलं दूरतः स्यात् ॥६१॥

बर्फ पर पड़ा हुआ शत्रु का खून विचित्र वर्ण का दिखाई दे रहा है। चोटी पर पड़े शत्रु के सिर को देख कर यह भ्रम हो रहा है कि कोई प्राणी लाल-सफेद विस्तर पर सोया हुआ है। उसकी नींद केवल प्रलयकाल में ही खुलेगी ॥६१॥

आसं आसं सकलनगरे हाटकं संल्लभेऽहं
आवं आवं रणतलकथास्तोषमायान्ति लोकाः ।
नामं नामं रणविजयिनस्ते नमन्त्यात्मभूमिं
सङ्ख्यक्षेत्रादिह मम पते व्यस्तताऽऽभाति भूरि ॥६२॥

मैं सारे नगर में घूम घूम कर सोना प्राप्त कर रही हूं। लोग युद्ध की कथाओं को सुन सुन कर प्रसन्न हो रहे हैं। वह युद्ध के विजेताओं को बार बार नमस्कार करके अपनी भूमि को नमस्कार कर रहे हैं। हे पतिदेव, यहां की व्यस्तता युद्धक्षेत्र से भी बढ़ कर है ॥६२॥

आलस्यं न प्रियतम शुभं सङ्कटापन्नराष्ट्रे
संभूयैवं सकलपुरुषैरेकतासूत्रबद्धैः ।
यत्नः कार्यो दिवसनिशयोर्दुर्हृदः स्वान्निहन्तुं
शक्तो नैको भवति चणकस्त्रोटितुं भ्राष्ट्रमत्र ॥६३॥

हे पतिदेव, जब राष्ट्र पर संकट छाया हुआ हो तो आलस करना अच्छा नहीं होता। ऐसी स्थिति में एकता के सूत्र में बंध कर सब लोगों को अपने शत्रुओं को मारने के लिये दिन-रात प्रयत्न करना चाहिये। क्योंकि अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता ॥६३॥

स्वे स्वे क्षेत्रे सकलकृषकाः कार्यलग्ना भवन्ति
स्त्रीभिः सार्धं न भवतु यथा खाद्यदारिद्र्यभावः ।
भोज्याभावे कथमिव पते सैनिका योद्धुमर्हाः
जानन्त्येतन्निपुणमतयः स्वेदसंसिक्तवप्राः ॥६४॥

हे पतिदेव, खेतों में सब किसान अपनी स्त्रियों के साथ काम में लगे हुए हैं जिससे खाद्यान्न की कमी न हो। भोज्य के अभाव में भला सैनिक कैसे लड़ सकते हैं? कुशल बुद्धि वाले, पसीने से खेतों की भूमि को सींचने वाले किसान लोग इस बात को अच्छी तरह जानते हैं ॥६४॥

यावद् भर्तर् जठरभरणे नात्मतन्त्रा भवामो
हस्तक्षेपं प्रियतम परा नैव मोक्ष्यन्ति तावत्।
याच्ञा श्लाघ्या न भवति पते भोक्तुमन्नं परेषां
सस्यस्निग्धा भवतु धरणी धारणाय प्रजायाः ॥६५॥

हे पतिदेव, जब तक हम अपना पेट पालने में आत्मनिर्भर नहीं हो जाते तब तक दूसरे लोग हमारे हित में हस्तक्षेप करना नहीं छोड़ेंगे। अन्न के लिये दूसरों के आगे गिड़-गिड़ाना अच्छा नहीं होता। हमारी धरती प्रजा के पालन के लिये खेती से हरी-भरी रहे ॥६५॥

ग्राम ग्रामे सकलपुरुषा आनमन्तः स्वभूमिं
दातुं शीर्षं सुविहितपणाः प्रस्तुताः सन्ति भर्तः।
स्वं स्वं वारं चपलहृदयेनोत्सुकाः कामयन्ते
कान्तोत्साहो मम दशगुणः साहसं वीक्ष्य तेषाम् ॥६६॥

हे पतिदेव, ग्राम ग्राम में सब लोग मातृभूमि को नमस्कार करते हुए अपने प्राणों का बलिदान करने की प्रतिज्ञा लिये

तैयार खड़े हैं। वह अधीर मन से उत्कण्ठित अपनी अपनी बारी की प्रतीक्षा में हैं। उनके साहस को देख कर मेरा उत्साह दशगुना हो गया है ॥६६॥

एको वृद्धः पथि च मिलितो यष्टिमाश्रित्य गच्छन्
मामालोक्य प्रियतम भिया ग्रस्तचित्तः स आह।
सेवा काचिद् भवति यदि मे जन्मभूस्यै सुपुत्रि
ब्रूहि द्राक् त्वं न भवतु चिरं शत्रुसंहारकार्ये ॥६७॥

एक बूढ़ा लाठी के सहारे चलता हुआ मुझे रास्ते में मिला। मुझे देख कर वह कुछ डरा हुआ बोला। हे पुत्री! मातृभूमि की सुरक्षा के लिये यदि मेरे योग्य कोई सेवा है तो जल्दी बताओ। शत्रु के संहार में देर नहीं होनी चाहिये। ६७॥

नाहं बोधे कति मम समा जीवनस्यात्रशिष्टाः
शत्रोर्हस्ते कथमपि सुते जन्मभूमिर्न गच्छेत्।
मृत्युर्मे स्याद् यदि च तनये पारतन्त्र्ये कदाचिन्-
मां लोकित्वा परमघृणया दुःखितोऽसौ यमः स्यात् ॥६८॥

फिर बोला कि हे पुत्री! मालूम नहीं कि अब मेरे जीवन के कितने वर्ष बाकी हैं। हमारी मातृभूमि शत्रु के हाथ में नहीं जानी चाहिये। यदि मेरी मृत्यु कहीं परतंत्रता में हुई तो मुझे घृणा से देख कर वह यमराज भी दुःखी होगा ॥६८॥

तस्य श्रुत्वा सुवचनमिदं क्लिन्नतामश्रुभिर्मे
नेत्रे याते प्रियतम तदा देशभक्तिं निरीक्ष्य।
बाला वृद्धाः सकलमपि भो प्रस्तुताः कान्त दातुं
काचिच्छङ्का न भवति पते निश्चितोऽन्ते जयो नः ॥६९॥

तब उसके इस वचन को सुन कर और देशभक्ति को देख कर मेरे नेत्र आंसुओं से भीग गये। हे पतिदेव, बच्चे-बूढ़े सभी मातृभूमि के लिये अपना सब कुछ देने को तैयार बैठे हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि अन्त में जीत हमारी ही होगी ॥६९॥

एका तृष्णा युवतिजगतो दृश्यते वर्धमाना
सर्वा नार्यः कुशलपतिभिर् भ्रातृभिः संमिलन्त्यः।
स्कन्धे स्कन्धं मिलितमिव भो कर्तुमिच्छन्ति भर्तर्
जेतुं शत्रून् कुटिलमनसो वामनान् कान्त शीघ्रम् ॥७०॥

नारीजगत् की एक तृष्णा बढ़ती ही चली जा रही है। सब स्त्रियां कुटिल मन वाले अपने बौने शत्रुओं को शीघ्र ही जीतने की इच्छा से अपने चतुर पतियों और भाइयों से कन्धे से कन्धा मिलाना चाहती हैं ॥७०॥

नारी न स्यात् कथमपि पते पृष्ठतोऽरिं प्रहर्तुं
शक्ता कर्तुं भवति ललना शत्रुसंहारकार्यम्।
भुङ्क्ते सापि प्रिय सुमधुरं प्रत्यहं मातुरन्नं
तस्याः स्वान्ते परमकरुणा वर्तते जन्मभूम्यै ॥७१॥

नारी को अपने शत्रु पर प्रहार करने के लिये किसी भी प्रकार पीछे नहीं रहना चाहिये। वह शत्रु का संहार बहादुरी से कर सकती है। हे पतिदेव, वह भी प्रतिदिन मातृभूमि के मीठे अन्न को खाती है और उसके हृदय में जन्मभूमि के लिये पर्याप्त दया और आदर भरा हुआ है ॥७१॥

मातुः कष्टे यदि मम पते योगदानं न नार्या–
स्तस्याः शीर्षे भवति यदृणं संस्थितं मातृभूमेः ।
तस्मान्मुक्तिं प्रियतम कथं लप्स्यते सा तदानीं
गत्वा तस्मात् समरधरणीमीहतेऽरिं प्रहर्तुम् ॥७२॥

हे प्रियतम, यदि मातृभूमि के संकट में नारी का योगदान न हो उसके सिर पर जो जन्मभूमि का ऋण है उससे वह तब कैसे छुटकारा पाएगी। यही कारण है कि वह युद्ध भूमि में जा कर शत्रु पर प्रहार करना चाहती है ॥७२॥

स्पर्धा नार्या भवति हृदये मानवैः पूर्वकालात्
क्लिष्टे कार्ये दयित ललना नैव पश्चान्नरस्य ।
एतद् द्रष्टुं सुकरमिह भो लक्ष्यते वेदवृत्ता—
दाज्ञा मे स्याद् द्रुततरमहं प्राप्नुयां युद्धभूमिम् ॥७३॥

हे पतिदेव, प्राचीन काल से ही नारी के हृदय में पुरुषों से स्पर्धा रही है और कठिन काम में वह कभी पुरुष के पीछे नहीं रही है। यह सब कुछ वैदिक इतिहास से आसानी

से जाना जा सकता है। यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं शीघ्र ही युद्ध भूमि में पहुँच जाऊं ॥७३॥

वीथ्यां वीथ्यां विकलहृदया अङ्गनाः संलपन्त्यः
काचिद् ब्रूते गरिमवचसा स्वां सखीं स्नेहसिक्ता ।
आलि ! भ्राता मम स कुरुते शौर्यकर्मेदृशं भो
एकेनैवागणितरिपवो मृत्युलोकं प्रणीताः ॥७४॥

गली गली में व्याकुल मन वाली नारियां इस प्रकार कहती हुई दिखाई देती हैं। कोई प्रेम से भीगी हुई बड़े गौरव के साथ अपनी सखी को कहती है कि हे प्यारी सखी ! देख, मेरा भाई कितनी बहादुरी का काम कर रहा है। उस अकेले ने ही अनगिणत शत्रुओं को मौत के घाट उतार दिया ॥७४॥

हस्ते धृत्वा स निशितमसिं छिद्रमासाद्य शत्रोर्
वायोर्गत्या चलति पुरतः पातयन् मस्तकानि ।
हा हा ! शब्दो रिपुदलगतः श्रूयते सर्वलोकैः
कृत्वा शौर्यं निजमनुपमं ख्यातिमायाति देशे ॥७५॥

वह हाथ में तलवार ले कर शत्रु की त्रुटि देख कर वायु की गति से वैरियों के सिरों को काटता हुआ सामने चला जा रहा है। शत्रुओं के दल में हाहाकार मचा हुआ है। वह इस प्रकार अपनी अनोखी वीरता को दिखा कर राष्ट्र में प्रसिद्धि को प्राप्त कर रहा है ॥७५॥

सिंहस्यास्ये भवति हरिणो बोधते हा ! हतोऽहं
नैवाक्रान्ते रिपुमभिगतं वेत्ति पूर्वं वराकः ।
एवं भ्राता मम स सुभगे वैरिणो हन्ति वीरः
खड्गाघातात् पलमपि पुरा नैव शत्रुः प्रबुद्धः ॥७६॥

जब हिरण शेर के मुंह में चला जाता है तभी उसको पता चलता है कि हाय ! मैं तो मारा गया हूं। आक्रमण से पहले उस बेचारे को शत्रु के आने का पता ही नहीं लगता। हे सखी ! इसी प्रकार मेरा वीर भाई शत्रुओं को मार रहा है। तलवार के वार होने से एक पल भी पहले शत्रु को कुछ पता नहीं चलता है ॥७६॥

भालं "गोली" स्पृशति च यदा भूमिसुप्तः स वैरी
काक्षेणैनं हरिमिव रणे भाषते लोकमानः ।
'वीरत्वं ते भवति सफलं मातृभूरक्षकस्य
प्राणोत्सर्गो विफल इह नश्चौर्यहेत्वागतानाम्" ॥७७॥

जब गोली शत्रु के मस्तक पर लगती है तो खून से लथपथ, भूमि पर सोया हुआ वह युद्ध में शेर के समान इस मेरे भाई को टेढी आंख से देखता है और कहता है कि मातृभूमि के रक्षा करने वाले तुझ बहादुर की वीरता ही सफल है। हम तो आपकी मातृभूमि में चोर आये हैं, इस लिये हमारा प्राणों का बलिदान व्यर्थ ही है ॥७७॥

काचिद् भर्तुः पुनरथ पितुः शंसते वा सुतानां
सेनाऽस्माकं भवति भयदा वैरिणां लोपकर्त्री ।
तासां वाचः शृणु मम पते निश्चितां मामकुर्वन्
नास्मान् कश्चिद् भवति सकले विष्टपे जेतुमर्हः ॥७८॥

कोई अपने पति की, कोई पिता की, तो कोई अपने पुत्रों की प्रशंसा करती है। वह कहती हैं कि हमारी सेना बड़ी भयावनी है। यह शत्रुओं को तहस-नहस कर देगी। हे प्रियतम, उनके बचनों ने मुझे निश्चय करवा दिया है कि सारे संसार में भी हमें कोई जीत नहीं सकता ॥७८॥

एका ब्रूते शृणु सुवदने पञ्च मे भ्रातरस्ते
सर्वे शूरा रिपुविमथने सन्ति दक्षा अतीव ।
युद्धे शौर्यं सुरपतिसमं दर्शयिष्यन्ति नूनं
तेषां शस्त्रं क्वचिदपि रिपुः शक्ष्यते नैव सोढुम् ॥७९॥

एक कहती है कि हे सुन्दरी ! सुन, मेरे पांचों भाई बड़े बहादुर और शत्रु के कुचलने में चतुर हैं। वह निश्चय ही युद्ध में इन्द्र के समान शूरवीरता दिखाएंगे। शत्रु उन के शस्त्र को कहीं भी सहन नहीं कर सकेगा ॥७९॥

मार्गे भ्रान्तिर्भवति सकलाँस्तान् विलोक्यालि शूरान्
सन्त्येते किं कलियुगगता पाण्डवाः पञ्च वीराः ।
तेषां गत्या भवति धरणी वेपमानेव भीत्या
सत्यं भाषे यम इव मता वैरिसैन्ये प्रविष्टाः ॥८०॥

हे सखी ! रास्ते में उन सबको इकट्ठा देख करके यह भ्रम हो जाता है कि क्या यह कलियुग के पांच पांडव हैं ? उनकी चाल से धरती भी मानों डर के मारे कांपने लगती है। मैं सच कहती हूं कि शत्रु की सेना में जब वह प्रवेश करते हैं तो यमराज के समान दिखाई देते हैं ॥८०॥

पित्रा सर्वे निजसुतनयाः प्रेषिताः सन्ति सैन्ये
दर्शं दर्शं भवति जननी हर्षिता सैनिकांस्तान् ।
आहुर्नार्यो मुदितमनसा सङ्गता मातरं मे
धन्यैका त्वं स्वजननभुवे पञ्च पुत्राः प्रदत्ताः ॥८१॥

मेरे पिता ने अपने सारे सुपुत्रों को सेना में भर्ती करवा दिया है। मेरी माता उन्हें सैनिक के रूप में देख देख कर फूली नहीं समाती। स्त्रियां जब कहीं इकट्ठी होती हैं तो प्रसन्न हो कर मेरी माता को कहती हैं कि तूँ ही एक धन्य है जिस ने मातृभूमि की रक्षा के लिये पांच पुत्र दिये हैं ॥८१॥

एका बाला तरलनयना लक्षिता या नवोढा
लज्जाविष्टा किमपि भणितुं नैव शक्ता स्वपत्युः ।
नेत्रे तस्या अथ ससलिले प्रोचतुर्भर्तृगाथां
तामालिङ्ग्य प्रिय मम मनः किञ्चिदासीन्नवीनम् ८२

एक चंचल नेत्रों वाली युवती जिस का विवाह अभी अभी हुआ मालूम होता था, लज्जा के कारण अपने पति के बारे में कुछ भी कहने में असमर्थ हो रही थी। आंसुओं से भरे उसके नेत्र ही उसके पति की कहानी बता रहे थे। हे प्रियतम,

उसे अपनी छाती से लगा कर मेरा मन कुछ नया ही हो गया ॥५२॥

संकेतेन प्रिय शुभकथाः प्रोचुरन्याः पतीनां
सर्वं पत्रे विशदमधुना कामये नैव कर्तुम् ।
स्वान्ते भर्तर् भवति निहितं किं वदिष्यामि गेहे
शत्रून् हत्वा गृहमधिगतः श्रोष्यसि त्वं समस्तम् ॥८३॥

इस प्रकार और भी लज्जाशील युवतियां संकेत के द्वारा ही अपने पतियों की कथा को बता रहीं थीं। हे प्रियतम मैं पत्र में सब कुछ लिखना नहीं चाहती। मेरे मन में यह बात बैठी है कि यदि मैं पत्र में ही सब कुछ लिख दूंगी तो घर पर आप से क्या बताऊंगी। शत्रुओं का संहार कर के जब तुम घर पर आओगे तो सब कुछ सुनोगे ॥८३॥

रत्यालापान्प्रिय सुखकरानीहसे त्वं मया चे-
च्छत्रून् सर्वान्क्षितितलगतान् कान्त शीघ्रं कुरुष्व।
भीरुर्भूत्वा मम न सदने त्वं प्रवेशं लभेथा-
श्चित्तं क्षुब्धं तव न मनसा सङ्गमिच्छेन्मदीयम् ॥८४॥

हे पतिदेव, यदि आप मुझ से प्रेम की बातें करना चाहते हो तो सारे शत्रुओं को मारकर धरती पर गिरा दो। डरपोक बन कर आप को मेरे घर में प्रवेश नहीं करना होगा। यदि आप ऐसा करोगे तो मेरे खिन्न मन का आप के मन के साथ कभी मेल नहीं हो सकेगा ॥८४॥

इति द्वितीयः सर्गः समाप्तः ॥

अथ तृतीयः सर्गः



नाथाऽस्माकं शुभहिमगिरिः पूज्यते देववद्यः
सर्वैर्लोकैर्विनयसहितं मस्तकं स्वं नमद्भिः ।
धत्ते कूटान् हिमपरिवृतान् शोभमानाननन्ते
सोऽपि स्पृष्टो रिपुभिरधमैर् गर्वितैः स्वीयशक्तौ ॥१॥

हे पतिदेव, हमारा हिमालय जिसको सब लोग नम्रता के साथ मस्तक झुका कर नमस्कार करते हैं और जिसकी बर्फ से ढकी हुई ऊंची ऊंची चोटियां आकाश में शोभा देती हैं, उसे अपनी शक्ति में घमंड रखने वाले नीच शत्रुओं ने छू लिया है ॥१॥

अद्रिश्चेन्नो रिपुकरगतो जीवनं दुःशकं स्यात्
कालादादेः प्रिय नगमिमं देववत् पूजयामः ।
अस्मिँश्चक्रुः प्रवरमुनयः कष्टसाध्यां तपस्या-
माप्त्वा बोधं सकलजगते ते ददुर् ज्ञानतत्त्वम् ॥२॥

यदि हमारा हिमालय शत्रु के हाथ में चला गया तो हमारा जीना कठिन हो जाएगा। हम इस पर्वत को प्राचीन काल से देवता के समान पूजते हैं। इस हिमालय पर उच्च कोटि

के मुनि लोगों ने कष्टों से भरी तपस्या कर के ज्ञान प्राप्त किया और फिर सारे संसार को उसका उपदेश दिया ।।२।।

भाषिष्यन्ते प्रियतम च किं ज्ञानिनः पूर्वजास्ते
शक्ता नैषा प्रियनगमिमं सन्तती रक्षितुं नः ।
चन्द्रादित्यौ नियतसमये यस्य सेवां विधत्तः
सोऽयं देवो रिपुभिरधमैर्धर्षितः कान्त दुःखम् ! ।।३।।

हे प्रियतम, वह हमारे ज्ञानी पूर्वज क्या कहेंगे कि यह हमारी संतान इस प्यारे पर्वत की रक्षा न कर सकी। चन्द्रमा और सूर्य नियत समय पर जिस की सेवा करते हैं उस हिमालय देवता को नीच शत्रुओं ने तिरस्कृत कर दिया, यह बड़े दुःख की बात है ।।३।।

जन्माप्राप्य प्रिय सुसलिला जाह्नवी यस्य गर्भान्-
मध्ये मध्ये वहति सकलं भारतं सिञ्चमाना ।
सोऽयं भर्तः शुभहिमगिरिः शत्रुभिस्ताडितोऽद्य
त्रायस्वैनं रिपुपदहतं भीष्मसूः स्यान्न रुष्टा ।।४।।

हे पतिदेव, निर्मल जल वाली गङ्गा जिस से निकल कर भारत को सींचती हुई इसके बीच बीच में बहती है उस हिमालय का शत्रु ने आज अनादर कर दिया। शत्रु के पैर से प्रताडित इस हिमालय की रक्षा करो। ऐसा न हो कि कहीं गंगा रुष्ट हो जाय ।।४।।

वैराग्याप्ता बहुलमुनयः कन्दरासूपविष्टा
नीराधारा विषयविरता इन्द्रियाणामदासाः ।
त्यक्त्वा भोज्यं बहुतमसमा नीतवन्तः समाधौ
ज्ञानस्रोतः स तु हिमगिरिः क्लेशमाप्तः प्रभूतम् ॥५॥

वैराग्य को प्राप्त हुए, केवल पानी पर जीने वाले, विषयों से दूर, इंद्रियों के पीछे न भागने वाले बहुत से मुनियों नें अपने भोजन को छोड़ कर जिसकी गुफाओं में कई वर्ष समाधि में बिता दिये, वह ज्ञान का प्रवाह हिमालय आज बड़े क्लेश को प्राप्त हो गया है ॥५॥

वेदानां नो दयित रचना यस्य शृङ्गेषु जाता
वेदाङ्गानां सुखदसरणिः ज्ञानिभिर्यत्र दृष्टा ।
प्रत्येकस्मिन् भवति च कणे संस्कृतिर्भारतीया
सोऽयं पापैरधमरिपुभिः पर्वतो धर्षितोऽस्ति ॥६॥

हे पतिदेव, जिसकी चोटियों पर वेदों की रचना हुई और जहां ज्ञानियों ने वेदों के अङ्गों का सुखदायक आविष्कार किया, जिस के कण कण में भारत की संस्कृति की झलक मिलती है उस हिमालय पर्वत का आज पापी नीच शत्रु के द्वारा अनादर हो गया ॥६॥

ख्यात्यैतस्याखिलमहितले भारतं शोभमानं
कान्तैतेन प्रियसुगिरिणा कीर्तिरस्त्यस्मदीया ।
अस्य ह्रासे कथमिव मुखं संसृतौ दर्शनीयं
ज्ञात्वा सर्वं गहनविपयं शत्रवो मारणीयाः ॥७॥

इस पर्वत की प्रसिद्धि से ही सारे संसार में भारत की शोभा है, इस प्यारे पर्वत के द्वारा ही सब जगह हमारी कीर्ति है। हे पतिदेव, इस हिमालय को हानि पहुंचने पर हम संसार में कैसे मुखड़ा दिखाएंगे। आप सारी बात गहराई से सोच कर शत्रुओं को मारो ॥७॥

रुद्राणीं या युवतिजगता पूज्यते कामनाभ्य-
स्तस्यास्तातः प्रियनगपतिः शत्रुभिस्ताडितः स्यात्।
वामाऽगत्या वसतु ससुखं कीदृशी धृष्टतेयं
यत्नः कार्यो न भवतु यथा पार्वती साऽप्रसन्ना ॥८॥

युवतियां जिस पार्वती को अपने मनोरथों के लिये पूजती हैं उसके पिता प्यारे हिमालय का शत्रु तिरस्कार करें और भारत की नारी सुख से बैठी रहे यह कितनी धृष्टता की बात है। हे पतिदेव, ऐसा उपाय करो जिससे पार्वती नाराज न हो ॥८॥

यामाश्रित्य प्रियतम वयं जीवनं धारयामः
सौभाग्यं नो दयित कृपया रक्षितं चैव यस्याः।
साक्षाद् भूत्वा परमवरदा कामिनीनां सतीत्वं
रक्षत्येवं न भवतु पते पार्वती साऽप्रसन्ना ॥९॥

हे पतिदेव, जिसके सहारे पर हम जीती हैं और जिसकी कृपा से हमारे सौभाग्य की रक्षा होती है, जो वरदायिनी देवी प्रकट हो कर नारियों के पातिव्रत्य की रक्षा करती है वह नाराज न हो ॥९॥

आभीले या सपदि कुरुते कामिनीनां सहायं
तुष्टा शीघ्रं भवति कुसुमैः पूजिता कान्त ताभिः ।
कामान् दत्ते मनसि निहितान् सुन्दरीभ्यः स्मृता या
स्पृष्टो न स्याद् दयित जनकः शत्रुपादेन तस्याः ॥१०॥

जो संकट में शीघ्र ही नारियों की सहायता करती है और जो फूलों से पूजा करने पर भी प्रसन्न हो जाती है तथा स्मरण करने पर युवतियों के मनचाहे मनोरथों को देती हैं उसके पिता को शत्रु अपने पैर से छूने न पाए ॥१०॥

तातस्यैवं प्रिय परिभवे क्रोधमाप्ता कदाचि-
च्छर्वाणी सा कुटिलभृकुटिर्जायते कामिनीषु ।
कष्टे घोरे सकलमहिलाः संपतिष्यन्ति भर्तर्
ध्यात्वा सर्वं गहनमनसा कार्यसिद्धिं विधेहि ॥११॥

अपने पिता के तिरस्कार होने पर यदि पार्वती स्त्रियों पर क्रुद्ध हो गई तो सब स्त्रियां घोर संकट में पड़ जाएंगी। इस लिये बड़ी गहराई से सारी बात का ध्यान करके कार्य को सिद्ध करो ॥११॥

तुष्टा चण्डी दयित ददते याचितं वस्तु लोकै-
रुष्टा किन्तु क्षणमपि पते भूर्यनर्थं करोति ।
सा न क्षुब्धा कथमपि भवेत् सावधानो भवेस्त्वं
कोपे तस्या पततु सकलः कामिनीनां न लोकः ॥१२॥

यदि पार्वती प्रसन्न हो जाए तो वह लोगों की मनचाही वस्तुओं को देती है, परन्तु यदि एक क्षण के लिये भी रुष्ट हो जाय तो बड़ा भारी अनर्थ कर देती है। हे पतिदेव, वह किसी भी प्रकार रुष्ट न हो, आप सावधान हो कर सुन लें। यह नारीसंसार उसके क्रोध में गिर न जाय ॥१२॥

प्रश्नश्चायं प्रिय न पुरतः केवलं चण्डिकायाः
शर्वोऽप्येवं भवति कुपितो रोषमालोक्य पत्न्याः।
क्रुद्धश्चेत् स्यात् स च पशुपतिः सर्वनाशो भवेन्नो
रक्षां कृत्वा शुभहिमगिरेर् धूर्जटिं तोषयस्व ॥१३॥

हे पतिदेव, यह प्रश्न केवल पार्वती के विषय में ही नहीं है, पत्नी के रोष को देख कर भगवान् शंकर भी क्रुद्ध हो सकते हैं। यदि शिव क्रोध में आगये तो हमारा सर्वनाश हो जाएगा। इसलिये हे पतिदेव, हिमालय की रक्षा कर के महादेव को प्रसन्न करो ॥१३॥

दक्षे सत्याः पितरि दयित क्रोधमाप्तः कपर्दी
नाशं तस्य प्रिय निजगणैः कारयामास शीघ्रम्।
कान्तः कश्चित् किल न सहतेऽनादरं स्वीयपत्न्या
रुष्टा चेत् स्याद् गणपतिजनिः कोपमाप्तः शिवः स्यात् ॥१४॥

सती के पिता दक्ष राजा पर एक बार महादेव क्रुद्ध हो गये थे तो उन्होंने अपने गणों के द्वारा उसका नाश करवा दिया था। हे प्रियतम, कोई भी पति अपनी पत्नी के अनादर को

सहन नहीं कर सकता है। यदि पार्वती रुष्ट होगी तो शिव जी भी अवश्य क्रोध में आ जाएंगे ॥१४॥

दक्षः पुत्रीं बहुगुणवतीं ब्रह्मणा चोदितोऽसौ
सर्वेशाय प्रियतम सतीं वेदिकायामयच्छत् ।
धातुर्गेहे विबुधपुरतश्चैकदा कृत्तिवासा
उत्थायैनं श्वसुरविधिना नाद्दणोत्तेन रुष्टः ॥१५॥

दक्ष ने ब्रह्मा की प्रेरणा से अपनी पुत्री सती का विवाह वेदी में शिव के साथ कर दिया। एक बार ब्रह्मा के घर में सब देवता बैठे थे तो वहां दक्ष भी आया। उसके आनें पर शिव ने अपने ससुर का उठ कर मान नहीं किया, इस लिये दक्ष शिव पर रुष्ट हो गया ॥१५॥

जामात्रेऽसौ कुपितनृपतिर्दत्तवान् शापमेतं
यज्ञे भागो नहि भवतु ते त्वं प्रमत्तोऽसि शम्भो ।
पश्चात्तापो बहु भवति मे स्वात्मजां तेऽर्पयित्वा
सम्प्राप्यैनां मम सुतनयां ख्यातिमाप्तः प्रसङ्गात् ॥१६॥

क्रुद्ध हुए दक्ष राजा ने अपने जामाता को यह शाप दे दिया कि हे शिव ! तुम उन्मादी हो गये हो। तुम्हें आगे के लिये यज्ञ का भाग नहीं मिला करेगा। मैं अपनी पुत्री को तुझे दे कर बहुत पछता रहा हूं। इसको प्राप्त कर के आप ऐसे ही प्रसिद्धि प्राप्त कर गये ॥१६॥

दक्षो यज्ञं गिरिशकुपितः श्रोत्रियैराहरत् स्वैर्
वित्तं भूरि प्रमुदितमनसा स्वकृतावाजुहाव ।
गावोऽसङ्ख्या रजतधवला अर्पिता ब्राह्मणेभ्यः
कुम्भा एवं कनकघटिता निर्धनेभ्यः प्रदत्ताः ॥१७॥

महादेव पर क्रुद्ध हुए दक्ष ने अपने श्रोत्रियों के साथ यज्ञ किया । अपने यज्ञ में उसने प्रसन्न मन से बहुत धन खर्च किया, चांदी जैसी सफेद असंख्य गौएं ब्राह्मणों को दीं तथा सोने के बने कलश गरीबों को दिये ॥१७॥

तेनाहूताः परिचितजनाः सादरं स्वीययज्ञे
मातुः पक्षात् सकलसुहृदो मातुला मातुलान्यः ।
तत्रायाताः सकलतनयास्तस्य सर्वाः स्वसारः
शालाभूषाऽतिथिभिरखिलैर्व्योमगा भैरिवासीत् ॥१८॥

दक्ष ने अपने यज्ञ में सभी परिचित बन्धुओं को बुलाया । ननिहाल से मामे और मामियां आईं । उसकी सब पुत्रियां और बहिनें भी आईं । उन सब अतिथियों से यज्ञशाला की इस प्रकार शोभा होने लगी जैसे तारों से आकाश की शोभा होती है ॥१८॥

व्योम्नो यानैर् दयित सुरथैः स्वर्णपृष्ठैश्च दिव्यैः
सज्जां कृत्वा विविधवसनैर्भूषणैर्हाटकस्य ।
देवाः सर्वे त्वरितगतिका आगता अङ्गनाभि-
स्तेषां स्थित्या क्रतुरपि तदालङ्कृतोऽभूदमन्दम् ॥१९॥

हे पतिदेव, सब देवता अपनी स्त्रियों के साथ अनेक प्रकार के सुन्दर वस्त्रों और सोने के भूषणों से सज-धज कर विमानों के द्वारा तथा सोने की पीठवाले सुन्दर रथों से जल्दी ही वहां पहुंच गये। उनके वहां आ जाने से यज्ञ की बहुत शोभा होने लगी ॥१९॥

कैलाशस्था गिरिशदयिता सर्वमेतद्ददर्श
ज्ञात्वा वृत्तं जनकगृहगं पूरितोत्कण्ठया सा।
कार्यव्यस्तो मम हि जनको नाह्वयन्मां कदाचित्
पत्या सार्धं मुदितमनसा गन्तुमिच्छामि मङ्क्षु ॥२०॥

कैलाश पर बैठी हुई महादेव की पत्नी सती ने यह सब कुछ देखा। पिता के घर के समाचार को जान कर वह उत्कंठा से उतावली हो गई। उसने सोचा कि हो सकता है कि काम में उलझा हुआ होने के कारण मेरे पिता ने मुझे न बुलाया हो? मैं अपने पति के साथ प्रसन्न मन से शीघ्र ही वहां जाना चाहती हूं ॥२०॥

भर्ता मेऽसौ भुवनविदितः शङ्करो भालचन्द्रो
गर्वं मन्ये मम तु हृदये शर्वपत्नीत्वमाप्त्वा।
ईर्ष्यां चित्ते दधति सकला एतदर्थं स्वसारो
यास्याम्यद्य स्वजनकगृहं शम्भुना भूषिताऽहम् ॥२१॥

मस्तक पर चन्द्रमा को धारण करने वाले मेरे पति महादेव जी सारे संसार में प्रसिद्ध हैं। मैं तो शिव की

भार्या बन कर अपने मन में गर्व का अनुभव करती हूं। मेरी सारी बहनें इसके लिये मुझ से ईर्ष्या रखती हैं। मैं शंकर के साथ आज अवश्य अपने पिता के घर जाऊंगी ॥२१॥

तातावासे विमलवसना यज्ञकार्ये सहायं
कृत्वा कीर्तिं किल सुविपुलां शम्भवे साधयिष्ये।
गाने नृत्ये सकलमहिला अग्रतोऽहं प्रणेष्ये
चित्तोत्कण्ठा प्रतिपलमियं वर्धते यातुमद्य ॥२२॥

मैं अपने पिता के घर में सुन्दर वस्त्र पहन कर यज्ञ के काम में सहायता करके शिव जी के लिये बहुत यश पैदा करूंगी। गाने और नाचने में सब स्त्रियों का नेतृत्व करूंगी। आज जाने के लिये मेरी उत्कंठा पल पल में बढ़ती ही जा रही है ॥२२॥

रुष्टो दक्षो निजशुभमखे नाजुहावात्मजां स्वा-
मेतद् ज्ञात्वा मनसि परमं खेदमाप्ता सुताऽऽसीत् ।
भर्तारं सा जनकसदनं प्रार्थयामास गन्तुं
"नैवाहूता भवसि दयितेऽशोभनस्ते प्रयासः" ॥२३॥

शिव पर रुष्ट होने के कारण दक्ष राजा ने अपनी पुत्री को यज्ञ में नहीं बुलाया। यह जान कर सती को बड़ा दुःख हुआ। उसने अपने पति से पिता के घर चलने की प्रार्थना

की। परन्तु शिव ने कहा कि हे भार्ये! तुम्हें तेरे पिता ने नहीं बुलाया है इस लिये तेरा जाना ठीक नहीं है ॥२३॥

नारीभावात् परमतिहठे लोकिता दक्षपुत्री
बारं बारं पतिमपि शिवं चोदयामास गन्तुम्।
"नेहे गन्तुं श्वशुरसदनं तेन नाकारितोऽहं
चित्तं रोद्धुं प्रभवसि न चेद् याहि कामं प्रिये त्वम्" ॥२४॥

परन्तु नारी होने के कारण दक्ष की पुत्री सती बहुत हठ कर रही थी। वह अपने पति शिव को भी चलने के लिये बार बार कहने लगी। तब शिव ने कहा कि मैं तो अपने ससुर के घर नहीं जाऊंगा। क्योंकि उसने मुझे नहीं बुलाया है। यदि तुम अपने मन को नहीं रोक सकती हो तो भले ही चली जाओ ॥२४॥

ज्ञात्वा सर्वं समयनिहितं योगशक्त्या स शम्भुः
सत्या सार्धं दृढभुजबलान् प्रेषयामास वीरान्।
प्राप्तां पुत्रीं न शुभमनसा दक्षभूपो बभाषे
तस्याश्चित्तं विकलमभवद् भर्तृवाक्यं स्मरन्त्याः ॥२५॥

महादेव ने अपने योगबल से समय की सारी होनहार को जान लिया और सती के साथ बलवान् अपने गणों को भेज दिया। जब सती अपने पिता के घर पहुंची तो राजा दक्ष उसके साथ प्रसन्न मन से न बोला। तब अपने पति के वचन को याद कर के सती का मन व्याकुल हो गया ॥२५॥

तातेनैवं कृतपरिभवा नादृता बान्धवैः सा
तस्मिन् गेहे विचरति सती स्याद् यथा तत्र दासी।
तिष्ठेयं वा निजपतिगृहं यानमस्तु क्षणेऽस्मिन्
भर्ता।किं मे मनसि च निजे भाषिता मां विलोक्य॥२६॥

पिता ने जब सती का अपमान किया तो बाकी बन्धु भी उसके साथ आदर से न बोले। वह उस घर में ऐसे घूमने लगी जैसे मानों वहां कोई दासी हो। वह सोचने लगी कि मैं यहां ठहरूं या अभी अपने पति के घर चली जाऊं। मेरा पति मुझे देख कर अपने मन में क्या सोचेगा ॥२६॥

संज्ञापूर्वं सकलविबुधाः संस्मृता यज्ञकुण्डे
शम्भोर्नाम्ना कुपितनृपतिः श्रोत्रियान् स्वानुवाच।
तस्मै देयो नहि दिविषदः कोऽपि यज्ञस्य भागो
दर्पोन्मत्तो भवति स शिवोऽनादरं मे चकार॥२७॥

यज्ञकुंड में बारी बारी से सब देवताओं को नामों से याद किया गया। जब शिव का नाम लिया तो राजा ने गुस्से में देवता-पुरोहितों को कहा कि हे देवताओ! उस महादेव को कोई यज्ञ का भाग न दिया जाय। वह बहुत घमण्डी हो गया है और उसने मेरा बड़ा अपमान किया है ॥२७॥

श्रुत्वा निन्दां स्वजनकमुखाद् भर्तुरेवं सती सा
दुःखेनाप्ता किल समभवत् ताडितेवाशिनाऽथ।
तातो मेऽयं क्षिपति गिरिशं नैव जानाति तत्त्वं
भर्तुर्निन्दां क्वचिदपि सती नैव सोढुं समर्था ॥२८॥

जब सती ने अपने पिता के मुख से पति की निन्दा सुनी तो वह इस प्रकार दुःखी हुई मानों उस पर वज्र गिर गया हो। वह सोचने लगी कि यह मेरा पिता महादेव की निन्दा कर रहा है, यह तत्त्व को नहीं जानता है। कोई भी पतिव्रता नारी अपने पति की निन्दा को नहीं सुन सकती है ॥२८॥

अस्मादाप्तं खलु वपुरिदं लोपनीयं मया द्राक्
"दक्षस्येयं भवति तनया" श्रोतुमिच्छामि नाऽहम्।
सम्प्राप्यैवं पुनरपि जनुः कस्यचिद् रम्यगेहे
देवैरीड्यं कठिनतपसा शम्भुमेव प्रपत्स्ये ॥२९॥

इस दक्ष से जो यह शरीर मिला है इसका अभी त्याग कर देना चाहिये। मैं अब यह नहीं सुनना चाहती कि यह दक्ष की पुत्री है। किसी के रमणीय घर में दूसरी बार जन्म पा कर मैं कठिन तपस्या के द्वारा देवताओं से स्तुति किये जाने वाले महादेव को ही पति के रूप में प्राप्त कर लूंगी ॥२९॥

एवं ध्यात्वा निजपतिशिवं यज्ञवेद्याः सुकोणे
योगस्याग्नौ निजशुभतनुं तत्क्षणं सा जुहाव।
सर्वे लोकाः परमचकिता वीक्ष्य दृश्यं तदाऽऽसन्
हन्तुं दक्षं पशुपतिगणा उद्यता आयुधैः स्वैः ॥३०॥

इस प्रकार अपने पति का ध्यान करके उस सती ने यज्ञवेदी के एक कोणे में बैठ कर योग की आग में अपने शरीर को होम दिया। उस अद्भुत दृश्य को देख कर सब लोग बहुत

हैरान हुए। तब महादेव के गण अपने शस्त्रों को उठा कर दक्ष को मारने के लिये तैयार हो गये ॥३०॥

एतद् दृष्ट्वा चतुरभृगुणाऽऽकारितो मन्त्रपाठैः
कश्चिद् वीरः सपदि स गणान् द्रावयामास वेद्याः।
वृत्तं सर्वं क्रतुपरिगतं प्रापयामास शम्भुं
सत्यास्त्यागं गणपरिभवं नारदो देवदूतः ॥३१॥

यह सब कुछ देख कर चतुर भृगु ने मंत्र पढ़ कर एक वीर को बुलाया। उसने शिव के गणों को शीघ्र ही यज्ञ की वेदी से भगा दिया। देवदूत नारद ने यज्ञ का यह सारा समाचार तथा सती का त्याग महादेव को बता दिया ॥३१॥

कैलाशेऽभूत्सुवटविटपी विस्तृतो लम्बशाख-
स्तस्याधस्तात् स हि पशुपतिर् लीन आसीत् समाधौ।
तत्रैवायात् प्रतिपलगतिः सञ्चरन् नारदोऽसौ
वीणां श्रुत्वा विवृतनयनो व्योमकेशस्तदाभूत् ॥३२॥

कैलाश पर्वत पर लम्बी लम्बी शाखाओं वाला एक बहुत बड़ा बड़ का पेड़ था। उस के नीचे वह महादेव समाधि में लीन बैठे थे। एक पल भी न रुकने वाला घूमता-घूमता नारद वहीं पर आ गया। उस की वीणा के शब्द को सुन कर महादेव ने अपने नेत्र खोले ॥३२॥

श्रुत्वा सर्वं श्वशुरचरितं शङ्करः क्रुद्ध आसीत्
कैलासोऽसौ प्रलयदिनवत् कम्पमानस्तदाभूत्।
आविर्भूतो गिरिशपुरतो वीरभद्रो जटाभ्यो
हस्तौ बद्ध्वा मृदुलवचसा शूलपाणिं बभाषे ॥३३॥

ससुर के सारे चरित्र को सुन कर महादेव को बड़ा क्रोध आया। कैलास पर्वत इस प्रकार कांपने लगा मानों प्रलय का दिन आ गया हो। तब महादेव की जटाओं से निकल कर वीरभद्र शिव के आगे खड़ा हो गया और हाथ बांध कर नम्रता से बोला ॥३३॥

का नाथाऽऽज्ञा भवति सपदि ब्रूहि कृत्यं मदीयं
केन क्षोभः शिव तव कृतः कस्य मृत्युः प्रियोऽद्य ।
आदेशे ते सकलभुवनं साम्प्रतं नाशयिष्ये
बाहू शम्भो मम न सहिता योऽपराधी तवास्ति ॥३४॥

हे स्वामी ! कहो, क्या आज्ञा है। जो काम मुझे करना है उसे जल्दी बताओ। हे महादेव ! आप को किस ने दुःख पहुंचाया है, आज मौत किस को प्यारी है ? मैं आपकी आज्ञा से सारे संसार को ही नष्ट कर दूंगा। आप का अपराधी मेरी भुजाओं की शक्ति को सहन नहीं कर सकेगा ॥३४॥

श्रुत्वा सर्वं पशुपतिरिदं रक्तनेत्रो बभाषे
देहः सत्या इह न भुवने बाधते मां व्यथेयम् ।
शीघ्रं शूर श्वशुरनिलयं वीरभद्र व्रज त्वं
यज्ञध्वंसं कुरु च दलनं रंहसा दक्षमूर्ध्नः ॥३५॥

इस वचन को सुन कर क्रोध से लाल नेत्रों वाले शिव जी बोले। सती का शरीर इस संसार में नहीं रहा, यही पीड़ा मुझे दुःखी कर रही है। हे वीरभद्र, तुम शीघ्र

ही मेरे ससुर के घर चले जाओ। वहाँ यज्ञ का विध्वंस कर दो और साथ ही दक्ष राजा के सिर को काट दो ॥३५॥

सम्प्राप्याज्ञां स परमबली निर्गतो दक्षगेहं
ध्वंसं वेद्या अतिथिहननं चाहुतिं दक्षमूर्ध्नः ।
एतत्सर्वं सपदि कृतवान् शत्रुजिद् वीरभद्रः
शून्यं स्थानं तदपि सकलं जम्बुकैः पूर्णमासीत् ॥३६॥

शिव की आज्ञा पा कर बलवान् वीरभद्र शीघ्र ही दक्ष के घर को चला गया। उसने यज्ञवेदी को नष्टभ्रष्ट कर दिया, अतिथियों को मार दिया और दक्ष राजा के सिर को काट कर आग में डाल दिया। शत्रुओं पर विजय पाने वाले उस वीरभद्र ने यह सब कुछ पल भर में ही कर दिया। वह स्थान सूना पड़ गया और वहां गीदड़ आ गए ॥३६॥

एवं कोपो भवति सुमहान् शूलिनो ध्वंसकारी
रुष्टोमा चेत् कुपितगिरिशोऽशोभनं नः प्रकुर्यात् ।
सर्वं ध्यात्वा सबलमनसा रक्ष भर्तर् हिमाद्रिं
शत्रून् हत्वा गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥३७॥

इस प्रकार महादेव का क्रोध बहुत विनाशकारी होता है। यदि पार्वती रुष्ट हो गई तो क्रोध में आए हुए महादेव हमारा बहुत अनिष्ट कर सकते हैं। इस लिये हे पतिदेव, सारी बातों का ध्यान करके हिमालय की रक्षा करो। आप शत्रुओं को मार घर आएंगे तो मैं आप का स्वागत करुंगी ॥३७॥

जन्मादातुं प्रियतम पुनः संसृतौ शर्वपत्नी
तातं चिच्ये सुविमलकुलं पर्वतानामधीशम् ।
तेनापीयं सुभग दुहिता पालिताऽनेकयत्नै-
स्तस्मादेव प्रिय च भुवने पार्वतीति प्रसिद्धा ॥३८॥

हे पतिदेव, शिव की पत्नी ने संसार में फिर जन्म लेने के लिये पर्वतों के राजा हिमालय को पिता चुना। उसने भी अपनी पुत्री को अनेक यत्नों से पाला। इसी लिये संसार में इसका नाम पर्वत की पुत्री पार्वती पड़ा है ॥३८॥

बाल्यावस्था प्रियतम गता यौवनं प्राप्तमासी-
त्तातस्तस्या निजसुदुहितुश्चिन्तया पीडितोऽभूत् ।
कस्मै देया मम सुतनया पुष्पवत्कोमलेयं
निद्रा नासीद् दिवसनिशयोरद्रिमौलेर्हिमाद्रेः ॥३९॥

हिमालय की पुत्री का बचपन बीत गया और यौवन आ गया। तब उसके पिता को अपनी पुत्री की चिन्ता होने लगी। वह सोचने लगे कि फूल के समान कोमल इस पुत्री को किस को दूंगा। चिन्ता के मारे पर्वतराज हिमालय को रात और दिन चैन नहीं आती थी ॥३९॥

एवं ज्ञात्वा जनकहृदयं भावपूर्णं बभाषे
शम्भुर् भर्ता मम हि भविता तात चिन्तां त्यज त्वम् ।
संलग्नाऽभूद् गहनतपसि स्वेच्छया पार्वती सा
शूली साक्षात् प्रियतम ततो दर्शयामास रूपम् ॥४०॥

अपने पिता के मन को पहचान कर पार्वती उसे भावपूर्ण वचन बोली कि पिता जी, आप चिन्ता न करें मेरे पति शिव जी ही होंगे। तब वह पार्वती घोर तपस्या में जुट गई। उसके तप से प्रभावित हो कर महादेव ने उसे साक्षात् दर्शन दिये ॥४०॥

कृत्वा तस्या विविधविधिभिर्भूतनाथः परीक्षां
स्वीचक्रे तां पुनरपि सतीं दक्षगेहे वियुक्ताम् ।
एवं भर्तुः शिखरितनया भर्तृधर्मप्रसिद्धा
लोके स्त्रीभिर्निजपतिहितायाऽर्च्यते प्रत्यहं सा ॥४१॥

महादेव नें अनेक प्रकार से उसकी परीक्षा कर के दक्ष के घर में वियुक्त हुई उस सती को फिर अंगीकार कर लिया। हे पतिदेव, इस प्रकार हिमालय की पुत्री पार्वती पतिव्रत धर्म में प्रसिद्ध हो गई। यही कारण है कि संसार की सभी स्त्रियां अपने पति की भलाई के लिये पार्वती की प्रतिदिन पूजा करती हैं ॥४१॥

सौभाग्याय प्रिय च महिलाः पार्वतीं प्रार्थयन्ते
सन्तुष्टा सा विविधसुवरान् कामिनीभ्यो ददाति ।
तस्यास्तातं स्पृशतु न रिपुः कूटनीतिप्रवीणो
रुष्टोमा चेद् भवति मतिमन् प्रश्रयं कस्य यामः ॥४२॥

स्त्रियां अपने सौभाग्य के लिये पार्वती से प्रार्थना करती हैं। वह भी प्रसन्न हो कर नारियों को कई प्रकार के शुभ वरदान

देती है। हे पतिदेव, उसके पिता को छली शत्रु छूने न पाये, आप विषय की गंभीरता को समझें। यदि पार्वती रुष्ट हो गई तो हम किसकी शरण में जाएंगी ।।४२।।

त्वां सम्प्राप्तुं वरपतिमहं पूजयन्ती मृडानीं
क्षीराम्बुभ्यां विविधकुसुमैर्धूपनैवेद्यदीपैः ।
रात्रीर्वह्वीः प्रिय समनयं जागृताऽभुक्तभोज्या
तस्याश्चैवं परमकृपया त्वामहं कान्त याता ।।४३।।

हे पतिदेव, आप जैसे श्रेष्ठ पति को पाने के लिये मैं दूध, पानी, अनेक प्रकार के फूलों और धूप-दीप-नैवेद्य से पार्वती की पूजा करती रही हूं। मैंने विना कुछ खाए और विना सोए बहुत सी रातें बिताई हैं। इस प्रकार उसकी परम कृपा से ही मैंने आपको को प्राप्त किया है ।।४३।।

व्यर्थं न स्यात् प्रियतम तपः यत्सुतप्तं तदानीं
वीरो भूत्वाऽखिलमपि मनश्चिन्तितं पूरयस्व ।
गौर्याः पूजा भवति वितथा भीरुता ते रणे चेद्
ज्ञात्वा सर्वं दयित समरे वैरिनाशं कुरुष्व ।।४४।।

हे पतिदेव, जो तप मैंने उस समय किया था वह निष्फल न जाए। आप बहादुर बन कर मेरे मन की कामनाओं को पूरा करें। यदि युद्ध में तुम कायरता दिखाओगे तो पार्वती

की पूजा व्यर्थ सिद्ध होगी। हे प्रिय, इस प्रकार सारी बात को समझ कर युद्ध में शत्रुओं का नाश करो ॥४४॥

श्रीमन् न त्वं नगपतिमिमं रक्षितुं चेत् समर्थो
नाङ्गीकर्ता प्रियतम तदा शङ्करः पूजनं नः।
तस्माद् भर्तर् हितकरवचो मानसे धारयित्वा
शैलं रक्ष स्मरहरनतं मातृभूमेः किरीटम् ॥४५॥

हे पतिदेव, यदि आप पर्वतराज हिमालय की रक्षा न कर सके तो महादेव हमारी पूजा को स्वीकार नहीं करेंगे। इस लिये आप मेरे हितकारी वचन को मन में धारण करके शिव से नमस्कार किये हुए तथा भारत माता के मुकुट हिमालय की रक्षा करो ॥४५॥

पूजाकाले प्रिय पशुपतेरुक्तमेतत् त्वयाऽऽसी-
न्मोदः शम्भोर्भवति सुखदो दुःखदः किन्तु कोपः।
सोऽद्य क्षुब्धो न भवति यथा तादृशं कर्म कार्यं
रक्षित्वैनं विबुधसुहृदं भारते मानमेहि ॥४६॥

हे प्रियतम, आप ने महादेव की पूजा के समय कहा था कि शम्भु यदि प्रसन्न हों तो वह सुख देते हैं परन्तु यदि क्रोध में आ जाएं तो दुःख देते हैं। आप ऐसा काम करें जिससे वह आज रुष्ट न हो जाएं। देवताओं के मित्र इस हिमालय की रक्षा करके भारत में मान प्राप्त करो ॥४६॥

सद्मागत्य प्रिय च गिरिशः पूर्ववत् पूजनीयो
वामाङ्केऽहं दयित भवते योगदानं प्रदास्ये ।
वेदैर्मन्त्रैः स्वरमनुगतैर्मन्दिरं गुञ्जितं स्या-
च्छत्रून् हत्वा सपदि सदनं त्वं समायाहि कान्त ॥४७॥

हे पतिदेव, आप के घर आने पर हम पहले की तरह ही महादेव की पूजा करेंगे । मैं आपके वाएं भाग में बैठ कर पूजा में योगदान दूंगी । स्वर के साथ पढ़े गये वेद मन्त्रों से मन्दिर सुशोभित होगा । आप शत्रुओं को मार कर शीघ्र घर चले आओ ॥४७॥

शोभां यस्य प्रखरकवयोऽवर्णयन्मुक्तकण्ठं
काव्ये शैल्या ललिततमया शब्दसौन्दर्यवत्या ।
देवावासे शुभहिमगिरौ नाधिकारो रिपोः स्यात्
कालोऽभीष्टो भवति करयोर्दर्शितुं वीरतां ते ॥४८॥

उच्चकोटि के कवियों ने अपने काव्य में जिस हिमालय की शोभा का सुन्दर शब्दों वाली मधुर शैली के द्वारा मुक्तकण्ठ से वर्णन किया है, देवताओं के निवास उस हिमालय पर्वत पर शत्रु का अधिकार न हो । अपनी वहादुरी दिखाने के लिये उपयुक्त समय आप के हाथ में आया हुआ है ॥४८॥

शत्रोर्हस्ते यदि हिमगिरिर्जायते नः कदाचिद्
भाषिष्यन्ते किमयि कवयो भाविनो भारतस्य ।
मुक्तिस्तस्मात् प्रिय न भविता लाञ्छनादायुगं ते
सर्वं ज्ञात्वाऽविकलमनसा कार्यसिद्धिं विधेहि ॥४९॥

हे पतिदेव, यदि कदाचित् हमारा हिमालय शत्रु के हाथ में चला गया तो भारत के आगे होने वाले कवि क्या कहेंगे। उस कलङ्क से युगपर्यन्त आपका छुटकारा न होगा। आप स्थिर मन से सारी बात को समझ कर काम को सिद्ध करें।।४९।।

काव्यं तन्न प्रिय सुललितं वर्णनं यत्र नाद्रेः
कूटानुच्चान् नभसि दधतः शम्भुना सत्कृतस्य।
स्पृष्ट्वा रेणुं सकलदुरितं याति दूरे नराणां
नाऽतो गच्छेत् कथमपि गिरिर्हस्तयोर्वैरिणोऽयम्।।५०।।

वह काव्य सुन्दर नहीं जिसमें आकाश में ऊंची चोटियों को धारण करने वाले तथा महादेव से आदर पाए हुए हिमालय का वर्णन न हो। इस की धूलि का स्पर्श करके मनुष्यों के सारे पाप दूर हो जातें हैं। इस लिये हे पतिदेव, यह हिमालय किसी भी प्रकार शत्रु के हाथ में नहीं जाना चाहिये।।५०।।

तप्त्वा यस्मिन् कृशितवपुषः पूर्वजा बोधमाप्ता
जेपुर्मन्त्रान् सुमधुरगिरा कन्दरासूपविश्य।
अद्रिः सोऽयं रिपुकरगतः कान्त न स्यात् कदाचित्
कालोऽभीष्टो भवति करयोर्दर्शितुं वीरतां ते।।५१।।

जिसमें में तपस्या कर के कृश किये हुए शरीर वाले हमारे पूर्वजों ने ज्ञान प्राप्त किया और गुफाओं में बैठ कर मीठी वाणी से मंत्रों का जाप किया, वह यह पर्वत कभी

भी शत्रु के हाथ में न जाने पाए। हे पतिदेव, अपनी वीरता दिखाने के लिये यह अभीष्ट समय आप के हाथ में है ॥५१॥

गन्धर्वाणां शुभनिवसतिः किन्नराणां सुगेहं
यक्षाणां वा रुचिरसदनं देवतानां निवासः।
नायं गच्छेदधमकरयोः कान्त जानीहि तथ्यं
कालोऽभीष्टो भवति करयोर्दर्शितुं शौर्यमद्य ॥५२॥

यह हिमालय गन्धर्वों, किन्नरों और यक्षों का सुन्दर घर है तथा देवताओं का निवासस्थान है। हे पतिदेव, यह शत्रु के नीच हाथों में न जाने पाए, आप इस सचाई को समझने का प्रयत्न करें। बहादुरी दिखाने का यह उपयुक्त समय आपके हाथ में आया हुआ है ॥५२॥

चक्षुःक्रीडां परममुदिताः कुर्वते देवबाला-
स्तासां दृश्यं नयनपथगं यत्र कुर्वन्ति सिद्धाः।
तस्मात् कन्या अवनतमुखाः संहरन्ते स्वखेलां
नायं गच्छेत् पतितकरयोः पर्वतानामधीशः ॥५३॥

जिस हिमालय में देवताओं की कन्याएं प्रसन्न हो कर आँखमिचौनी की खेल खेलती हैं और सिद्ध लोग उस खेल के दृश्य को देखने का प्रयत्न करते हैं तो लज्जावश वह

कन्याएं अपनी खेल को बन्द कर देती हैं। हे पतिदेव, ऐसा यह पर्वतराज हिमालय शत्रु के नीच हाथों में न जाने पाए ॥५३॥

सिद्धाः सर्वे भ्रमणसुखिनो गुह्यकैः सार्धमद्रौ
यस्मिन् स्थित्वा रसभृतकथाः प्रत्यहं संवदन्ति ।
तेषां गाथाः श्रवणविवरं कर्तुमादित्य आस्ते
व्योम्नि स्वल्पं दयित समयं प्रग्रहै रुद्धपीतिः ॥५४॥

जिस हिमालय में भ्रमण से सुख प्राप्त करने वाले सिद्ध लोग गुह्यकों के साथ प्रतिदिन रसभरी कथाएं बोलते हैं और उनकी कथाओं को सुनने के लिये सूर्य लगाम से अपने घोड़ों की गति को रोक कर आकाश में कुछ समय के लिये ठहर जाता है। हे पतिदेव, ऐसा यह हिमालय पर्वत शत्रु के हाथ में न जाने पाए ॥५४॥

स्रष्टा चापि प्रियतम महान् मन्यते यस्य कृत्या
सृष्टौ किञ्चिद् भवति न तथा यादृशोऽयं हिमाद्रिः ।
धाता रुष्टो न भवति यथा तादृशं त्वं यतेथाः
खड्गं भर्तः कुरु सुनिशितं कर्तितुं वैरिणोऽद्य ॥५५॥

जिस हिमालय की रचना से ब्रह्मा को भी बड़ा माना जाता है। सारे संसार में इस हिमालय के समान कोई दूसरी वस्तु नहीं है। हे पतिदेव, ऐसा यत्न करो जिससे ब्रह्मा रुष्ट न हो। आज अपने शत्रुओं को काटने के लिये अपनी तलवार को तेज कर लो ॥५५॥

देशस्यायं भवति बलवन्मस्तकं विश्वसिद्धं
दीर्घात् कालाज्जगति विदितो रक्षको भारतस्य ।
रक्षाऽस्याद्य प्रिय विधिवशात् स्कन्धयोरागता ते
कालोऽभीष्टो भवति करयोर्दर्शितुं शौर्यमद्य ।।५६।।

हे बहादुर पतिदेव, यह हिमालय हमारे देश का मस्तक है, इस बात को सारा संसार जानता है। तथा इस बात को भी सब जानते हैं कि यह भारत का पहरुआ है। आज संयोगवश इसकी रक्षा आप के कन्धों पर आ गई है एवं बहादुरी दिखाने का यह उपयुक्त समय आपके हाथ में आया हुआ है ।।५६।।

युक्तोऽसि त्वं प्रियहिमगिरिं रक्षितुं मातृभूम्या
कृत्वा रक्ष्यं परकरगतं नाथ नाऽऽयाहि गेहम् ।
कार्पण्यं ते कथमपि पते नैव शक्नोमि सोढुं
मृत्युः श्रेयान् भवति भुवने जीवनान्निन्दनीयात् ।।५७।।

मातृभूमि ने तुम्हें प्यारे हिमालय पर्वत की रक्षा के लिये लगाया हुआ है। इस लिये तुम अपने उस रक्ष्य को दूसरों के हाथ में देकर घर मत आओ। मैं तुम्हारी कायरता को किसी भी प्रकार सहन नहीं कर सकती हूं। संसार में निन्दित जीवन से तो मर जाना ही अच्छा होता है ।।५७।।

एकां गाथां पतिवर शुभां रक्ष्यसम्बन्धिनीं त्वं
धृत्वा चित्ते नगपतिमिमं पाहि बाह्वोर्बलेन ।
सम्राडासीच्छुभरघुकुले ख्यातनामा दिलीपः
पुत्राऽभावे प्रतिदिनमसौ चिन्तया पीडितोऽभूत् ॥५८॥

हे श्रेष्ठ पतिदेव, रक्ष्य के सम्बन्ध में एक प्रसिद्ध कथा है, उसको अपने मन में धारण करके तुम इस पर्वतराज की बाहुबल से रक्षा करो। रघुकुल में दिलीप नाम से प्रसिद्ध महाराजा था। उसके घर में कोई पुत्र न था, इस लिये वह चिन्ता से हर समय पीडित रहता था ॥५८॥

गत्वाऽवादीन्मुनिवरगुरुं ज्ञानवन्तं वसिष्ठं
वंशर्द्धिर्मे कथमिव भवेज्जायते नात्मजश्चेत् ।
सर्वार्थज्ञः किल स नृपतेः कर्तुमिच्छुः परीक्षां
होमध्येयां वरदसुरभिं सेवितुं प्रादिदेश ॥५९॥

एक बार वह राजा ज्ञान रखने वाले मुनियों में श्रेष्ठ अपने गुरु वसिष्ठ के पास जा कर बोला। हे गुरुवर! यदि मेरे घर में पुत्र पैदा न हो तो मेरे वंश की वृद्धि कैसे होगी? तब सब अर्थों का ज्ञान रखने वाले उस मुनि ने राजा की परीक्षा करनी चाही और अपने होमकार्य के लिये रखी हुई वरदायक काम धेनु की सेवा करने के लिये राजा को आदेश दिया ॥५९॥

पत्न्या सार्धं नरपतिरसावर्चयामास धेनुं
मर्त्यं छायाऽनुचलति यथा सोऽपि तामन्वगच्छत् ।
भक्तिं ज्ञातुं सुरभिरगमच्छाद्वलं मार्गयन्ती
राज्ञस्तस्य प्रिय हिमगिरेरेकदा कन्दरायाम् ॥६०॥

तब वह राजा अपनी पत्नी के साथ उस गौ की सेवा करने लगा। वह उसके पीछे ऐसे घूमने लगा जैसे मनुष्य के पीछे छाया चलती है । एक वार वह कामधेनु राजा की परीक्षा करने के लिये हरे हरे घास को ढूंढती हुई हिमालय पर्वत की गुफा में चली गई ॥६०॥

निर्गत्यैको झटिति सुरभिं सिंह आक्रान्तवाँस्तां
राजा हन्तुं मृगपतिममुं नैव शक्तः शरेण ।
दीना धेनुः सबलनृपतिं त्राणहेतोरपश्य-
च्चिन्तालिप्तः स्वमनसि तदा चिन्तयामास भूपः॥६१॥

तब उस गुफा में से एक शेर निकला और उसने अचानक गौ पर आक्रमण कर दिया। राजा अपने तीर से उस शेर को मार न सका। गौ दीन होकर अपनी रक्षा के लिये बलवान् राजा को देखने लगी। तब चिन्ता में पड़ा हुआ राजा अपने मन में सोचने लगा ॥६१॥

धेन्वा हीनः कथमिव मुखं दर्शयिष्ये गुरुं मे
कच्चित्क्रोधे विचलितमना जायतेऽसौ वसिष्ठः ।
एतत्कोपो भवति बहुधा हानिदो मानवानां
गेहं नाहं सुरभिरहितो यातुमर्हामि सायम् ॥६२॥

मैं गौ के विना अपने गुरु को कैसे मुंह दिखाऊंगा। कहीं ऐसा न हो कि क्रोध के कारण वसिष्ठ का मन विचलित हो जाय। इन ऋषि-मुनि लोगों का क्रोध मनुष्यों की बहुत हानि कर सकता है। मैं सायंकाल को गौ के विना घर नहीं जा सकता हूं ॥६२॥

वासिष्ठीयं भवति सुरभिः सिंह मैनां जहि त्वं
कायो मत्को भवतु भवतः पारणायै व्रतस्य ।
रक्ष्याभावे नहि मृगपते रक्षको जीवितः स्या-
देवं मत्वा मम वपुरिदं भक्षयित्वैधि तृप्तः ॥६३॥

राजा ने कहा कि हे शेर, यह मुनि वसिष्ठ की गौ है; तुम इसको मत मारो। मेरे शरीर से अपने व्रत को पूरा कर लो। रक्ष्य के विना रक्षक जीवत नहीं रह सकता ऐसा समझ कर तुम मेरे शरीर को खा कर तृप्त हो जाओ ॥६३॥

पञ्चास्योऽसौ मनुजवचसा तं दिलीपं बभाषे
धेनोरर्थं शृणु नरपते किं प्रदत्से शरीरम् ।
गावोऽसङ्ख्यास्तव सदनगाः सन्ति दुग्धं वहन्त्य-
स्तास्त्वं दत्त्वा स्वकुलगुरवे मुक्ततां यातुमर्हः ॥६४॥

तब शेर मनुष्य की वाणी में राजा दिलीप को बोला कि हे राजन्, सुनो तुम गौ के लिये अपने शरीर को क्यों देते हो। तुम्हारे घर में दूध देने वाली अनगिणत गौएं हैं। तुम उन गौओं को अपने कुलगुरु को दे कर छुटकारा पा सकते हो ॥६४॥

राजोवाच प्रवणमतिमान् स्वीकृतं सिंह नैतद्
रक्ष्यत्राणे भवति सबलो मानवश्चेन्न कश्चित्।
लोके स्थातुं क्वचिदपि तदा नास्ति तस्याधिकार-
स्त्यक्त्वा धेनुं मम तु रुधिरेणाप्नुहि त्वं स्वतृप्तिम् ॥६५॥

तब विनम्र बुद्धिमान् राजा बोला कि हे शेर, यह बात मुझे स्वीकार नहीं है। यदि कोई मनुष्य अपने रक्ष्य की रक्षा न कर सके तो संसार में जीवित रहने का उसे कोई अधिकार नहीं है। इसलिए तुम गौ को छोड़ दो और मेरे खून से अपनी तृप्ति कर लो ॥६५॥

हर्यक्षोऽसौ नृपतिवचनेऽवोचदित्थं प्रहृष्टो
राजन्नेषा भवति सफला ते कृता या परीक्षा।
धेन्वा सार्धं निजगुरुगृहं साम्प्रतं याहि शीघ्रं
कीर्तिं सृष्टौ हिममिव सितामायुगं त्वं लभस्व ॥६६॥

तब शेर राजा के वचन से प्रसन्न होकर इस प्रकार बोला कि हे राजन्, मैंने जो परीक्षा आपकी की है इसमें तुम सफल हो गए हो। अब तुम गौ के साथ शीघ्र ही अपने गुरु के घर

चले जाओ और युगपर्यन्त बर्फ के समान सफेद कीर्ति को प्राप्त करो ॥६६॥

एवं भर्तर् भवसि विहितो रक्षणार्थं हिमाद्रे-
रेनं पात्वा भव सुविदितः कौ यथाऽभूद्दिलीपः ।
शत्रूनेतान् जहि कुचरितान् राक्षितुं स्वीयरक्ष्यं
कालोऽभीष्टो भवति करयोर्वीरतां दर्शयस्व ॥६७॥

हे पतिदेव, तुम्हें भी हिमालय की रक्षा के लिए नियुक्त किया गया है। तुम इसकी रक्षा करके पृथ्वी में दिलीप के समान प्रसिद्धि को प्राप्त करो। अपने रक्ष्य की रक्षा करने के लिए इन खोटे चरित्र वाले शत्रुओं को मार दो। उपयुक्त समय आपके हाथ में है, अपनी बहादुरी दिखाओ ॥६७॥

शुभ्राः कूटा गगनतलतः सन्दिशन्तीव नित्यं
सर्वान् देशान् "भवतु भवतां मानसं छद्मयुक्तम्" ।
दुष्टः किन्तु प्रिय न कुरुते सज्जनोक्तिं स्वकर्णे
सोऽतः शत्रुः कपटकुशलो दण्डनीत्यैव बोध्यः ॥६८॥

हिमालय के सफेद शिखर आकाश से सदा ही सब देशों को यह सन्देश देते हैं कि आपका मन छल-कपट से दूर होना चाहिए। परन्तु दुष्ट आदमी सज्जन की बात को नहीं सुनता है। इसलिए कपट से भरपूर उस शत्रु को दण्डनीति से ही समझाना पड़ेगा ॥६८॥

इति तृतीयः सर्गः समाप्तः

अथ चतुर्थः सर्गः



दण्ड्यो नूनं प्रियतम खलो नैव तत्रास्ति दोषो
लत्तासाध्यो न भवति वशे भाषितो नम्रवाचा ।
सीमातीतं भवति न वरं सौहृदं सज्जनानां
देशोऽस्माकं सकलमनुजानीक्षते स्वात्मतुल्यान् ॥१॥

हे प्रियतम, दुष्ट आदमी को दण्ड देने में कोई दोष नहीं होता है। लात के भूत नम्रता की बातों से नहीं मानते हैं। सज्जन पुरुषों की सीमा से बढ़ कर सज्जनता अच्छी नहीं होती है। हमारे देशवासी तो सब लोगों को अपने समान ही देखते हैं ॥१॥

भर्तर्दुष्टो भवति मशकोऽभ्यर्णमायात्यबोधं
क्रन्दन् क्रन्दन् श्रवणकुहरे चेहते स प्रवेशम् ।
हस्तेनाऽसौ सपदि मनुजैस्ताड्यते क्षुद्रकीटो
नो चेद् विष्टो वपुषि कुटिलो भूरि कुर्यादनर्थम् ॥२॥

हे पतिदेव, मच्छर बहुत दुष्ट होता है, वह बिना जाने ही पास आ जाता है और क्रन्दन करता करता कान के छेद में

घुसना चाहता है। लोग उस नीच कीट को हाथ से ताड़ कर शीघ्र ही परे हटा देते हैं। अन्यथा यदि वह शरीर में प्रवेश कर जाए तो बड़ा भारी अनर्थ कर सकता है ॥२॥

कान्ताऽन्यायं जगति परमं पाण्डवैर्धार्तराष्ट्रा
एवं चक्रुर्हितकरवचोऽधारयन्नैव कर्णे।
अन्ते युद्धं प्रियतम तदा पाण्डुपुत्रा अजैषुः
श्रित्वा धर्मं भयविरहिता भारतं ते शशासुः ॥३॥

हे पतिदेव, कौरवों ने पाण्डवों के साथ बड़ा अन्याय किया, उन्होंने उनके हितकारी वचन को बिल्कुल भी नहीं सुना। अन्त में पाण्डव युद्ध में जीत गए और फिर उन्होंने निडर होकर धर्म का सहारा लेकर भारत पर राज्य किया ॥३॥

ह्यूनत्साङ्गः समनयदितः संस्कृतिं कान्त दिव्यां
तामालोक्य प्रिय मनुजता शिक्षिता वैरिभिस्तैः।
विस्मृत्यैतेऽखिलमुपकृतं भापयन्तेऽस्त्रमत्ता
एभ्यः शिक्षां सुजनसुलभां दोर्बलेन प्रदेहि ॥४॥

ह्यूनत्साङ्ग हमारे देश से सुन्दर संस्कृति को ले गया, उन शत्रुओं ने उसे देखकर ही मनुष्यता सीखी थी। अब यह हमारे सारे उपकारों को भूलकर अस्त्रों के घमण्डी हमें डरा रहे हैं। तुम अपने बाहुओं की शक्ति से इन्हें अच्छे लोगों की शिक्षा दो ॥४॥

ज्ञानं लब्ध्वा भरतसुभुवोऽप्यागता धर्षितुं तां
तस्मान्नैषां प्रियतम मुखं दर्शनीयं कदाचित् ।
तुभ्यं भर्तर् लगतु शपथो मा समागच्छ गेहं
यावन्नैते सकलरिपवः सङ्क्षयं यान्ति युद्धे ॥५॥

हमारे देश से ज्ञान प्राप्त कर के यह उस पर ही आक्रमण करने के लिये आ गये। इस लिये इनका कभी मुह भी नहीं देखना चाहिये। हे पतिदेव, तुम्हें कसम लगे कि जब तक यह सारे शत्रु युद्ध में मारे न जाएं तुम घर मत आओ ॥५॥

सङ्घे द्रष्टुं परजनपदैः सार्धमेनं प्रयत्नो
भूयो भूयो जगति विहितः को न जानाति तथ्यम् ।
चेत् साफल्यं न नयनगतं नास्ति दोषोऽस्मदीयः
कर्मैवास्य प्रभवति यथा सर्वलोके घृणाऽस्ति ॥६॥

राष्ट्रसंघ में दूसरे देशों के साथ इसे भी बैठाने के लिये हमने बार बार प्रयत्न किया। संसार में इस सचाई को कौन नहीं जानता है। यदि अब तक सफलता न मिली तो इसमें हमारा क्या दोष है? इसके काम ही ऐसे हैं कि सारा संसार इससे घृणा करता है ॥६॥

नाम प्रोक्तं प्रियतम यदा कर्तुमेनं सदस्यं
सर्वे देशाः परमकुपिता उत्थिता आसनेभ्यः ।
नायं योग्यो भवति सुगुणैः स्थातुमस्माभिरस्मि-
न्नैवं नैवं प्रतिनिधिवराः सावधाना भवन्तुः ॥७॥

जब हमने इसे सदस्य बनाने के लिये इसका नाम लिया तो सब देशों के प्रतिनिधि क्रोध में खड़े हो गये और कहने लगे कि यह हमारे साथ इस राष्ट्रसंघ में बैठने के योग्य नहीं है। ऐसा नहीं हो सकता, नहीं हो सकता, हे प्रतिनिधियो! सावधान हो जाओ ॥७॥

प्राप्स्यत्येव प्रियतम पदं राष्ट्रसङ्घे कदाचित्
क्षिप्तं बीजं न फलरहितं कान्त दृष्टं क्वचिन्नः।
एतेनैवं व्यवहृतिरियं या कृता धृष्टतायाः
कीलो भूत्वा हृदयपटले साऽऽयुगं तोत्स्यते नः ॥८॥

हे पतिदेव, यह कभी न कभी राष्ट्रसंघ में स्थान प्राप्त कर ही लेगा क्योंकि हमारा फेंका हुआ बीज कहीं भी निष्फल नहीं हुआ है। परन्तु इसने हमारे साथ जो यह धृष्टता का व्यवहार किया है यह हमारे हृदय में कील बन कर सदा हमें चुभता रहेगा ॥८॥

एतद्राष्ट्रं सकलजगतो मङ्गलं कर्तुकामं
सर्वान् देशान्निगदति मिथो द्वेषिणो नो भवन्तु।
भ्रातृत्वे यत् सुखमिह जनाः शत्रुभावे न तत् स्याद्
गर्वलिप्ताः परमतिशठाः कान्त नायान्ति मार्गे ॥९॥

हमारा राष्ट्र सारे संसार की भलाई करना चाहता है और इसी भावना में सब देशों को कहता है कि आप आपस में द्वेष न करें, हे लोगो! जो भाईचारे में सुख

है वह शत्रुता में नहीं हो सकता। परन्तु घमण्डी मूर्ख लोग ठीक रास्ते पर नहीं आते हैं ॥९॥

अस्त्रागारे स्वरिपुभयदः सङ्ग्रहो नायुधानां
कान्ताऽस्माभिर्भवति विहितः संसृतौ शान्तिकामैः ।
सम्प्रत्येतत् सकलमनुजैः स्वीकृतं स्वीयजाड्यं
शस्त्राभावे स्वभरतभुवं रक्षितुं सक्षमा न ॥१०॥

हे पतिदेव, संसार में शान्ति की चाहना से हम ने अपने अस्त्रभण्डार में अपने शत्रुओं को भय देने वाला शस्त्रों का संग्रह भी नहीं किया। परन्तु अब सब वर्ग के लोगों ने अपनी इस भूल को स्वीकार कर लिया है। अस्त्र-शस्त्रों के अभाव में हम भारतभूमि की रक्षा नहीं कर सकते ॥१०॥

वित्तं नष्टं कथमपि भवेदाहृतौ नायुधाना-
मेतत् सर्वं जनहितकृते रक्षितं नोऽस्तु देशे ।
आशीदेषा प्रियतम शुभा धारणेहाऽस्मदीया
किन्तु क्षुद्राः सुजनचरिते विघ्नमेवाचरन्ति ॥११॥

अस्त्र-शस्त्रों के संग्रह में राष्ट्र के धन का नाश न हो, यह सब लोगों की भलाई के लिये ही सुरक्षित रहना चाहिये। अपने देश में हमारा यह बड़ा अच्छा विचार था परन्तु नीच लोग भले लोगों के काम में विघ्न ही पैदा करते हैं ॥११॥

शीघ्रं कृत्वा प्रहरणधनं साम्प्रतं हस्तयोर्नः
स्थास्यामोऽथो निजचरणयोः संसृतिर्द्रक्ष्यतीदम् ।
एतं कालं कथमपि पते सावधानो नयेथा
हत्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥१२॥

हम अपने देश में अस्त्र-शस्त्र रूपी धन को अपने हाथ में करके शीघ्र ही अपने पैरों पर खड़े हो जाएंगे, सारा संसार इस सचाई को देखेगा। हे पतिदेव, आप इस समय को जैसे-तैसे सावधान हो कर विताएं। आप शत्रुओं को मार कर घर आएंगे तो मैं आप का स्वागत करूंगी ॥१२॥

सर्वे देशा विविधविधिभिः प्रस्तुता योगदाने
सत्यं नस्ते प्रहरणधनान्युद्यताः सन्ति दातुम् ।
याच्ञा किन्तु प्रियतम न मे रोचते स्तोकमात्रा
नोच्चैः शीर्षं भवति दयिताऽन्याश्रितानां नराणाम् ॥१३॥

सारे देश अनेक प्रकार से हमें सहयोग देने के लिये तैयार हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह अस्त्र-शस्त्र तथा धन सब कुछ ही हमें देने के लिये तैयार हैं। परन्तु हे पतिदेव, मांगना तो मुझे जरा भी अच्छा नहीं लगता। दूसरों के सहारे पर जो लोग रहते हैं उनका सिर कभी ऊंचा नहीं होता ॥१३॥

अस्माकं या भवति शुभदा विश्वभ्रातृत्वनीति-
स्तेनैवैते सकलसुविधा दातुमिच्छन्ति कान्त ।
एकश्चीनः कपटकुशलो दुष्टपाकेन सार्धं
नैवाबोधत् सरलहृदयान् भारतीयान् प्रमादी ॥१४॥

हमारी सारे संसार को भाई समझने की जो नीति है उसीके कारण वे हमें सारी सुविधाएं देने को तैयार हैं। प्रमाद करने वाला तथा कपटी चीन ही एक ऐसा देश है जो दुष्ट पाकिस्तान के साथ मिल कर सरल हृदय वाले हम भारतवासियों को न समझ सका ॥१४॥

कस्याप्यग्रे कथमपि पते नैव हस्तौ प्रसार्यौ
शस्त्रास्त्राणां वयमपि धिया निर्मितौ सक्षमाः स्मः ।
युद्धं जेतुं परशरणगैः शक्यते नैव भर्तः
शीघ्रं भाव्यं प्रहरणकृतौ स्वावलम्बे निविष्टैः ॥१५॥

हे पतिदेव, कोई वस्तु मांगने के लिये किसी के भी आगे हाथ नहीं पसारने चाहिये। हम भी अपनी बुद्धि से अस्त्र-शस्त्रों की रचना करने में समर्थ हैं। दूसरों की शरण में जा कर युद्ध नहीं जीता जा सकता है। हमें अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण में शीघ्र ही स्वावलम्बी हो जाना चाहिये ॥१५॥

दूरे नास्ति प्रिय स समयः शस्त्रनिर्माणदक्षा
विज्ञानज्ञाः प्रखरमतयो मानदा भारतस्य ।
शस्त्रैः सर्वैः सफलगतिभिर्दूरमारैर्नवीनै-
रेतद्राष्ट्रं सकलजगतः स्थापयिष्यन्ति शीर्षे ॥१६॥

हे पतिदेव, वह समय दूर नहीं है जब कि तीव्र बुद्धिवाले, शस्त्रों की रचना में चतुर, भारत के लिये मान पैदा करने वाले हमारे वैज्ञानिक सफल गति वाले तथा दूर तक मार करने वाले आधुनिक अस्त्र-शस्त्रों का उत्पादन कर के इस राष्ट्र को सारे संसार के ऊपर कर देंगे ॥१६॥

प्रज्ञाऽपूर्वा प्रिय भवति नः साम्प्रतं तत्प्रयोगः
कार्यः शीघ्रं सकलपुरुषैः सर्वतोदत्तचित्तैः ।
विज्ञानज्ञा ददतु हृदयं स्वीयकार्येषु दक्षा
एवं सर्वे दयित कृषकाः क्षेत्रकार्ये रताः स्युः ॥१७॥

हे पतिदेव, हमारी बुद्धि अनोखी है, अब सब लोगों को सब ओर ध्यान दे कर उसका प्रयोग करना चाहिये। चतुर वैज्ञानिक अपने काम में अपना दिल लगाएं और इसी प्रकार किसान अपनी खेती के काम में जुट जाएं ॥१७॥

विज्ञाने नः प्रियतम गतिः संसृतौ स्याद् विशिष्टा
लोकित्वा यां सकलधरणी विस्मितेवेह भूयात् ।
पूर्वे काले निखिलभुवने यादृशी ख्यातिरासीत्
सैवाऽस्माभिः पुनरखिलकौ शीघ्रमेवार्जनीया ॥१८॥

हे पतिदेव, विज्ञान में हमारी गति सारे संसार में अनोखी होनी चाहिये जिसे देख कर सारी धरती विस्मित हो जाए। प्राचीन काल में सारे संसार

में जैसी हमारी प्रसिद्धि थी उसीको हमने फिर प्राप्त करना है ॥१८॥

वृष्टेर्बाणान् युधि नृपतयश्चिक्षिपुर्वह्निबाणा-
नेतत्सर्वं भवति विदितं प्राक्तनात् स्वेतिहासात् ।
शक्तिः साऽद्य क्वचिदपि गता नैव मन्यस्व भर्तर्
जाताऽदृश्या परकरगतं भारतं वीक्ष्य राष्ट्रम् ॥१९॥

युद्धों में राजा लोग कोई वर्षाबाण चलाते थे तो कोई अग्निबाण छोड़ते थे। यह सब कुछ हमें अपने प्राचीन इतिहास से प्रतीत होता है। हे पतिदेव, आप इस बात को मान लें कि वह शक्ति आज कहीं चली नहीं गई है अपितु भारत को पराधीन देख कर कुछ समय के लिये आंखों से ओझल हो गई थी ॥१९॥

रामेणैवं जलधितरवश्चन्द्रबाणेन विद्धाः
सुग्रीवस्य प्रियतम हृदि प्रत्ययं कर्तुमेतम् ।
शक्तो हन्तुं सरलविधिना बालिनं मित्र तेऽरिं
साहाय्यं मे कुरु हरिपते जानकीमार्गणे त्वम् ॥२०॥

हे पतिदेव, राम ने सुग्रीव के मन में अपनी बहादुरी का विश्वास पैदा करने के लिये एक ही तीर से सात पेड़ों को बींध दिया था। राम ने ऐसा कर के कहा था कि हे सुग्रीव, मैं तेरे शत्रु वाली को बड़ी आसानी से मार सकता हूं। तुम सीता के ढूंढने में मेरी सहायता करो ॥२०॥

चक्रेणैवं यदुकुलसखश्छादयामास भानुं
लीनं ज्ञात्वा झटिति कपटी "जैद्रथः" प्रादुरासीत्।
अर्कः शीघ्रं नभासि किरणैर्दर्शयामास तेजः
पार्थेनापि स्वनिशितशरैः संहतः स्वीयवैरी ।२१॥

इसी प्रकार महाभारत के युद्ध में यदुकुल के मित्र कृष्ण ने अपने सुदर्शनचक्र से सूर्य को ढांप लिया था तो कपटी जयद्रथ सूर्य को अस्त हुआ जान कर शीघ्र ही युद्ध के मैदान में आ गया। तब आकाश में सूर्य ने शीघ्र ही अपनी किरणों से प्रकाश दिखाया। अर्जुन ने भी अपनी प्रतिज्ञा निभाने के लिये शीघ्र ही अपने तीखे वाणों से उस अपने शत्रु जयद्रथ को मार दिया ।।२१।।

विज्ञानस्य प्रियतम गतिर्यादृशी पूर्वकाले
राष्ट्रेऽभून्नः पुनरपि वयं तादृशीमर्जयामः।
येनाऽस्माकं सकलभुवने भीतिराच्छादिता स्यात्।
कश्चिच्छत्रुर्न निजचरणं भारते धर्तुमिच्छेत् ।२२॥

हे पतिदेव, प्राचीनकाल में विज्ञान की जैसी हमारी उन्नति थी हम अपने राष्ट्र में उसीको फिर प्राप्त कर रहे हैं जिससे सारे संसार में हमारा डर फैल जाय और कोई भी शत्रु भारत की भूमि पर पैर रखने का हौंसला न करे ।।२२।।

अण्वस्त्राणां विहितकृतयो भापयन्ति प्रियाऽस्मान्
दुष्टा एते वयमपि परं नैव पश्चाद् भवामः ।
अण्वज्ञा नो झटिति रचनां कर्तुमर्हन्ति तेषा-
माज्ञाऽपेक्षा भवति मतिमन् सर्वकारस्य तेभ्यः ॥२३॥

यह दुष्ट अणु अस्त्रों की रचना करके हमें डरा रहे हैं परन्तु हे पतिदेव, हम भी किसी से पीछे नहीं हैं। अणुविद्या को जानने वाले हमारे वैज्ञानिक भी शीघ्र ही उन अणु अस्त्रों की रचना कर सकते हैं। उन्हें केवल सरकार की ओर से आज्ञा मिलने की ही देर है ॥२३॥

कार्यं नैव प्रियतम चिरं साम्प्रतं भारतीयै-
रण्वस्त्राणां त्वरितरचनाऽऽवश्यकी राष्ट्रहेतोः ।
कालोपेक्षा भवति भयदा सर्वथा मानवानां
भाग्यान्नूनं पतिवर वयं चेतनां प्राप्तवन्तः ॥२४॥

हे पतिदेव, अब भारवासियों को विलम्ब नहीं करना चाहिये। राष्ट्र की भलाई के लिये अणु अस्त्रों की रचना शीघ्र ही अत्यन्त आवश्यक है। समय की लापरवाही मनुष्यों के लिये बहुत भयानक होती है। हमारे भाग्य बड़े अच्छे थे कि हमें समय पर चेतना मिल गई ॥२४॥

नास्माभिश्चेद् दयित सपदि स्वीकृतः कालमन्त्रो
नैवाप्स्यामः कथमपि तदा स्थायिनीं शान्तिमत्र ।
दिष्टो ब्रूते कुरुत रचनामायुधानामणूनां
भीतिर्यस्माद् भवतु महती वैरिणां कम्पयित्री ॥२५॥

हे पतिदेव, यदि हमने काल के मन्त्र को अर्थात् समय की मांग को स्वीकार न किया तो हम यहां अपने देश में स्थायी शान्ति को प्राप्त नहीं कर सकते। समय पुकारता है कि अरे भारतवासियो, अणु-शस्त्रों की रचना करो जिससे हमारे भय के मारे शत्रु कांपने लग जाएं ॥२५॥

स्फोटस्तेषां प्रिय जलनिधौ शीघ्रमेव प्रकार्यो
विश्वासः स्यात् सकलजगते भारतं निर्बलं न
शक्तौ सत्यां न भवति भयं शत्रवः स्युः कियन्तः
क्षिप्रे कार्ये क्वचिदपि बुधाः कुर्वते नो विलम्बम् ॥२६॥

फिर उन परमाणु बमों का समुद्र में विस्फोट करना चाहिए जिससे सारे संसार को विश्वास हो जाय कि भारत दुर्बल नहीं है। शक्ति के होने पर कहीं से भी भय नहीं होता चाहे शत्रु कितने भी क्यों न हों। पण्डित आदमी जल्दी किये जाने वाले काम में कभी भी देर नहीं करते हैं ॥२६॥

अभ्रेऽस्माकं ध्वनिगुरुजवं वाहनं वीक्ष्य वायो-
र्भीतिं यास्यन्त्यखिलरिपवः पातयद् वज्रतुल्यान्।
भूमौ तेषामसुहरबमानेकदैवातिसङ्ख्यान्
दूरे नास्ति प्रिय स समयः प्रत्ययं मे कुरुष्व ॥२७॥

शब्द के समान तेज चाल वाले हमारे हवाईजहाज जब आकाश में उड़ेंगे और शत्रु की भूमि पर उनके प्राणों को

हरने वाले एक ही समय में वज्र के समान अनगिनत बमों को बरसाएंगे तो हमारे सब शत्रु डर जाएंगे। हे पतिदेव, वह समय अब दूर नहीं है, आप मेरा विश्वास करें ॥२७॥

यानान्येवं दिवि गरुडवत्प्रोत्पतन्ति प्रियाऽथो
शत्रुव्यालान् भयमनुगतान् द्रावयिष्यन्ति दूरे ।
दृष्यं दृष्ट्वा प्रिय तदतुलं मंस्यतेऽर्कोऽद्भुतं खे
दूरे नासौ भवति समयः प्रत्ययं मे कुरुष्व ॥२८॥

आकाश में गरुड के समान उड़ते हुए हमारे हवाई जहाज डरे हुए शत्रु रूपी सांपों को दूर भगा देंगे। उस दृश्य को देखकर आकाश में सूर्य भी विस्मय मनाएगा। हे पतिदेव, वह समय अब दूर नहीं है, आप मेरा विश्वास करें ॥२८॥

यानान्येवं दयित गगने मल्लवद् द्रक्ष्यसि त्वं
प्लायिष्यन्ते सकलरिपवः प्राणभीत्याऽतिदूरे ।
नैनां भूमिं क्वचिदपि तदा लोकितारोऽरयो नो
दूरे नासौ भवति समयः प्रत्ययं मे कुरुष्व ॥२९॥

हे पतिदेव, आप आकाश में उड़ते हुए अपने हवाई जहाजों को पहलवानों के समान देखोगे। उस समय सब शत्रु प्राणों के भय से दूर भाग जाएंगे। तब हमारे शत्रु कहीं भी इस भूमि को नहीं देखेंगे। वह समय अब दूर नहीं है, आप मेरा विश्वास करें ॥२९॥

वायोः सेना परमभयदा वैरिणामन्तकर्त्री
लोके ख्यातिं सपदि बलवँल्लप्स्यते शीघ्रमेव ।
गास्यत्यस्याः सकलभुवनं विश्रुताः कान्त गाथा
दूरे नासौ भवति समयः प्रत्ययं मे कुरुष्व ॥३०॥

हे बहादुर पतिदेव, शत्रुओं का अन्त करने वाली हमारी वायुसेना शीघ्र ही संसार में प्रसिद्धि प्राप्त कर जाएगी। सारा संसार इसकी प्रसिद्ध कथाओं को गाएगा। वह समय अब दूर नहीं है, मेरा विश्वास करो ॥३०॥

"राडारा" नश्चतुररचिता दर्शयिष्यन्ति रेखा-
माकाशे चेत्क्वचिदपि भवेदुत्पतच्छत्रुयानम् ।
व्यत्स्यत्येतद् गगनविहरल्लक्ष्यवेधी सुविज्ञो
दूरे नासौ भवति समयो धैर्यवान् संयुगे स्याः॥३१॥

यदि आकाश में कहीं पर शत्रु का लड़ाकू जहाज उड़ता होगा तो हमारे चतुर वैज्ञानिकों के द्वारा बनाए हुए राडार उसका पता लगा लिया करेंगे। तब आकाश में घूमते हुए इस लड़ाकू विमान को हमारा निशानेबाज बीन्ध देगा। हे पतिदेव, वह समय अब दूर नहीं है, आप युद्ध में धीरज धारण करें ॥३१॥

प्राचीनेऽपि प्रिय समभवन् कोविदा लक्ष्यवेधे
बिम्बं दृष्ट्वा सपदि निशितं चिक्षिपुर्ये स्वमस्त्रम् ।
विव्याधाक्षि प्रियतम तिमेराकृतिं वीक्ष्य तोये
पार्थो वीरः सदसि महतीं शूरकीर्तिं तदाप्नोत् ॥३२॥

हे पतिदेव, प्राचीन समय में भी निशाना वीन्धने की विद्या में चतुर बहादुर हुए हैं जो परछाईं को देखकर ही अपने तेज अस्त्र को फैंक देते थे। अर्जुन ने पानी में मच्छली की आकृति को देखकर उसकी आँख को वीन्ध दिया था और इस प्रकार उसने सभा में वीरों के समान यश को प्राप्त किया था ॥३२॥

भिल्लोऽरण्ये दयित युगपत्सप्तबाणैरविध्य-
ल्लघ्वीं जिह्वां वनगतशुनः पूजयन् द्रोणमूर्तिम् ।
कुर्वाचार्यः परमचकितः पाण्डवाश्चापि सर्वे
गत्वा लव्यं गहनविपिनेऽद्राक्षुरभ्यासलग्नम् ॥३३॥

वन में द्रोण की मूर्ति को पूजते हुए भील बालक ने जंगल में आए हुए कुत्ते की छोटी सी जीभ को एक ही वार सात बाणों से वीन्ध दिया था। ऐसा देखकर द्रोणचार्य और सब पाण्डव बहुत विस्मित हुए और उन्होंने घने जंगल में जाकर शस्त्र-विद्या का अभ्यास करते हुए एकलव्य को देखा था ॥३३॥

अद्याप्येवं कुशलपुरुषा लक्ष्यवेधे प्रवीणा-
स्तेषामस्त्रं न भवति वृथा प्रेरितं शत्रुयाने ।
भूमौ बिद्धो निपतति यथा व्याधबाणेन पक्षी
छिन्नं शीघ्रं स्वपिति भुवि तच्चालकेनैव सार्धम् ॥३४॥

आज भी भारत में निशाना बीन्धने में चतुर बहादुर वर्तमान हैं। शत्रु के हवाई जहाज पर छोड़ा हुआ उनका अस्त्र कभी

व्यर्थ नहीं जाता है। जैसे शिकारी के बाण से बिन्धा हुआ पक्षी धरती पर गिर जाता है इसी प्रकार हमारे निशानची से बिन्धा हुआ वह शत्रु का यान चालक के साथ ही धरती पर गिर जाता है ।।३४।।

गर्जिष्यन्ति प्रिय जलनिधौ भीतिदा युद्धपोता
वीच्यास्फालैः स्वविकटरिपूनाह्वयन्तः सकाशम् ।
भीतास्तेभ्यो दलितहृदया नागमिष्यन्ति पार्श्वे
दूरे नासौ भवति समयो मा त्यजाऽतः स्वधैर्यम् ।।३५।।

लहरों के थपेड़ों से अपने विकट शत्रुओं को पास बुलाते हुए, शत्रु को भय पैदा करने वाले हमारे युद्धपोत समुद्र में गर्जना करेंगे। उनसे डरे हुए शत्रु हमारी मातृभूमि के पास नहीं आएंगे। हे पतिदेव, वह समय अब दूर नहीं है इसलिये तुमने धीरज को नहीं छोड़ना ।।३५।।

अम्भःसेना जलधितटगा गर्जिता भीमनादं
शस्त्रास्त्राणां विकटनिनदः श्रोष्यते सर्वदिक्षु ।
अभ्यासस्था भयदमकरैः सैनिकाः खेलितारो
दूरे नास्ति प्रिय स समयो धैर्यभङ्गो न तेऽस्तु ।।३६।।

समुद्र के तट पर रहने वाली हमारी जलसेना भयानक गर्जना करेगी। अस्त्र-शस्त्रों का भयानक शब्द सब दिशाओं

में सुनाई देगा। अभ्यास करते हुए हमारे जलसैनिक भयानक मगरमच्छों के साथ खेलेंगे। हे प्रियतम, वह समय अब दूर नहीं है, तुमने अपना धीरज न छोड़ना ॥३६॥

पोतान् हृत्वा स्वकुटिलरिपोः शम्बरे नाशयन्तो
नीचैरुच्चैः पुनरपि पुनर्मज्जनं कर्तुकामाः ।
कर्तारस्ते झटिति पयसा वाहनं रिक्तपूर्णं
क्रीडिष्यन्ति प्रिय बहुविधाः सागरे भीतिखेलाः ॥३७॥

हमारे जलसैनिक अपने कुटिल शत्रु के जहाज को हर कर जल में नष्ट करते हुए ऊपर-नीचे बार बार डुबकी लगाने की इच्छा से अपनी पनडुब्बी को कभी पानी से खाली करेंगे और कभी पानी से भरा करेंगे। इस प्रकार वह समुद्र में भयानक खेलें खेलेंगे ॥३७॥

सेनाऽस्माकं सपदि भविता सज्जितेयं नवीनैः
शस्त्रैरेवं विकटभयदा कान्त सत्यं रिपूणाम् ।
देशः कश्चित् कथमपि तदा तोत्स्यते नो न राष्ट्रं
दूरे नायौ भवति समयः साहसं धारयस्व ॥३८॥

हमारी सेना नए शस्त्रों से सजी हुई शीघ्र ही शत्रुओं के लिये भय पैदा करने वाली हो जाएगी। तब कोई भी देश हमारे राष्ट्र को तंग नहीं करेगा। हे पतिदेव, वह समय अब दूर नहीं है, तुम हौंसला रखो ॥३८॥

निश्चिन्तेयं दयित भविता मातृभूरस्मदीया
दृष्ट्वा वीरानतुलबलिनः सैनिकाँस्तान् स्थलस्य ।
श्रुत्वा नादं सकलरिपवः कम्पितारस्तदानीं
तेषां छागो वधिकमिव भो वेपमानो विलोक्य ॥३९॥

हमारी स्थलसेना के उन वहादुर सैनिकों को देख कर यह हमारी मातृभूमि निश्चिन्त हो जाएगी। उनकी गर्जना को सुन कर सभी शत्रु इस प्रकार काँपेंगे जैसे कसाई को देखकर वकरा कांपता है ॥३९॥

टैङ्कासीनाः शमनभयदाः सैनिका अस्मदीया
दृष्ट्या तेषामसुभयहृता शत्रवो निःश्वसन्तः ।
कृत्वा हा ! हा ! पुनरपि पुनस्ताडयिष्यन्ति शीर्षं
कुत्रागत्य स्वयमिव गता मृत्युदंष्ट्रास्वभाग्यात् ॥४०॥

टैंकों में बैठे हुए हमारे सैनिक यमराज के समान भयानक होंगे, उनकी दृष्टि से प्राणों के भय के मारे श्वासों को छोड़ते हुए शत्रु हा ! हा ! करते हुए बार बार अपने सिर को पीटते हुए कहेंगे कि हम खोटे भाग्य से यहां कहां आ कर मौत के मुंह में पड़ गये हैं ॥४०॥

क्षोण्याः कम्पो दयित भविता पादघातेन तेषां
हुङ्कारैर्वा गगनमखिलं पूरितं स्यात् तदानीम् ।
शौर्यश्लाघ्या अथ सुचरिताः सैनिका अस्मदीयाः
ख्यातिं शीघ्रं सकलभुवने नूनमाप्स्यन्ति कान्त ॥४१॥

हे प्रियतम, उनके पैर पड़ने से धरती कांपेगी और हुंकृति से सारा आकाश भर जाएगा। बहादुर होने के साथ साथ ऊंचे चरित्र को धारण करने वाले हमारे सैनिक शीघ्र ही सारे संसार में प्रसिद्धि प्राप्त कर लेंगे ।।४१।।

सङ्ख्या शत्रोर्भवतु महती नास्ति चिन्ताऽस्य काचित्
पादैरेव स्वरिपुशलभान् मर्दयिष्यन्ति वीराः ।
आस्ते सिद्धिः प्रियतम गुणेऽपेक्षते सा न सङ्ख्यां
पञ्चैवाघ्नन् शतमपि पुरा पाण्डवा धार्तराष्ट्रान् ॥४२॥

शत्रु संख्या में भले ही बहुत हों इसकी हमें कोई चिन्ता नहीं है। हमारे बहादुर पैरों से ही अपने शत्रुरूपी टिड्डी-दल को मसल देंगे। सिद्धि गुणों में रहती है, वह संख्या पर निर्भर नहीं करती। प्राचीन समय में केवल पांच पाण्डवों ने संख्या में सौ होने वाले कौरवों को मार दिया था ।।४२।।

चीनाऽऽक्रान्तिः शुभवरसमा ज्ञास्यते कान्त नूनं
सुप्ता एभिर्निखिलमनुजा बोधिता भारतस्य ।
लोके सत्यं पतिवर मतं दैवयोगात् कदाचिद्
दुष्टैर्लोकैर्वरजनकृते सङ्कटं लाभकारि ॥४३॥

हे पतिदेव, चीन का आक्रमण एक वरदान के बराबर समझा जाएगा। इन चीनियों ने सोए हुए हम सब लोगों को जगा दिया। कभी कभी दुष्ट लोगों के द्वारा भले आदमियों के लिये पैदा किया गया सङ्कट दैवयोग से लाभकारी सिद्ध होता है ।।४३।।

वामं कार्यं भवति वरदं कान्त लोके कदाचित्
सीतां हृत्वा पतिवर न चेद्रावणोऽसावनेष्यत् ।
रक्षोध्वंसः कथमपि तदा सम्भवो नाभविष्य-
त्त्यक्त्वा चिन्तामवहिततरः प्राप्तकालं कुरुष्व ।।४४।।

हे पतिदेव, संसार में कभी कभी कोई उल्टा काम वरदायक सिद्ध होता है। यदि रावण सीता को चुरा कर न ले जाता तो राक्षसों का नाश न होता। तुम चिन्ता को छोड़ कर और सावधान हो कर समय के अनुसार काम करो ।।४४।।

पार्थो वीरो यदि न विकलः सम्प्रहारेऽभविष्यद्
गीतां पुण्यां कथमपि तदाऽश्रावयिष्यन्न कृष्णः ।
सृष्टौ ख्याताः प्रियतम वयं कारणादत्र तस्या
नौदासीन्यं भवतु हृदये वैरिणां धृष्टतायाः ।।४५।।

यदि महाभारत के युद्ध में अर्जुन मोहग्रस्त न होता तो कृष्ण ने गीता को न सुनाया होता। आज उस गीता के कारण हम सारे संसार में प्रसिद्ध हैं। इस लिये शत्रु की धृष्टता के कारण आपके हृदय में उदासी नहीं होनी चाहिये ।।४५।।

अत्याचारान् प्रियतम न चेदाङ्गलाश्चाकरिष्यन्
स्वातन्त्र्यार्थं भरतभुवि नोऽजागरिष्यन्न लोकाः ।
चीनैः क्रूरैरुपकृतिरिवाऽकारि शस्त्रं गृहीत्वा
भर्तः कोऽपि प्रखरबलवान् योत्स्यते नो भविष्ये ।।४६।।

यदि अंग्रेज लोग अत्याचार न करते तो भारत के लोग स्वतन्त्रता के लिये न जागते। इन क्रूर चीनियों ने हाथ में शस्त्र ले कर हमारा उपकार ही किया है। हे पतिदेव, अब भविष्य में कोई बड़े से बड़ा बलवान् शत्रु भी हमारे साथ युद्ध नहीं करेगा ।।४६।।

अस्माकं या मनसि निहिता धारणा शान्तिमूला
शस्त्रास्त्राणां प्रिय न गरिमा नैव सेनाबलस्य ।
एषाऽस्थास्यत् परमभयदा मातृभूमेर्भविष्ये
चीनाक्रान्त्या प्रियतम वयं ज्ञानमाप्ता नवीनम् ।।४७।।

हमारे मन में जो ऐसा विचार था कि शान्ति ही अच्छी होती है इस लिये अस्त्र-शस्त्र तथा सैनिक शक्ति का कोई महत्त्व नहीं है, यह धारणा मातृभूमि के भविष्य के लिये बहुत भयानक सिद्ध होती। चीन के आक्रमण ने हमें नया ज्ञान दे दिया ।।४७।।

लोके कश्चित् प्रिय न भविता नूनमागामिकाले
पश्येद् योऽस्मान् कलुषितदृशाऽसत्यदर्पेण लिप्तः ।
कश्चित्किन्तु भ्रममनुगतो धृष्टतामाश्रयेच्चे-
देषा चेष्टा दयित फलिता स्वात्मघातं नु तस्य ।।४८।।

हे पतिदेव, भविष्य में ऐसा कोई भी शत्रु न होगा जो झूठे घमण्ड से भरा हुआ हमें मैली आंख से देखे।

यदि भ्रममें पड़ा हुआ कोई ऐसी धृष्टता करेगा भी तो उसकी यह चेष्टा आत्महत्या के बराबर होगी ।।४८।।

उग्रां शक्तिं प्रियतम वयं शीघ्रमेवार्जयामः
सेनाऽस्माकं स्थलजलखगाऽजेयतां यास्यतीयम् ।
दूरे नासौ भवति समयः साहसं धारयेथा
एनं कालं कुरु निजवशे वैरिणो मर्दयित्वा ।।४९।।

हे पतिदेव, हम शीघ्र ही उग्र शक्ति को प्राप्त कर रहे हैं। हमारी जल, स्थल और नभ सेना शीघ्र ही अजेय बन जाएगी। वह समय अब दूर नहीं है, तुम हौंसला रखो। अपने शत्रुओं को मसल कर इस सङ्कटकाल को जैसे-तैसे अपने वश में कर लो ।।४९।।

जानाम्येव प्रिय कठिनतां यादृशीमाश्रितस्त्वं
किन्तूत्साहो भवति विपुलः क्लिष्टता तेऽस्तु कामम् ।
धैर्ये त्वत्के दयित विजयो निश्चितो मातृभूमे-
र्हत्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ।।५०।।

हे पतिदेव, मैं जानती हूं कि आप कितनी कठिनाई में हैं किन्तु तुम्हारे अन्दर बहुत बड़ा उत्साह है, सङ्कट चाहे कितना भी बड़ा क्यों न हो। आपके धीरज में ही मातृभूमि की विजय निश्चित है। आप शत्रुओं को मार कर जब घर आएंगे तो मैं आपका स्वागत करूंगी ।।५०।।

लङ्कादैत्यान् कुशलकपयः प्रस्तरैरेव जघ्नुर्
नाकाङ्क्षा तैः प्रियतम कृता राघवादायुधानाम् ।
ध्यात्वा सर्वं चिरपरिणतं पूर्वकालस्य वृत्तं
शौर्ये ख्यातो भव मम पते रामवंशेऽसि जातः ॥५१॥

चतुर वानरों ने लङ्का के राक्षसों को पत्थरों से ही मार दिया था, उन्होंने रामचन्द्र से शस्त्रों की मांग नहीं की थी। आप इस चिरकाल के प्राचीन वृत्तान्त का ध्यान करके अपनी प्रसिद्धि प्राप्त करो क्योंकि आपकी उत्पत्ति भी तो रामवंश से ही सम्बन्ध रखती है ॥५१॥

यत्स्वाधीन्यं प्रिय नयनगं वर्तते बाल्यकाले
नास्याऽवस्था भवति बलवन् साम्प्रतं षोडशीया ।
साक्षात्कारो दयित विपदो जायते यस्य बाल्ये
तस्याः शीर्षे भवति चरणं तस्य भो यावदायुः ॥५२॥

हे पतिदेव, हमारी स्वाधीनता अभी बचपन में ही है, इस की अवस्था सोलह वर्ष की भी नहीं हुई। जिस मनुष्य के सिर पर बचपन में ही विपत्ति आ जाती है उसका पैर आयु-पर्यन्त विपत्तियों के सिर पर ही रहता है ॥५२॥

बाल्यावस्था भवति सुखिनी यस्य मर्त्यस्य लोके
स्वल्पे कष्टे यदि स पतितो दूयते तस्य चित्तम् ।
शङ्क्वभ्यस्तौ प्रिय न चरणौ सीदतो ग्रावमार्गे
कष्टाराध्या वयमपि पते प्रातुमर्हाः स्वभूमिम् ॥५३॥

इसके विपरीत जिस मनुष्य का बचपन सुख से बीता हो वह यदि थोड़े से भी कष्ट में पड़ जाए तो उस का मन घबरा जाता है। कांटो के अभ्यासी पैर पत्थरों में दुःखी नहीं होते हैं। इस लिये कष्ट झेलने का अभ्यास होने पर ही हम भी अपनी मातृभूमि की रक्षा कर सकते हैं ॥५३॥

धाराघातैः कठिनगिरयो वज्रपातं सहन्ते
किन्तूद्याने सुखपरिचितं हन्ति वृक्षं नभस्वान् ।
कार्योऽभ्यासो दयित नितरामापदो भूरि सोढुं
स्वातन्त्र्यं स्यात् प्रियतम तदा रक्षितं नोऽत्र लोके ॥५४॥

पानी की धाराओं के पड़ने से कठोर पहाड़ वज्रपात को भी सहन कर जाते हैं परन्तु बाग में सुख के अभ्यासी पेड़ को वायु नीचे गिरा देती है। हे पतिदेव, हमें लगातार कठिनाई झेलने का अभ्यास डालना चाहिये तब ही हमारी स्वतन्त्रता सुरक्षित रह सकती है ॥५४॥

प्राप्तेः कष्टात् किल दशगुणं रक्षणे कृच्छ्रमस्ति
क्लिष्टा रक्षा न भवति यदि प्रापणं नीरसं स्यात् ।
जानास्येव प्रिय च सकलं नास्ति गुह्यं तवैत-
ज्ज्ञात्वैवं स्या दृढतमभुजो रक्षणार्थं स्वभूमेः ॥५५॥

किसी वस्तु की प्राप्ति के कष्ट से उसकी रक्षा करने में दशगुणा अधिक कष्ट होता है। यदि रक्षा करने में कठिनाई का सामना न हो तो वस्तु की प्राप्ति का कोई

आनन्द नहीं होता। हे पतिदेव, आप सब बातों को जानते हैं, आप से कोई बात छिपी हुई नहीं है। इस लिये मातृभूमि की रक्षा करने के लिये दृढ भुजाओं वाले बनो ॥५५॥

एते कामं कुटिलरिपवो धृष्टतां दर्शयेयुः
सूचीमात्रामपि करगतां कर्तुमेते न शक्ताः।
भूमिं यत्र प्रियतम वली विद्यसे सैनिकैस्त्वं
जेता भूत्वा सुविमलयशा गेहमागच्छ शीघ्रम् ॥५६॥

हे पतिदेव, ये कुटिल शत्रु चाहे कितनी भी धृष्टता क्यों न दिखाएं, जहां पर आप जैसा बहादुर दूसरे सैनिकों के साथ खड़ा है, वे वहां एक सूई के बराबर भी हमारी धरती को नहीं ले सकते। आप विजयी हो कर और निर्मल यश प्राप्त कर के शीघ्र घर चले आओ ॥५६॥

ओजः स्रोतो भवसि बलवन् देहि शक्तिं परेभ्यो
दृष्ट्वा शौर्यं तव सहचरा आप्नुयुर्विक्रमं स्वम्।
ईर्वारुश्चेत् प्रिय परिणतो वाटिकायां स्वरागे
शीघ्रं सर्वे तदनुसरणं किं न कुर्वन्ति तत्र ? ॥५७॥

हे बहादुर पतिदेव, आप शक्ति के स्रोत हैं इस लिये दूसरों को भी शक्ति दो। आपकी वीरता देख कर आपके साथी भी अपने पराक्रम को प्राप्त कर लेंगे। यदि बगीची में

एक खरबूजा अपने रंग में बदल जाए तो क्या दूसरे शीघ्र ही उसकी नकल नहीं कर लेते हैं ? ॥५७॥

आलस्यं चेद् भवति युधि ते भूर्यनर्थस्तदा स्यात्
पादाङ्केषु प्रियतम यतो गन्तुमिच्छन्ति सर्वे ।
कूर्देथास्त्वं सपदि हरिवद् वैरिवातायुसङ्घे
हत्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥५८॥

यदि युद्ध में तुम आलस्य दिखाओगे तो बड़ा भारी अनर्थ होगा क्योंकि आपके चरण-चिन्हों पर ही सब चलना चाहते हैं। इस लिये तुम शत्रुरूपी हिरणों के झुण्ड में शेर के समान कूद पड़ो। शत्रु को जीत कर जब तुम घर आओगे तो मैं आप का स्वागत करूंगी ॥५८॥

गौरा युष्मान् परमबलिनः सिन्धुपारं निनिन्युर्
युद्धार्थं ते विकटरिपुभिस्तत्र तस्यावसाने ।
कीर्तिः प्राप्ता सकलभुवने सैनिकैरस्मदीयैर्
नश्चेद् भूमिः परकरगता कान्त लज्जास्पदं तत् ॥५९॥

अंग्रेज अपने शत्रुओं से लड़ने के लिये आप जैसे बहादुर सिपाहियों को समुद्र के पार ले जाते रहे हैं। हमारे सिपाहियों ने लड़ाई के अन्त में सारे संसार में यश प्राप्त किया है। हे पतिदेव, अब यदि मातृभूमि का कोई भाग शत्रु के हाथ में चला गया तो बड़ी लज्जा की बात होगी ॥५९॥

तस्मिन् काले न निजवशगा मातृभूमिर्न आसी-
दाज्ञा राज्ञां शिरसि भवतामाङ्गलानामतिष्ठत् ।
एवं शौर्यं प्रियतम तदा दर्शितं चेद् भवद्भिः
शक्तास्त्रातुं कथमिव वरां नात्मभूमिं भवन्तः ? ॥६०॥

उस समय हमारी मातृभूमि स्वतन्त्र नहीं थी। अंग्रेज राजाओं की आज्ञा आप के सिर पर थी। यदि उस समय आपने इतनी बड़ी वीरता दिखाई थी तो आप आज अपनी श्रेष्ठ मातृभूमि की रक्षा कैसे नहीं कर सकते हैं ? ॥६०॥

स्वातन्त्र्ये स्यात् किमधिकबलं पारतन्त्र्ये पते वा ?
स्वीया भूमिर्भवति सुखदा कान्त किं वा परेषाम् ? ।
युद्धं भर्तः स्थितमिह पुरो हेतवे मातृभूमेः
स्वीकृत्यैतत् सुदृढमनसा शस्त्रमादेहि हस्ते ॥६१॥

हे पतिदेव, भला स्वतन्त्रता में अधिक शक्ति होती है या परन्त्रता में ? अपनी भूमि सुखदायक होती है या दूसरों की ? आज मातृभूमि के हेतु आपके सामने युद्ध आया है। आप पक्के मन के साथ इसे स्वीकार करके हाथ में शस्त्र ले लो ॥६१॥

ध्यात्वा सर्वं गहनमनसा योजना योजनीया-
स्तादृक् किञ्चिद् भवतु न पते लज्जितं मे मनः स्यात्।
एवं कार्यं पुनरपि रिपुर्नोन्नमेत् स्वीयदृष्टिं
भग्नं शीर्षं यदि न फणिनो दंष्ट्रमायाति भूयः ॥६२॥

गम्भीर मन से सब कुछ सोच कर योजनाएं बनानी चाहिये। कोई ऐसी बात न हो जिस से मेरा मन लज्जित हो। कोई ऐसा उपाय करो जिससे शत्रु फिर अपनी दृष्टि न उठाए। यदि सांप के सिर को अच्छी तरह न फोड़ा जाए तो वह फिर डंग मारने के लिये आ जाता है ॥६२॥

कारुण्येन स्वरिपुमयि चेन्मुञ्चसे युद्धभूमौ
पश्चात्तापः सकलवयसे मानसे स्यात् प्रविष्टः।
श्लिष्ट्वा हस्तौ शुचि पत पते मन्यसे मे न वाचं
कालो यातो भवति करयोर्नैव यत्नैरसङ्ख्यैः ॥६३॥

हे पतिदेव, यदि आप दयालु बन कर युद्धभूमि में अपने शत्रु को छोड़ दोगे तो सारी आयु के लिये आपके मन में पश्चात्ताप रहेगा। यदि मेरी बात को नहीं मानते हो तो पश्चात्ताप में हाथों को मल कर शोक में गिरना होगा। बीता समय अनगिनत यत्न करने पर भी वापस हाथ में नहीं आता ॥६३॥

शत्रुस्त्यक्तो भवति भयदः कान्त जानन्ति लोका
अर्जित्वाऽसौ पुनरपि बलं योद्धुकामः समैति।
प्रत्यक्षस्त्वे भवति निहितः पूर्वकालः प्रमाणं
भूयास्तस्मान्मलिनमनसां वैरिणां प्राणहर्ता ॥६४॥

सब लोग जानते हैं कि शत्रु छोड़ा हुआ भयानक होता है। वह शक्ति इकट्ठी कर के फिर युद्ध करने की इच्छा सें आ जाता है। बीता समय इस बात का साक्षात् प्रमाण है।

इस लिये हे पतिदेव, दूषित मन माले शत्रुओं के प्राणों का नाश करने वाले बनो ॥६४॥

पृथ्वीराजो विजयमनसं मर्षयामास गौरिं
नासौ मेने परमकुटिलः कान्त किन्तूपकारम् ।
लब्धा कालं पुनरपि रिपू रन्ध्रमासाद्य राज्ञः
पादन्यासं छलबलयुतो भारते नश्चकार ॥६५॥

पृथ्वीराज ने विजय की इच्छा वाले मुहम्मद गौरी को क्षमा कर के छोड़ दिया था परन्तु उस कुटिल ने राजा के इस उपकार को कुछ भी न समझा। वह शत्रु समय पा कर महाराजा की त्रुटि देख कर फिर आ गया और छल-बल से भारतभूमि पर पैर जमा लिये ॥६५॥

पाकश्चापि प्रियतम सदा भाषते नो विरुद्धं
दुष्टश्चीनो यदि न मथितः सोऽपि कुर्यात् प्रमादम् ।
शिक्षा देया कुटिलरिपवे शिक्षणं स्यात् परेषां
कश्चिद् भूयो नहि खलमतिर्लोकितुं नः क्षमः स्यात् ॥६६॥

हे प्रियतम, यह पाकिस्तान भी सदा ही हमारे प्रतिकूल बोलता रहता है। यदि दुष्ट चीन को दण्ड न दिया तो हो सकता है यह भी प्रमाद करे। इस कुटिल शत्रु को ऐसी शिक्षा दो जिससे दूसरों को भी शिक्षा मिले। फिर कोई भी दुष्ट बुद्धि वाला शत्रु हमें देखने का साहस न करे ॥६६॥

एकः शत्रुर्भवति दलितः नापरे साहसं स्या-
त्तस्मात् भर्तः शलभसदृशा वैरिणो लोपनीयाः ।
एवं पाकः स्वविकटफणां दर्शिता नो भ्रमस्थः
सत्यं सर्वं निगदति पते साम्प्रतं मेऽन्तरात्मा ॥६७॥

यदि एक शत्रु को अच्छी तरह मसल दिया जाय तो दूसरे का आक्रमण करने का हौंसला नहीं होता है। इस लिये टिड्डी-दल के समान इन बैरियों को नष्ट कर दो। इस प्रकार भ्रम में पड़ा हुआ पाकिस्तान अपनी फिण को नहीं उठाएगा। हे पतिदेव, मेरी अन्तरात्मा सब कुछ सच ही बोल रही है ॥६७॥

पाकः स्फोटो भवति जनितोऽरुन्तुदो राष्ट्रपृष्ठे
निर्गच्छन्तो दयित रचनामाङ्गलाश्चक्रुरस्य ।
शान्त्या सुप्तं कथमपि भवेद् भारतं नास्मदीयं
सोऽयं मन्ये कुटिलहृदयस्तोत्स्यते चीनवन्नः ॥६८॥

यह पाकिस्तान हमारे राष्ट्र की पीठ पर पीड़ा पैदा करने के लिये फोड़ा तैयार किया गया है। जाते जाते अंग्रेज इसको बना गये जिससे भारत कभी भी शान्ति से न सो सके। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि कुटिल हृदय वाला यह पाकिस्तान भी हमें चीन की तरह ही तंग करेगा ॥६८॥

सेनाराज्यं प्रियतम यथा दृश्यते पाकदेशे
तस्य ध्वंसो दयित नियतोऽभ्यन्तरे दिक्समासु ।
क्षीये वह्नौ स्वयमपि पते भस्मसाद् द्रक्ष्यतेऽयम्
कालो दूरे न भवति यदाऽऽलोकिता सर्वलोकः ॥६९॥

हे पतिदेव, पाकिस्तान में जिस प्रकार सैनिक जुण्डली का शासन चल रहा है इसके अनुसार दस वर्ष के अन्दर ही इसका नाश हो जाएगा। यह पाकिस्तान अपनी जलाई हुई आग में अपने आप ही भस्म हो जाएगा। वह समय अब दूर नहीं है जब कि सारा संसार यह सभी कुछ देखेगा ॥६९॥

पाश्चात्पोऽयं परमघृणया लोचते पूर्वपाकं
मध्यद्रोहो दयित भविता तस्य विध्वंसहेतुः ।
भारोऽस्माकं प्रियतम लघुर्वैरिजः स्यात् तदायं
कालो दूरे न भवति गिरस्तथ्यतां लोकितुं मे ॥७०॥

पश्चिमी पाकिस्तान पूर्वी पाकिस्तान को बहुत घृणा की दृष्टि से देखता है। इन दोनों के मध्य में होने वाला विद्रोह ही पाकिस्तान के नाश का कारण बनेगा। हे प्रियतम; तब हमारा शत्रुओं का भार भी कम हो जाएगा। वह समय अब दूर नहीं जब आप मेरी भविष्यवाणी की सचाई को देखोगे ॥७०॥

धर्मेणान्धा मतिविरहिताः शासकाः पाकभूमेर्
नो बोधन्ते दयित निनदं कालभेर्या इदानीम् ।
कोऽप्यद्यत्वे न भवति नृपः शासितुं खड्गशक्त्या
दीर्घं कालं निजजनगणं संसमर्थः कदापि ॥७१॥

हे पतिदेव, पाकिस्तान के ये धर्मान्ध बुद्धिहीन शासक समय की आवाज को नहीं समझ रहे हैं। आज कोई भी शासक अपनी जनता पर तलवार के बल पर अधिक देर शासन नहीं कर सकता है ॥७१॥

अम्रीकाया भवति पदलिट् कुत्सितः पाकदेशो
दत्त्वाऽस्त्राणि प्रिय स कुरुते प्रत्यहं तं प्रमत्तम् ।
"सीटो नाटो" सितजनपदाः प्रेरयन्ते तथैनं
युद्धाकाङ्क्षा भवति बहुला भारतेनास्य कान्त ॥७२॥

यह नीच पाकिस्तान अमरीका के पैर चाटता है और इसके बदले वह (अमरीका) इसे हर रोज हथियार दे कर पागल बना रहा है। 'सीटो' 'नाटो' वाले सब देश भी इसे प्रेरणा दे रहे हैं। इस लिये इस पाकिस्तान की भारत के साथ युद्ध करने की चाह बढ़ती ही जा रही है ॥७२॥

पाकस्यान्तो दयित भविता दुष्कृतैरस्य घोरैर्
देशः कोऽपि प्रियतम तदा रक्षितुं न प्रभुः स्यात् ।
पक्षेऽस्माकं भवतु समयो वर्धतां बाहुशक्तिर्
दूरे नासौ भवति दिवसः कान्त सत्यं वदामि ॥७३॥

हे पतिदेव, इस पाकिस्तान का अपने घोर पापों से ही अन्त हो जाएगा। तब कोई भी देश इसे बचाने में समर्थ न हो सकेगा। समय को हमारे पक्ष में हो लेने दो और बाजुओं को भी बलशाली होने दो। अब वह दिन दूर नहीं है। मैं सच ही बता रही हूं ॥७३॥

इति चतुर्थः सर्गः समाप्तः ॥

अथ पञ्चमः सर्गः

ध्यायं ध्यायं स्वजननभुवं मानसं मोदते मे
वन्या रम्या गिरिपरिवृता सम्पदां वर्षिणीव ।
सस्यश्यामा विमलसलिला शोभना सर्वभूमि-
र्नैते गृध्राः कथमपि पते पादमस्यां धरेयुः ॥१॥

अपनी मातृभूमि का बार-बार ध्यान करके मेरा मन बहुत प्रसन्न होता है । पहाड़ों से घिरा हुआ सुन्दर बनों का समूह मानों सम्पत्ति को बरसाता है । खेती से हरी-भरी, निर्मल जल वाली सारी भूमि बहुत ही सुन्दर है । हे पतिदेव, यह गीध इस पर पैर न रखें ॥१॥

कृष्टा भूमिः फलति कनकं कर्षकैर्यस्य धीरै-
र्वस्वापूर्णाः सकलगिरयः सन्ति लोके प्रसिद्धाः ।
सेवन्ते यं स्वत्रिविधसुखायर्तवो वारशः षट्
देशो नायं कथमपि भवेत् पांसुलः शत्रुदृष्ट्या ॥२॥

जिसकी भूमि धीर किसानों से बोई हुई सोना उगलती है और जिसके सब पहाड़ धन से भरे हुए संसार में प्रसिद्ध

हैं। छः ऋतुएं अनेक प्रकार के सुख के लिए जिसकी वारी वारी से सेवा करती हैं, हे पतिदेव, यह देश शत्रु की दृष्टि से किसी भी प्रकार दूषित न हो ॥२॥

यस्य क्षोणिर्दयित सकलाऽथाद्भुता पुष्पभारै-
रेवं सर्वं भवति गगनं तारकैर्भ्राजमानम् ।
अन्तर्भागः स्वदुघगिरिभिः शोभते सर्वकालं
नायं देशो भवतु करयोः साम्प्रतं वैरिणां नः ॥३॥

जिसकी सारी धरती फूलों के भार से अद्भुत है, इसी प्रकार सारा आकाश तारों से सुशोभित है और मध्य भाग धन को दोहने वाले पहाड़ों से हर समय शोभा देता है, हे पतिदेव! ऐसा यह देश अब हमारे शत्रुओं के हाथ में न जाने पाए ॥३॥

राष्ट्रस्यास्य प्रिय च तुलना संसृतौ नैव दृष्टा
जन्मादातुं सकलविबुधाः कामयन्ते पतेऽस्मिन् ।
लोकस्यायं हितकरगुरुर्ज्ञायते दीर्घकाला-
देतं दुष्टा अधमचरणैर्दूषितं नैव कुर्युः ॥४॥

संसार में इस राष्ट्र की तुलना का कोई भी देश नहीं है। सारे देवता इसमें जन्म लेने की कामना करते हैं। प्राचीन काल से ही यह संसार का हितकारी गुरु जाना जाता है। इसे यह दुष्ट अपने नीच चरणों से दूषित न करें ॥४॥

एकं धर्मं सकलमनुजा आश्रयन्ति प्रकृत्या
सिन्धुं लोके निखिलसरितो यान्ति भर्तर्यथेह ।
यस्य ख्यातिर्भवति भुवि नः 'सैकुलेरे'ति नाम्ना
देशं नेमं भवतु सफलः स्प्रष्टुमेषोऽद्य वैरी ॥५॥

इस देश में सब लोग स्वभाव से ही जहां एक धर्म का सहारा लेते हैं जैसे सारी नदियां समुद्र में प्रवेश करती हैं, जो धर्म यहां 'सैकुलर' नाम से प्रसिद्ध है. ऐसे इस देश को आज शत्रु स्पर्श करने में सफल न हो ॥५॥

शुक्ला कीर्तिर्भवति वितता संसृतौ यस्य भर्तः
शान्तेर्मार्गे चिचलिषति यत्सर्वदा सौम्यरूपम् ।
यस्मिन् स्थातुं विमलमतयो देवताः कामयन्ते
नेदं गच्छेदधमकरयोर्भारतं पुण्यराष्ट्रम् ॥६॥

जिसकी सफेद कीर्ति सारे संसार में फैली हुई है. जिसका सौम्य रूप है और जो सदा ही शान्ति के मार्ग पर चलना चाहता है। हे पतिदेव ! ऐसा यह पवित्र भारत राष्ट्र नीच शत्रु के हाथ में न जाने पाए ॥६॥

इच्छत्याशा दयित सकला लोकितुं मित्रवद्यो
यस्यालोके निखिलभुवनं वीक्षते ज्ञानमार्गम् ।
यत्प्रज्ञैवं प्रहरति तमो जाड्यजं सर्वसृष्टे-
र्नेमं देशं पतिवर रिपुः स्प्रष्टुमेयाद् भयाढ्यः ॥७॥

हे पतिदेव, जो सब दिशाओं को मित्र की दृष्टि से देखना चाहता है, सारा संसार जिसके प्रकाश में अपने ज्ञान-मार्ग को देखता है और जिसकी बुद्धि सारी पृथ्वी के अन्धकार को दूर करती है ऐसे इस देश को आप के भय से शत्रु स्पर्श करने के लिये न आए ॥७॥

सेनाशक्तिर्भवति महती वैरिणो नोऽद्य भर्तर्
दम्यः शत्रुः कुटिलहृदयो योजनाभिः सतर्कम् ।
दत्ते भूरि प्रियतम फलं चिन्तयित्वा कृतं यत्
स्थित्वैकान्तेऽखिलजनरलैर्मन्त्रणा कान्त कार्या ॥८॥

हे पतिदेव, आज शत्रु की सैनिकशक्ति बहुत बड़ी है, कुटिल हृदय वाले उस शत्रु का बड़ी सावधानी से योजना बना कर दमन करना। जो काम अच्छी तरह सोच-विचार कर किया जाए उसका अधिक फल मिलता है। आपने एकान्त में बैठ कर सब जनरलों से सलाह कर लेना ॥८॥

स्युर्विश्वासे निजजनरला वैरिणः स्वान् निहन्तुं
भेदो न स्यात् क्वचिदपि पते सैन्यसङ्घेऽस्मदीये ।
एको मन्त्रो भवति फलदः कान्त जानीहि सत्यं
मत्या ऐक्ये दयित सकलां संसृतिं जेतुमर्हाः ॥९॥

अपने शत्रुओं को मारने के लिये सभी जनरल विश्वास में होने चाहिये। हमारी सेना में कहीं भी कोई भेदभाव नहीं

होना चाहिये। हे पतिदेव, सच समझो कि एक ही मन्त्र फलदायक होता है वह यह है कि सम्मति की एकता में हम सारे संसार को भी जीत सकते हैं ॥९॥

आख्याभेदो भवति भुवि नः 'कैप्टनो मेजरो' वा
सर्वे सन्ति प्रियतम सुताः सैनिका मातृभूमेः।
संज्ञार्थं न क्वचिदपि भवेत् सैन्यपङ्क्तौ विरोधो
मातुर्दृष्टौ सदृशगतयः स्वात्मजाः सर्वदैव ॥१०॥

हमारे देश में 'कैप्टन' या 'मेजर' यह केवल संज्ञा का ही भेद है। सभी सैनिक मातृभूमि के बहुत ही प्यारे पुत्र हैं। हमारी सेना में संज्ञा के लिये किसी प्रकार का विरोध नहीं होना चाहिये। माता की दृष्टि में अपने सब पुत्र सदा एक ही जैसे होते हैं ॥१०॥

आदायार्थं रिपुजनपदान्मुञ्चते यः स्वमार्गं
मातुः शत्रुं प्रति च नयते गोपनीयं स्वकीयम्।
नैवं क्षुद्रः कुटिलपुरुषो मर्षणीयः कदाचि-
त्तस्मै देयः सबलमनसा केवलं मृत्युदण्डः ॥११॥

जो शत्रु के देश से धन ले कर अपने मार्ग को छोड़ देता है और मातृभूमि के शत्रु तक अपनी गुप्त बातों को ले जाता है, ऐसे नीच कुटिल पुरुष को कभी क्षमा नहीं करनी चाहिये। उस पापी को निडर मन से मौत का दण्ड ही देना चाहिये ॥११॥

भीतिर्बाह्याद् भवति न तथा स्वान्तरङ्गाद् यथाऽऽस्ते
सर्वं वेत्ति प्रिय स सदने गुप्तमस्तु प्रकामम् ।
तस्मात्तस्य प्रियतम गतिः सावधानं निरीक्ष्या
शङ्का काचिद् यदि हृदि तदा मस्तकं खण्डनीयम् ॥१२॥

बाहरी शत्रु से इतना भय नहीं होता जितना बीच के शत्रु से होता है। वह घर की सारी बातों को जानता है चाहे वह कितनी ही गुप्त क्यों न हों। इस लिये हे पतिदेव, ऐसे आदमी की चाल-ढाल बड़ी सावधानी से देखनी चाहिये। यदि हृदय में कोई शङ्का पैदा हो तो उसके सिर को काट देना चाहिये ॥१२॥

पुंसो देहे स्वभुवि निवसन् राष्ट्रदंशाय सर्पो
देशद्रोही क्वचिदपि पते नैव दृष्टौ न आयात् ।
हस्तात्तस्य प्रियतम जलं नास्ति पानस्य योग्यं
मातुः शत्रुं शमपतु यमः प्रार्थनेयं ममाऽस्ति ॥१३॥

मनुष्य के देह में अपनी भूमि पर रहता हुआ राष्ट्र को डंग मारने के लिये ऐसा देशद्रोही रूपी सांप कभी भी हमारी दृष्टि में नहीं आना चाहिये। उसके हाथ का पानी भी पीने के योग्य नहीं होता है। मातृभूमि के ऐसे शत्रु को यमराज नष्ट कर दे यही मेरी प्रार्थना है ॥१३॥

यत्नोऽस्माकं भवति सकलैर्मित्रतामेव कर्तुं
सर्वा आशाः कपटरहितैरक्षिभिर्लोकयामः ।
एते दुष्टा न शुभमनसाऽधारयन् कान्त सख्यं
मैत्री दुष्टे विगलति यथा मूत्रितं वालुकासु ॥१४॥

हम सब के साथ मित्रता रखने का ही यत्न करते हैं, सब दिशाओं को कपटरहित आंखों से ही देखते हैं। परन्तु इन दुष्टों ने हमारी मित्रता को अच्छे मन से ग्रहण नहीं किया। दुष्ट के साथ मित्रता इस प्रकार लुप्त हो जाती है जैसे रेत में किया मूत्र लुप्त हो जाता है ॥१४॥

प्राचीनेऽपि प्रियतम शुभा नीतिरासीत्तटस्था
मन्त्रेष्वेवं भवति लिखितं पश्य वेदान् पते त्वम् ।
आश्रित्यैतां जनगणसखोऽघोषयज्ज्वाहरोऽयं
कोऽप्यस्माकं न भवति रिपुः सन्ति मित्राणि सर्वे ॥१५॥

हे पतिदेव, प्राचीन काल में भी हमारी यही शुभकारक तटस्थ नीति थी। आप वेदों को देखें, मन्त्रों में इसी प्रकार लिखा हुआ है। इस वैदिक नीति के आधार पर ही मानवमात्र के मित्र श्री जवाहर लाल ने यह घोषणा की है कि हमारा कोई भी शत्रु नहीं है, सब ही मित्र हैं ॥१५॥

शान्तिर्लाभं जनयति पते केवलं शान्तिमद्भ्यो
दुष्टास्तस्या नहि परिचिता दण्डनं कान्त तेषाम् ।
लाभं दत्ते सकलजगते कथ्यते सत्यमेत-
च्छाठ्यं कुर्याद्‌ यदि न कुटिले मन्यते नैव धृष्टः ॥१६॥

शान्ति, शान्ति वालों के लिये ही लाभ पहुंचाती है, दुष्ट शान्ति को नहीं पहचानते हैं। उनको तो दण्ड देना ही सारे संसार के लिये लाभकारी होता है। यदि दुष्ट के साथ दुष्टता न की जाय तो धृष्ट आदमी कभी भी ठीक रास्ते पर नहीं आता है ॥१६॥

युद्धासक्ता बहुजनपदा वारिता भारतेना-
स्माकं शब्दो निखिलजगता सुश्रुतः सावधानम् ।
किन्त्वेतेन प्रिय शमयुताः पातिता युद्धगर्ते
गर्वं भित्त्वा सपदि सदनं भर्तरायाहि शत्रोः ॥१७॥

युद्ध में फंसे हुए बहुत से देशों को भारत ने पीछे हटाया। हमारी आवाज को सारे संसार ने बड़ी सावधानी से सुना। परन्तु इस चीन ने हमें युद्ध के गढ़े में धकेल दिया। हे पतिदेव, इस शत्रु के घमण्ड को चकनाचूर कर के शीघ्र ही घर चले आओ ॥१७॥

मिश्रे देशे घटितघटनां कोरियादेशवृत्तं
संसारोऽयं सकलमपि तद् वेत्ति सम्यक् पते मे ।
हस्तक्षेपं यदि तु मतिमाञ्ज्वाहरो नाकरिष्यत्
सर्वो लोको गहनसमरग्रस्त एवाभविष्यत् ॥१८॥

यह सारा संसार मिश्र देश की घटना को और कोरिया देश के समाचार को अच्छी तरह जानता है। यदि बुद्धिमान् श्री जवाहरलाल जी हस्तक्षेप न करते तो सारा संसार भयानक युद्ध में फंस गया होता ॥१८॥

लोकः सर्वो दयित कुरुतेऽनादरं शीतलानां
क्रूरस्याग्रे प्रभवति न ना कोऽपि गन्तुं बलेन ।
विज्ञानज्ञैः कुशलचरणैरिष्यते स्पर्श इन्दोः
कोऽप्यादित्यं प्रति न चकमे मृत्युभीतः प्रयातुम् ॥१९॥

हे पतिदेव, शीतल स्वभाव वाले लोगों का सारा संसार ही अपमान करता है, परन्तु क्रूर के आगे कोई भी मनुष्य जाने का उत्साह नहीं करता है। वैज्ञानिक अपने कुशल चरणों से चन्द्रमा का ही स्पर्श करना चाहते हैं। सूर्य के सामने तो कोई भी मनुष्य मौत के डर से जाना नहीं चाहता ॥१९॥

शान्ताङ्गारं स्पृशति मनुजः पाणिना सोपहासं
तर्जन्यापि प्रभवति परं स्प्रष्टुमुष्णं न कश्चित् ।
तस्मात्तस्य प्रकृतिमखिलां धारयेयुर्भवन्तो
येन स्प्रष्टुं न भवतु रिपुः सक्षमो देवभूमिम् ॥२०॥

मनुष्य ठण्डे अङ्गार (कोयले) को हंसी के साथ हाथ से छू लेता है; परन्तु गर्म अङ्गार को तो कोई तर्जनी से भी नहीं छू सकता। आप सैनिक लोग उस गर्म अंगारे वाले स्वभाव को ही धारण करें जिससे शत्रु हमारी देवभूमि को देख भी न सके ॥२०॥

यश्च व्यालो न भजति फणां भीयते नैव तस्मा-
दन्यं किन्तु प्रियतम जना मन्वते मृत्युमेव।
घोरं रूपं भवतु भवतो वैरिणां ध्वंसनार्थं
दृष्ट्वा यत्ते सकलरिपवः सङ्क्षयं यान्तु तत्र ॥२१॥

जिस सांप को फिण न हो उससे कोई भी नहीं डरता, परन्तु दूसरे (फिण वाले) को तो लोग मौत ही समझते हैं। आप शत्रु का नाश करने के लिये भयंकर रूप को धारण करें जिसे देख कर वहां सब शत्रु नष्ट हो जाएं ॥२१॥

एतत्सत्यं भवति मतिमन् शक्तिहीना जना ये
तेषां सर्वे सकलभुवने कुर्वते मानभङ्गम् ।
शक्तिर्येषां भवति भुजयोस्त्रासयन्ते जगत्ते
प्राप्तुं मानं जगति निखिले शक्तिमन्तो भवेम ॥२२॥

हे बुद्धिमान् पतिदेव, यह ठीक है कि जो लोग निर्बल होते हैं उनका सब जगह अनादर ही होता है, परन्तु जिन की भुजाओं में शक्ति हो उनसे सारा संसार डरता है। संसार में मान प्राप्त करने के लिये हमें शक्तिशाली बनना चाहिये ॥२२॥

शक्ता जीवाः प्रियतम सदा निर्बलान् भक्षयन्ति
श्रोतुं न्यायं भुवि न विधिनाऽकारि तेषां व्यवस्था ।
एको न्यायो भवति भुवने शासकाः शक्तिमन्त-
स्तस्माद् भर्तर् निजभुजबलं केवलं लाभदं स्यात् ॥२३॥

हे पतिदेव, बलवान् जीव निर्बल जीवों को खा लेते हैं। धरती पर विधाता ने उनका न्याय सुनने के लिये कोई व्यवस्था नहीं की है। संसार में एक ही न्याय है कि केवल बलवान् ही शासक होते हैं। इस लिये हे भर्ता, बल को प्राप्त करना ही लाभदायक हो सकता है ॥२३॥

सर्वे लोका अतिशयभयं कुर्वते सर्पजाते-
स्ताक्ष्र्यस्तेभ्यो भवति बलवान् दूरतस्ते द्रवन्ति।
सृष्टावस्यां दयित बलिनः केवलं मानमाप्ता-
स्तस्माद् भर्तर् बलमनुपमं भारतेनार्जनीयम् ॥२४॥

सब लोग सांपों का बहुत भय करते हैं परन्तु गरुड उनसे बलवान् होता है इस लिये वह उससे दूर भाग जाते हैं। इस संसार में केवल बलवान् लोगों ने मान पाया है। इस लिये हे भर्ता, भारतवासियों को अनुपम बलशाली होना चाहिये ॥२४॥

सर्वे लोकाः प्रबलबलिनां पुष्टिदाः सन्ति नित्यं
दृष्टः कश्चित्प्रिय न भुवने निर्बलानां सहायः।
वन्याग्नेर्यो भवति सखिवन्मातरिश्वा स भर्तः
शान्तं दीपं सपदि कुरुते निर्बलं नाथ मत्वा ॥२५॥

सब लोग बलवानों का ही सहयोग देते हैं, दुर्बल का कोई भी मित्र नहीं होता। जो वायु जङ्गल की आग का मित्र होता है वह दीपक को निर्बल समझ कर उसे बुझा देता है ॥२५॥

मार्तण्डस्य प्रखरकिरणैः शुष्कतां याति वापी
किन्त्वम्भोधेर्न भवति रविः शोषणेऽसौ समर्थः ।
तस्माद् भर्तर् भयदबलिनः सैनिका नो भवेयु-
र्यस्माच्छत्रुः कथमपि भुवं धर्षयेन्नास्मदीयाम् ॥२६॥

सूर्य की तेज किरणों से एक बौड़ी सूख जाती है, परन्तु वह सूर्य समुद्र को नहीं सुखा सकता है। इस लिये हे पतिदेव, हमारे सैनिकों को भयंकर बलशाली होना चाहिये जिससे शत्रु हमारी मातृभूमि का अपमान न करे ॥२६॥

यान्तु प्राणास्तव च वदनाद् दीनता किन्तु न स्या-
च्छत्रोरग्रे श्रवणविवरे मे वचो धारणीयम् ।
वृक्षो मूलाद् भवति पतितो वायुना युध्यमानो
नम्रं किन्तु प्रिय न तृणवज्जायते तस्य शीर्षम् ॥२७॥

हे प्रियतम, प्राण आपके भले ही चले जाएं परन्तु शत्रु के आगे दीनता न दिखाना, मेरी बात को अच्छी तरह कान में रख लेना। पेड़ वायु से लड़ता हुआ जड़ से उखड़ जाता है परन्तु तिनके के समान वह अपने सिर को नहीं झुकाता है ॥२७॥

देवाः पूर्वं रिपुभिरसुरैः पीडिता बल्लभाऽऽसन्
गत्वा विष्णुं प्रतिकृतिकृते पृष्टवन्तो विनम्राः ।
गुप्तं मन्त्रं स विबुधसखः पाठयामास देवा-
नेकीभूय प्रचुरबलिनो जेतुमर्हन्ति दैत्यान् ॥२८॥

हे पतिदेव, देवताओं को प्राचीन काल में शत्रु राक्षसों ने बहुत पीड़ित किया तो वह विष्णु के पास गये और बदला लेने के लिये नम्र हो कर उनसे पूछा तो देवताओं के मित्र विष्णु भगवान् ने उनको एक ही मन्त्र पढ़ाया कि आप एकता के द्वारा बलशाली हो कर ही दैत्यों को जीत सकते हैं ।।२८।।

ऐक्ये शक्तिर्भवति विबुधाः सन्तु तस्मिन्निबद्धा
दैत्यध्वंसं सुकरमिह चेत्कर्तुमिच्छन्ति सद्यः ।
एको मार्गो भवतु भवतां स्नेहसद्भावयुक्तो
नैवं किञ्चिज्जगति सकले स्यादसाध्यं तदा वः ।।२९।।

हे देवताओ ! यदि आप शीघ्र ही दैत्यों का नाश करना चाहते हैं तो एकता की शक्ति को समझ कर उसमें बँध जाएं । आप का प्यार और सद्भावना वाला एक ही रास्ता होना चाहिये । इस प्रकार सारे संसार में कोई भी काम करना आपके के लिये कठिन न होगा ।।२९।।

एको नेता भवतु भवतां स्वार्थहीनः सुविज्ञः
सर्वे यान्तु स्वयमपि ततस्तस्य निर्दिष्टमार्गे ।
दुःखं सर्वं सपदि विबुधा दूरतो वस्तदा स्यात्
सत्यां वाचं मनसि विमलेऽसंशयं धारयन्तु ।।३०।।

आप का एक ही नेता हो जो स्वार्थी न हो और बुद्धिमान् हो । फिर आप सभी उसके बताए हुए मार्ग पर चलें । हे

देवताओ, तब आपका सारा दुःख दूर हो जाएगा। आप अपने निर्मल हृदय में मेरी वाणी को विना किसी संशय के धारण कर लें ॥३०॥

पूर्वं गत्वा कुरुत विबुधा अर्जनं चण्डशक्ते-
रन्योन्यञ्चेद् भवति भवतां वैमनस्यं मनस्सु।
स्थित्वैकान्तेऽकपटमनसा कुर्वतां दूरतस्तत्
पश्चाद् युद्धे सरलविधिना वैरिणो लोपयन्तु ॥३१॥

हे देवताओ! पहले जा कर उग्र शक्ति प्राप्त करो। यदि आपके मन में कोई वैर-विरोध हो तो एकान्त में बैठ कर कपटरहित मन से उसे दूर करो फिर युद्ध में आसानी से शत्रुओं को मिटा दो ॥३१॥

एतद् वाक्यं श्रवणसुखदं ते निशम्याथ विष्णो-
र्देवा जग्मुर्निजनिजगृहं स्वस्थचित्ताः प्रहृष्टाः।
नेतारं स्वं प्रिय सुरपतिं सङ्गताश्चिच्युरेकं
हन्तुं दैत्यान् प्रहरणकरा वव्रजुः साभिमानाः ॥३२॥

विष्णु भगवान् के कानों को सुखदायक इस वचन को सुन कर देवता लोक स्वस्थ मन वाले तथा प्रसन्न हो कर अपने अपने घर को चले गये। उन्होंने इकट्ठा बैठ कर इन्द्र को अपना नेता चुना और फिर हाथ में शस्त्र ले कर बड़े अभिमान के साथ दैत्यों को मारने के लिये चल पड़े ॥३२॥

दृष्ट्वा तेषां दृढसमुदयं कम्पिताः सर्वदैत्या
योद्धुं शक्ता नहि समभवन् प्लायितुं चारभन्त ।
नादो देवैर्हत हत रिपून् सर्वतोऽकारि वीरै-
र्दैत्यानाञ्च प्रधनसमरे लोकितं रुण्डनृत्यम् ॥३३॥

उनके पक्के संगठन को देख कर सब दैत्य कांपने लगे। वह लड़ने में असमर्थ हो कर वहां से भागने लगे। तब बहादुर देवता सब ओर से 'शत्रुओं को मार दो, मार दो' इस प्रकार गर्जने लगे और उस भयङ्कर युद्ध में दैत्यों के कबन्ध (धड़) नाचने लगे ॥३३॥

विष्णोर्वाक्यं श्रवणकुहरे भारतीया धरेयु-
र्येनास्माकं न भवतु पते मानहानिः कदापि ।
शान्त्यालापा नहि रुचिकराः सन्ति मे कान्त सत्यं
गच्छन्त्वेते सपदि तपसे काननं मुक्तिकामाः ॥३४॥

हे पतिदेव, भारतवासियों को भी विष्णु भगवान् के इस वचन को कान में धारण कर लेना चाहिये जिससे हमारी कभी भी मानहानि न हो। हे कान्त, मैं सत्य कहती हूं कि मुझे शान्ति की बातें अच्छी नहीं लगती हैं। मुक्ति की इच्छा वाले यह लोग शीघ्र ही तपस्या के लिये जंगल को चले जाएं ॥३४॥

शान्तिः शान्तिः प्रिय विलपतां स्कन्धयोर्युद्धमाप्तं
दुष्टा एते प्रिय समभवँश्छिद्रमन्वेषयन्तः ।
एको मल्लो भवति वसनैरावृतोऽसावधानो
ग्रीवामन्यो धरति युधि चेत्का दशा तस्य नग्नः ॥३५॥

हे पतिदेव, 'शान्ति शान्ति' का प्रलाप करते हुए हम लोगों के कन्धों पर युद्ध आ गया। यह दुष्ट हमारी कोई न कोई त्रुटि ढूंढ रहे थे। मल्लयुद्ध में यदि एक पहलवान अपने वस्त्र पहन कर विना तैयारी के खड़ा हो और दूसरा यदि नंगा हो कर उसकी गर्दन को पकड़ ले तो भला पहले की क्या दशा होगी ॥३५॥

नाऽऽयाच्चाउर्मिलनमनसाऽभ्यागतो रन्ध्रमाप्तुं
गत्वा गेहे कपटहृदयो योजना योजयित्वा ।
आक्रान्तुं नः प्रियजनपदं सैनिकानादिदेश
स्थास्यत्यस्य प्रियतम कथा छद्मनो यावदर्कः ॥३६॥

चाऊ हमारे साथ मिलने की भावना से नहीं आया था वह तो हमारी त्रुटियों को देखने आया था। मन में कपट रख कर उसने कई योजनाएं बनाईं और हमारे प्यारे देश पर आक्रमण करने के लिये अपने सैनिकों को आदेश दे दिया। हे प्रियतम, इसके छल की कथा तब तक स्थायी रहेगी जब तक आकाश में सूर्य है ॥३६॥

एकं कष्टं भवति मनसि प्रत्यहं बाधते यत्
केचिल्लोकाः कुमतिपतिताः प्रान्तवादे निमग्नाः ।
मूढा अन्ये दधति कटुतां चाधिकृत्य स्वभाषाः
स्वार्थस्तेषां न भवतु पते कारणं खण्डनस्य ॥३७॥

मेरे मन में एक कष्ट है जो प्रतिदिन मुझे पीड़ा दे रहा है। हमारे देश के कुछ मूर्ख लोग प्रान्तों के झगड़ों में उलझे हुए हैं तो कुछ भाषाओं को ले कर एक दूसरे से विरोध करते हैं। हे पतिदेव, मुझे यह भय है कि उनका यह स्वार्थ कहीं हमारे देश के टुकड़े न कर दे ॥३७॥

देशोऽस्माकं भवति विटपी स्कन्धतुल्याः प्रदेशा
भाषा अस्य प्रियतम तथा सन्ति शाखाः सुरम्याः ।
भिन्ना धर्माः किल सुमनसः कान्त गन्धं वहन्त्यो
मूढा लोकाः परमिह विदुर्गौरवं नैकतायाः ॥३८॥

हमारा भारत देश एक बड़ा पेड़ है, इसके प्रान्त तनों के समान हैं। भाषाएं इसकी सुन्दर शाखाएं हैं, भिन्न भिन्न धर्म सुगन्ध वाले फूल हैं। परन्तु मूर्ख लोग एकता के महत्त्व को नहीं समझते हैं ॥३८॥

मद्रासे ये दयित रजसो लोकिता मातृभूमे-
स्ते काश्मीरे सुललितकणा भ्राजमाना भवन्ति ।
प्रान्तालापे किमपि निहितं दृश्यते नैव रम्यं
राष्ट्रं त्वेकं प्रियतम मतं भारतं सुन्दरं नः ॥३९॥

हे प्रियतम, मातृभूमि के धूलि के जो सुन्दर कण मद्रास में हैं वही काश्मीर में भी चमक रहे हैं। प्रान्तों के झगड़ों में कोई भी अच्छी चीज नहीं दिखाई देती। यह भारत हमारा एक ही सुन्दर राष्ट्र है ॥३९॥

अस्मिन् काले सकलमनुजैरेकता साधिता या
पश्याम्येनां युधि विरचितां कृत्रिमां कालयोग्याम्।
अस्या रूपं स्थिरमिव पते भारते सर्वदा चेत्
सर्वो लोकः प्रभवति न नो जेतुमन्ते युगस्य ।४०॥

इस समय जो एकता लोगों ने बनाई है, मैं समझती हूं कि यह युद्ध के समय में काल के अनुरूप बनाई गई बनावटी एकता है। हे पतिदेव, यदि इस एकता का रूप भारत में सदा के लिये स्थिर हो जाए तो हमें सारा संसार युग के अन्त में भी नहीं जीत सकता ॥४०॥

रूपं लोका विदधति च ये कृत्रिमं वञ्चनार्थं
विश्वस्या न प्रियतम जना मातृभूमेः कदापि।
वर्षाकाले कनकसदृशा लोकिता दर्दुरा ये
तेषां लोपो भवति सलिले वर्षणस्यावसाने ॥४१॥

जो लोग ठगी करने के लिये बनावटी रूप धारण करते हैं वह मातृभूमि के विश्वास योग्य नहीं होते। वर्षा की ऋतु में सोने के समान पीले रंग वाले जो मेंडक दिखाई देते हैं उनका उस ऋतु के अन्त में पानी में ही लोप हो जाता है ॥४१॥

चित्ते किञ्चिद् भवति सुधृतं वाचि किञ्चित्तथाऽन्यत्
कार्ये किञ्चिन्निहितमपरं लक्षणं दुर्जनानाम् ।
सन्तः किन्तु प्रियतम मताः सर्वतस्तुल्यरूपा
राष्ट्रेऽस्माकं भवतु महती सज्जनानां समृद्धिः ॥४२॥

दुष्ट लोगों का ऐसा ही लक्षण होता है कि मन में कोई और बात होती है, वाणी में कुछ और होता है और काम में कुछ और ही होता है । परन्तु सज्जन लोग सब ओर से समान रूप वाले ही होते हैं । हमारे देश में सदा सज्जनों की वृद्धि हो ॥४२॥

नैतत्कार्यं भवति भवतां सैन्यपङ्क्तौ स्थिताना-
मत्रस्थाऽहं सकलमपि तत्साधयिष्ये स्वयत्नैः ।
स्युर्मे भर्तः कुशलकृतयो येन शौर्यस्य योग्या
नोपालम्भो भवतु भवते "भार्यया किं कृतं ते" ॥४३॥

हे पतिदेव, आप सैनिक हैं इस लिये यह आपका काम नहीं है । मैं यहां ठहरी हुई अपने यत्नों से उस काम को सिद्ध कर लूंगी । जिससे मेरे चतुराई के काम बहादुरी में गिने जाने योग्य हों । आपको इस बात का उलाहना न हो कि "आप की पत्नी ने क्या किया" ॥४३॥

सेनाऽस्माकं दयित यतते बोधनार्थं जनानां
भग्ना तस्याः प्रियतम तदा जायते चित्तवृत्तिः ।
एकं कार्यं भवति नियतं सर्वदा सैनिकानां
सीमां कश्चित् कलुषितरिपुः पांसुलां नो न कुर्यात् ॥४४॥

यदि हमारी सेना लोगों को समझाने के यत्न में लग जाए तो उसकी मनोवृत्ति स्थिर नहीं रहेगी। सैनिकों के लिये केवल एक ही काम निश्चित है कि कोई भी पापी शत्रु हमारी सीमा को गन्दा न करे ॥४४॥

सर्वत्राहं श्रमविरहिता कान्त गच्छामि नित्यं
लोकान् सर्वान् सुचरितमिदं शिक्षयामि प्रभूतम्।
सख्यश्चापि प्रियतम सदा योगदाने सुलग्नाः
पक्षे यस्मात् क्वचिदपि न नो भासिता न्यूनता स्यात् ॥४५

मैं विना विश्राम के हर स्थान पर जा रही हूं और लोगों को इस अच्छे चरित्र की शिक्षा दे रही हूं। सहेलियां भी मुझे पूरा सहयोग दे रही हैं जिससे नारीपक्ष में कोई कमी न रह जाए ॥४५॥

लोभः कार्यः प्रिय न भवता स्वोन्नतेर्युद्धकाले
कुर्वन्त्येवं मलिनहृदयाः केवलं वित्तकीटाः।
एकं साध्यं भवति भवतां खण्डनं वैरिमूर्ध्नां
हत्वा शत्रूँस्त्वमिह विपुलामाप्स्यसे शुभ्रकीर्तिम् ॥४६॥

हे पतिदेव, युद्ध के समय में आपने अपनी उन्नति का लालच न करना। ऐसा काम वही लोग करते हैं जिन का मन मैला और जो धन के लोभी हों। शत्रुओं के सिरों को काटना ही आपका एकमात्र काम है। उन को मार कर आप यहां बड़े भारी यश को प्राप्त करोगे ॥४६॥

यावद्युद्धं विकटरिपुभिर्नृत्यति स्कन्धयोस्ते
तावद् भर्तर् भवतु हृदये वैरिणां दण्डनेच्छा ।
आनन्दस्ते दयित भविता मर्दितारेस्तथैव
स्फोटात् पूये प्रियतम यथा निर्गते रोगिणः स्यात् ॥४७॥

जब तक विकट शत्रुओं से युद्ध करने का बोझ आपके कन्धों पर है तब तक आपके हृदय में अपने वैरी को दण्ड देने की इच्छा होनी चाहिये। शत्रुओं को मसलने के बाद आप को उसी प्रकार आनन्द प्राप्त होगा जैसे फोड़े से पीक के निकलने पर रोगी को होता है ॥४७॥

व्यूढो भर्तर् भवति यदि नुर्दन्तमध्ये तृणांशो
जिह्वा सोढुं प्रभवति न तं वैरिणं स्वीयराज्ये ।
निष्कास्यैनं दयित कुरुते विश्रमं केवलं सा
शत्रूनेतांस्त्वमपि सकलान् द्रावयित्वा सुखी स्याः ॥४८॥

हे पतिदेव, यदि मनुष्य के दांतों के बीच कोई तिनका फंस जाय तो जीभ अपने राज्य में उसको सहन नहीं करती है, उसे निकाल कर ही वह विश्राम करती है। तुम भी इसी प्रकार अपने शत्रुओं को भगा कर सुख प्राप्त करो ॥४८॥

स्वार्थात् स्वीयादुपरि सुजनै राष्ट्रचिन्ता विधेया
स्वस्थे राष्ट्रे सकलजनता प्रत्यहं मानमेति ।
उच्चं देशे पदमिह मतं सैनिकानां पवित्रं
काच्चित् पातो न भवतु ततः स्वार्थलिप्सावशात् ते ॥४९॥

भले लोगों को चाहिये कि वह अपने स्वार्थ को छोड़ कर पहले राष्ट्र की चिन्ता करें। इसके सुखी होने पर सारी जनता प्रतिदिन मान प्राप्त करती है। हमारे देश में सैनिक का पद बहुत ही ऊंचा और पवित्र माना जाता है। कहीं स्वार्थ में पड़ कर आपकी गिरावट न हो ॥४९॥

पाते जाते दयित भवतः सैनिकाः शक्तिहीना
नो शक्ताः स्युः कथमपि भुवं रक्षितुं भारतस्य।
स्वार्थं तस्मात् कुरु पृथगिमं राष्ट्रकार्यात् पुनीता-
दादर्शस्ते भवतु सकलानादिशन् श्रेष्ठमार्गम् ॥५०॥

यदि आपकी गिरावट हो जाएगी तो सभी सैनिक दुर्बल हो जाएंगे और वह भारतभूमि की किसी भी प्रकार रक्षा न कर सकेंगे। इस लिये राष्ट्र के पवित्र काम से स्वार्थ को अलग रखो। आपका आदर्श और भी सब को अच्छा रास्ता दिखाए ॥५०॥

एषा सेना भवति सकला मानयोग्याऽस्मदीया
कार्यैरुच्चैः प्रतिदिनमियं भासतां भारतेऽत्र।
किञ्चित् तस्या भवतु मतिमन् नापकीर्तेर्निमित्तं
वाचं पुण्यां विशदहृदये सैनिका धारयन्तु ॥५१॥

यह हमारी सारी सेना मान के योग्य है, अपने ऊंचे कामों से प्रतिदिन यहां भारत में इसकी शोभा हो। उस का कोई भी काम ऐसा न हो जो उसका अपयश करने वाला

हो। सभी सैनिक अपने निर्मल हृदय में इस पवित्र वाणी को धारण कर लें ॥५१॥

ना चेत् कश्चिन्मतिविरहितः सञ्चरन् राष्ट्रवामं
योऽन्नं भुक्त्वा स्वजननभुवो दृष्टिमन्यत्र धत्ते।
नायं कान्त क्वचिदपि खलः प्रत्ययाधानयोग्यो
बाह्यः शत्रुर्न भयजनको मध्यवर्ती यथाऽऽस्ते ॥५२॥

यदि कोई मूर्ख आदमी अपने राष्ट्र के प्रतिकूल काम करता हो और अपनी मातृभूमि का अन्न खा कर अपनी दृष्टि कहीं दूसरी जगह रखता हो तो हे पतिदेव, ऐसे दुष्ट आदमी पर कभी विश्वास नहीं करना चाहिये। बाहर का शत्रु इतना भयानक नहीं होता जितना अन्दर का होता है ॥५२॥

दृष्टिर्यस्य प्रिय न शुभदा मातृभूमिं प्रति स्या-
न्निष्कास्यैनं प्रकुरु परतः संशयो यातु दूरे।
शङ्कुस्तीक्ष्णो भवति पतितो मार्गमध्ये पते चे-
दुत्थाप्यैनं क्षिपति मतिमान् पूर्वमेव प्रयाणात् ॥५३॥

हे प्रिय पतिदेव, मातृभूमि के प्रति जिसकी दृष्टि अच्छी न हो उसको निकाल कर बाहर कर दो जिससे मन की शङ्का दूर हो जाय। यदि रास्ते में तेज कांटा पड़ा हुआ हो तो बुद्धिमान् आदमी चलने से पहले ही उसे उठा कर फेंक देते हैं ॥५३॥

सर्पो यस्मिन् वसति सदने गुप्तरूपेण भर्त-
स्तत्रावासः प्रिय न सुकरो भीतिदं तद् गृहं स्यात् ।
एनं हत्वा भयविरहितं त्वं कुरु स्वीयगेहं
गुप्ता वार्ता न भवतु पुनः श्रोत्रयोर्येन नोऽरेः ।।५४।।

हे पतिदेव, जिस घर में सांप गुप्त रूप से रहता हो वहां पर रहना आसान नहीं, वह घर डर देने वाला ही होता है। इसे मार कर अपने घर के भय को दूर करो जिससे हमारी गुप्त वार्ता शत्रु के कान तक न पहुंचे ।।५४।।

कस्याऽप्यस्तु प्रियतम ततः सम्प्रदायस्य मर्त्यो
नैवंरूपः कुटिलपुरुषश्चिन्तनीयः क्षमायै ।
कीटापन्नो यदि न रदनः पाटितः स्यात् सुकाले
सर्वे दन्ता अचिरसमयाद् दूषिताः स्युर्मुखस्य ।।५५।।

यह मनुष्य चाहे किसी भी संप्रदाय का क्यों न हो इस प्रकार के कुटिल पुरुष को क्षमा देने की बात मन में सोचनी भी नहीं चाहिये। कीड़े वाले दांत को यदि समय पर न निकाला जाए तो मुंह के सब दांत शीघ्र ही सड़ जाते हैं ।।५५।।

कर्तव्यं स्वं दयित कुरुते पालितं यो न युद्धे
भीरुर्भूत्वा व्रजति न पुरः प्राणमोहं करोति ।
देशद्रोही भवति कुटिलो गुप्तसर्पः स्वराष्ट्रे
शीर्षं तस्य स्वयमपि पते कर्तनीयं त्वयाऽद्य ।।५६।।

जो युद्ध में अपने व्रत का पालन नहीं करता, डरपोक बन कर आगे नहीं जाता है और अपने प्राणों का मोह करता है ऐसा कुटिल आदमी देशद्रोही होता है और राष्ट्र में गुप्त सांप ही समझा जाता है। हे पतिदेव, ऐसे देशद्रोही का सिर आज काट देना चाहिये ।।५६।।

सत्यो वीरो व्रजति पुरतोऽचिन्तयञ्जीवनं स्वं
शीर्षे धृत्वा मरणवसनं वैरिणां मारणाय ।
एषा भूमिर्भवति सफला वल्लभैवंविधैस्तैः
स्यात् कार्पण्यं क्वचिदपि पते नैव युद्धस्य भूमौ ॥५७

सच्चा बहादुर अपने शत्रुओं को मारने के लिये अपने प्राणों की चिन्ता न करता हुआ सिर पर कफन बान्ध कर आगे चला जाता है। पतिदेव, यह मातृभूमि इस प्रकार के बहादुरों से ही सफल होती है। युद्ध की भूमि में कहीं भी कायरता नहीं होनी चाहिये ।।५७।।

जित्वा शत्रून् भवति विदितः कान्त राष्ट्रे समग्रे
मृत्वा याति प्रिय च सुदिवं मातृभूमेः स वीरः ।
पाण्योर्युग्मे दयित धरते मोदकानीव लोके
तस्मात् सर्वैः प्रियतम मतं शोभनं सैनिकत्वम् ।।५८।।

वह बहादुर शत्रुओं को मार कर सारे राष्ट्र में प्रसिद्धि को प्राप्त करता है और यदि मर जाए तो स्वर्ग को जाता है। हे पतिदेव, इस प्रकार उसके दोनों हाथों में लड्डू होते हैं। इसी लिये सब लोग सेना में जाना अच्छा समझते हैं ।।५८।।

नान्नं भुक्त्वा दयित सफलं जन्मभूमेर्विधत्ते
जीवन् सोऽपि प्रियतम मतः मृत्युमेव प्रयातः ।
तस्माच्छ्रेष्ठो भवति वृषभो घासमात्रेण तृप्तः
सोढ्वा कष्टं विविधविधिभिः सेवते मातृभूमिम् ॥५९॥

जो मनुष्य मातृभूमि का अन्न खा कर उसे सफल नहीं करता है वह जीता हुआ भी मरे हुए के समान ही होता है। उससे तो बैल अच्छा होता है जो केवल घास खा कर अनेक प्रकार से मातृभूमि की सेवा करता है ॥५९॥

सेवाकालः स्वजननभुवो लभ्यते भाग्ययोगा-
देनं प्राप्य प्रिय न कुरुते स्वोपयोगं प्रमादात् ।
तस्मान्मूर्खः सकलभुवने दृश्यते नैव कश्चि-
ज्ज्ञात्वा सर्वं कुरु सुविहितं मानसे यन्मदीये ॥६०॥

अपनी मातृभूमि की सेवा का समय कभी भाग्य से ही मिलता है, इसे प्राप्त कर के जो प्रमाद से अपना उपयोग नहीं करता है उससे बढ़ कर संसार में कोई मूर्ख नहीं दिखाई देता। इस लिये सारी बात को समझ कर जो कुछ मेरे मन में है उसे अच्छी तरह से पूरा करो ॥६०॥

पक्षी यस्मिन् वसति विटपे तस्य मोहेन लिप्तो
वह्न्याविष्टे निजमपि वपुस्तेन सार्धं जुहोति ।
ध्यात्वा भर्तर् निजमनुजतां संयुगे युङ्ग्धि चेतो
मार्गे त्वत्के प्रियतम ततः सैनिका यान्तु सर्वे ॥६१॥

पक्षी जिस पेड़ पर रहता हो यदि उसको आग लग जाए तो वह उसके मोह में अपने शरीर को भी उसी के साथ जला देता है। हे पतिदेव, अपनी मानवता का ध्यान कर के युद्ध में अपने चित्त को लगाओ। जिससे फिर सभी सैनिक आपके मार्ग पर चल पड़ें ॥६१॥

इति पञ्चमः सर्गः समाप्तः

अथ षष्ठः सर्गः



गावोऽरण्ये मुदितमनसा नात्तुमिच्छन्ति घासं
वत्सा एते दयित चकिता ऊर्ध्वकर्णा भ्रमन्ति ।
एषां क्षोभं हर मम पते वीरतां दर्शयित्वा
हत्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ।।१।।

गौएं जङ्गल में प्रसन्न मन से घास नहीं चर रही हैं। यह बछड़े चकित तथा ऊंचे कान किये हुए घूम रहे हैं। हे पतिदेव, आप वीरता दिखा कर इनके क्षोभ को दूर करो। आप जब शत्रुओं को मार कर घर आएंगे तो मैं आपका स्वागत करूंगी ।।१।।

अश्वा एते पिहितनयनाः सन्ति वैराग्यमग्नाः
साहाय्यार्थं विगतसमये बव्रजुर्युद्धभूमिम् ।
लक्ष्मीबाई प्रिय हतवती सप्तिमारुह्य शत्रून्
सर्वे लोकास्तुरगविहितं वीरकृत्यं स्मरन्ति ।।२।।

घोड़े वैराग्य से आंखे बन्द किये हुए हैं। ये अतीत काल में सहायता के लिये युद्धभूमि को जाया करते थे। हे प्रियतम, लक्ष्मीबाई ने घोड़े पर चढ़कर ही शत्रुओं को मारा था। सब लोग घोड़ों द्वारा किये गये वीरता के कामों को याद करते हैं ।।२।।

आरुह्याऽसौ प्रियतम तथा चेतकं सैन्धवं स्वं
राणा वीरो विपुलबलिनो वैरिणः संजघान ।
स्वातन्त्र्यार्थं स्वभरतभुवो वाजिनां योगदानं
ख्यातं भर्तः सकलजनता वेत्ति सम्यक्तयेदम् ॥३॥

हे प्रियतम, महाराणा प्रताप ने भी अपने चेतक नामक के घोड़े पर चढ़ कर ही बलवान् शत्रुओं को मारा था। भारत की स्वतन्त्रता के लिये घोड़ों का योगदान प्रसिद्ध है, इस सचाई को सब लोग अच्छी तरह से जानते हैं ॥३॥

औदासीन्यं प्रियतम तथा हस्तिनः सम्भजन्ते
पूर्वे काले रिपुनिहननं चक्रुरेते रदाभ्याम् ।
युद्धक्षेत्रं न नयति नरः कश्चिदेतान् पतेऽद्य
ज्ञात्वैतेषां मदजलमिदं गण्डयोरेव लीनम् ॥४॥

हे प्यारे पतिदेव, ये हाथी भी उदास दिखाई दे रहे हैं। प्राचीन काल में ये अपने दांतों से शत्रुओं को मारा करते थे। आज कोई भी इन्हें युद्धक्षेत्र को नहीं ले जा रहा है, ऐसा जान कर इनका मदजल गण्डस्थल (कपोलों) में ही लीन हो रहा है ॥४॥

नैराद्यत्वे भवति फलदा प्राक्तनी युद्धरीतिः
कर्तुं शक्ता न किमपि पते कुञ्जरा वा तुरङ्गाः ।
सर्वानेतानपगतभयान् कान्त शीघ्रं कुरु त्वं
हत्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥५॥

हे पतिदेव, आज युद्ध का पुराना ढंग फलदायक नहीं है, घोड़े या हाथी आज कुछ भी नहीं कर सकते। आप शीघ्र ही इनके भय को दूर करें। आप शत्रुओं को मार कर जब घर आएंगे तो मैं आपका स्वागत करूंगी ॥५॥

एते भीता हरिणशिशवो नो जिघत्सन्ति घासं
मृग्यः सन्ति प्रियतम दवेनेव भीता विरक्ताः ।
जीवा एते तव भुजबले केवलं सक्तनेत्रा
भीतिं दूरे कुरु मम पते दर्शयित्वा स्वशौर्यम् ॥६॥

यह हिरणों के बच्चे घास नहीं खाना चाहते हैं। हिरणियां इस प्रकार विरक्त हैं मानों जंगल की आग से डरी हुई हों। यह सब जानवर आपकी भुजाओं की शक्ति में ही आँखें लगाए हुए हैं। आप अपनी वीरता दिखा कर इनके भय को दूर करो ॥६॥

भृङ्गाः कुञ्जे शिथिलरसना नैव कुर्वन्ति शब्दं
पुष्पोद्याने प्रिय सुमनसो नाऽथ हासे सुलग्नाः ।
सर्वा कान्त प्रकृतिपरिधिः शून्यतामेव याता
शौर्यं दृष्ट्वा भवतु सकलं पूर्वमेतद् यथासीत् ॥७॥

शिथिल जीभ वाले भौरे कुञ्जों में शब्द नहीं कर रहे हैं। फूलों की वाटिका में फूल भी नहीं खिल रहे हैं। हे प्रियतम, यह सारी प्रकृति ही शून्य हो गई है। आपकी बहादुरी को देख कर यह सब कुछ पहले जैसा ही हो जाए ॥७॥

कुर्वन्त्येताः प्रिय न मधुनः सञ्चयं मक्षिकाश्च
व्यालोक्यन्ते पतिवर यथा सन्ति शोके निमग्नाः।
आसां दुःखं गमय सकलं पालयित्वा स्वधर्मं
हत्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥८॥

हे प्यारे पतिदेव, यह मधुमक्खियाँ शहद को इकट्ठा नहीं कर रही हैं, यह ऐसी दिखाई दे रही हैं मानों शोक में डूबी हुई हों। आप अपने धर्म का पालन कर के इनके सारे दुःख को दूर करें। आप शत्रुओं को मार कर जब घर आएंगे तो मैं आपका स्वागत करूंगी ॥८॥

आम्रस्थोऽयं मधुरवचनं कोकिलो भाषते नो
रम्यः शब्दः श्रवणसुखदः श्रूयते नास्य कान्त।
मौनेनास्ते सुविशदवचाः पञ्जरस्थः शुकोऽसौ
नैवालापं प्रिय च कुरुते सारिका सङ्कटज्ञा ॥९॥

आम के पेड़ पर बैठी हुई यह कोयल मीठा नहीं बोल रही है, कानों के लिये सुखदायक इसका मनोहर शब्द नहीं सुनाई दे रहा है। स्पष्टवाणी वाला यह तोता भी पिञ्जरे में चुपचाप बैठा है। इसी प्रकार मातृभूमि के संकट को समझने वाली मैना भी कुछ नहीं बोल रही है ॥९॥

चिन्ताग्रस्ताः सकलविहगा यत्र तत्र भ्रमन्तः
किञ्चित्तेषां प्रियतम तथा लुप्तमेवास्ति लोके।
जानन्त्येते दयित निखिलं सङ्कटं मातृभूमेर्
हत्वा शत्रूँस्त्वमपि सुखिनः पक्षिणोऽद्य कुरुष्व ॥१०॥

चिन्ता में पड़े हुए सारे पक्षी जहां तहां इस प्रकार घूम रहे हैं मानों संसार में उनकी कोई चीज़ खो गई हो। हे पतिदेव, यह मातृभूमि के सारे सङ्कट को जानते हैं। हे पतिदेव, आप शत्रुओं को मार कर आज इन पक्षियों को सुखी करो ॥१०॥

अश्रूणीव त्यजति रजनी पातयन्त्यम्बुबिन्दू-
नस्या दुःखं शमय बलवन् वैरिणो मर्दयित्वा।
यस्मादेषा भवतु सुखदा सङ्गमे नौ मृधान्ते
जित्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥११॥

रात जलकणों को बरसाती हुई मानों रो रही है। हे बहादुर पतिदेव, आप शत्रुओं को मसल कर इसके दुःख को शान्त करें जिससे युद्ध के अन्त में यह हम दोनों के समागम में सुखदायक बन सके। आप वैरियों को मार कर जब घर आएंगे तो मैं आपका स्वागत करूंगी ॥११॥

एषा ज्योत्स्ना निजधवलतामुत्सृजत्यद्य नूनं
शत्रोर्भीतिर्भवति महती म्लानतां तेन याता।
अस्याः कुर्याः स्वभुजतरसा मन्दतां कान्त दूरे
जित्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥१२॥

यह चान्दनी निश्चय हो आज अपनी सफेदी को छोड़ रही है। शिर पर शत्रु का बहुत बड़ा भय है इस लिये यह मैली

हो रही है। आप अपने बाहुओं का बल दिखा कर इसकी मन्दता को दूर करो। आप शत्रुओं को जीत कर जब घर आओगे तो मैं आपका स्वागत करूंगी ॥१२॥

एता नद्यो विपुलसलिलाः शुष्कभावं भजन्ति
स्पर्शेनारेर्न भवतु पयो दूषितं येन कान्त।
हत्वा शत्रून् सकलसरितां साहसं वर्धयाऽऽसां
भूमिर्यस्माद् भवतु विफला नैव तासामभावे ॥१३॥

विपुल जल वाली यह नदियां सूख रही हैं। इनको यह भय है कि शत्रु के स्पर्श से कहीं पानी दूषित न हो जाए। शत्रुओं को मार कर तुम इन सब नदियों के साहस को बढ़ाओ जिससे इनके अभाव में हमारी भूमि विफल न होने पाए ॥१३॥

स्नात्वा नद्यां घृणितवृजिनादाप्नुमो मङ्क्षु मुक्तिं
जन्मन्येवं प्रिय च मरणे स्पृश्यते पुण्यनीरम्।
एवं ज्ञात्वा दयित सरितां रक्षणं स्याद् रिपुभ्यो
नैते धृष्टाः कथमपि पते स्पर्शमासां भजेयुः ॥१४॥

नदी में स्नान कर के हम बड़े से बड़े पाप से मुक्ति प्राप्त करते हैं। जन्म और मरण में इनके पवित्र जल का स्पर्श किया जाता है। ऐसा जान कर हे पतिदेव, शत्रुओं से नदियों की रक्षा होनी चाहिये। यह धृष्ट शत्रु किसी भी प्रकार इनका स्पर्श न कर सकें ॥१४॥

अद्रेः कूटाः प्रियतम तथोपत्यकामेव यान्ति
स्वाऽरीन् दृष्ट्वा भयमनुगता मस्तकं नोन्नमन्ति ।
एषां भालं कुरु गगनगं दर्शयित्वा स्वशौर्यं
हत्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥१५॥

हे प्रियतम, यह पहाड़ के शिखर नीचे की ओर ही जा रहे हैं, अपने शत्रुओं को देख कर मस्तक ऊंचा नहीं कर रहे हैं। अपनी वीरता दिखा कर इनके मस्तक को ऊंचा करो। शत्रुओं को मार जब आप घर आएंगे तो मैं आपका स्वागत करूंगी ॥१५॥

वायुश्चापि प्रियतम तथा लक्ष्यते तापपूर्णः
काचिन्नारी विसृजति यथा श्वासमुष्णं वियुक्ता ।
अस्य स्पर्शं प्रकुरु सुखदं तर्पयित्वा स्वभूमिं
हत्वा शत्रून् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥१६॥

हे प्रियतम, यह वायु इस प्रकार गर्म चल रही है मानो कोई विरहिणी नारी गर्म श्वास छोड़ रही हो। अपनी भूमि को तृप्त कर के इसके स्पर्श को सुखदायक बनाओ। शत्रुओं को मार कर जब आप घर आएंगे तो मैं आपका स्वागत करूंगी ॥१६॥

दृष्ट्वाऽऽसीनौ दयित सदने विग्रहस्यावसाने
मन्दं मन्दं निकटगगने संवहन् मातरिश्वा ।
सङ्ख्यक्लान्तिं तव घनतमां नेष्यते दूरतोऽसौ
कालो भर्तर् भवति कुरयोस्त्वं कुरुष्वोपयोगम् ॥१७॥

हे पतिदेव, युद्ध के अन्त में घर में बैठे हुए हम दोनों को देख कर निकट आकाश में धीरे-धीरे चलता हुआ वायु तुम्हारी युद्ध की तीव्र थकावट को दूर करेगा। समय हाथ में है, इसका उपयोग करो ॥१७॥

ज्योतिश्चैतद् भवति शिथिलं तारकाणां निशायां
मन्दा कान्तिर् गगनतलगा कान्त दृष्टा ध्रुवस्य ।
भूमौ व्योम्नि प्रिय च सकलं क्षीणतामेव यातं
हत्वा शत्रून् प्रकृतिमखिलां स्वस्थतां त्वं नयस्व ॥१८॥

रात के समय तारों की ज्योति शिथिल दिखाई देर ही है। आकाश में ध्रुव का प्रकाश भी मन्द पड़ गया है। धरती और आकाश में सब कुछ क्षीण ही होगया है। शत्रुओं को मार कर तुम सारी प्रकृति को स्वस्थ बनाओ ॥१८॥

दीपो रात्रौ प्रिय न कुरुते मानवेभ्यः प्रकाशं
तैलाभावो न भवति पते शून्यता नाऽथ वर्तेः ।
शत्रोश्छाया शिरसि पतिता विस्तृणोत्यन्धकारं
हत्वा शत्रून् स्वजननभुवं तेजसा योजयस्व ॥१९॥

यह दीपक रात के समय लोगों को प्रकाश नहीं दे रहा है। इसमें न ही तेल की कमी है और न वाती की। सिर पर पड़ी शत्रु की छाया ही अन्धकार को फैला रही है। शत्रुओं को मार कर अपनी मातृभूमि को तेज से मिलाओ ॥१९॥

एते वृक्षा उपवनगता आकृतिं धारयन्ते
किञ्चिद् व्यग्रां कुसुमरहितां कारणं तत्र वेद्मि ।
सम्वीक्ष्यैते किल भुवामिमां शत्रुभिर्धर्षितां स्वां
चिन्ताग्रस्ता मुकुलितदला आकुलाः सन्त्यभीक्ष्णम् ॥२०॥

बाग के पेड़ों का आकार व्याकुल है, इन पर फूल भी नहीं हैं। इसके कारण को मैं जानती हूं । यह अपनी मातृभूमि का शत्रुओं से तिरस्कार होता हुआ देख कर चिन्ता में पड़ गये हैं, इनके पत्ते भी मुरझा गये हैं और यह बहुत ही व्याकुल हैं ॥२०॥

युद्धं जित्वा द्रुतमपनयेः पक्षिणां पादपानां
चिन्तामेतां दयित महतीं प्रार्थयेऽहं भवन्तम् ।
मोघा याच्ञा प्रिय न विहिता मे कदापि त्वयाऽतो
हत्वा शत्रून् सपदि कुटिलान् वल्लभायाहि गेहम् ॥२१

युद्ध को जीत कर शीघ्र ही पक्षियों और पेड़ों की इस भारी चिन्ता को दूर करो, यही मेरी आपसे प्रार्थना है। हे पतिदेव, आपने मेरी माँग को कभी निष्फल नहीं किया है इस लिये हे प्रिय! शत्रुओं को मार कर जल्दी घर॥ चले आओ ।।२१।

याच्ञां मत्कां त्वमथ कुरुषे संयुगे चेत् फलाऽऽढ्यां
सर्वं मत्तः सुलभमयि ते वल्लभेच्छानुसारम् ।
नैवं कर्तुं भवसि सफलश्चित्तयोर्वैमनस्यं
स्थास्यत्यत्र प्रियतम सदा सत्यमेतद् वदामि ॥२२॥

यदि आप मेरी मांग को युद्ध में फलीभूत करते हो तो हे पतिदेव, आपकी इच्छानुसार सब कुछ आपके लिये सुलभ है। परन्तु यदि ऐसा करने में सफल नहीं होते हो तो घर पर हमारा मनमुटाव सदा ही बना रहेगा, यह मैं सच ही कहती हूं ॥२२॥

आलोकेऽहं मृगपतिममुं कन्दराया बहिःस्थं
कृत्वा भीमां जिगमिषति यश्चण्डिकां स्वीयपृष्ठे ।
युद्धक्षेत्रे द्रुततरगतिर्दुर्हृदः स्वान् निहन्तुं
सोत्कण्ठोऽसौ नयति दिवसान्यम्बिकाया विलम्बात् ॥२३॥

गुफा के बाहर बैठ हुए इस शेर को में देख रही हूं। यह भयंकर रूप वाली चण्डी को अपनी पीठ पर चढ़ा कर तीव्रगति से युद्धक्षेत्र में अपने शत्रुओं को मारने के लिये जाना चाहता है। परन्तु भवानी के देर करने से उत्कण्ठा में ही अपने दिनों को बिता रहा है।।२३.।

शुम्भो दैत्यः प्रियतम यदाऽत्यन्तपापेषु सक्तो
देवाः सर्वे विकलमनसाऽभ्यर्थयामासुरम्बाम् ।
आरुह्याऽसौ हरिमयि पते मारयामास शत्रू-
नद्याप्येवं सकलललनाः सन्तु वीर्याभिलिप्ताः ॥२४॥

जब शुम्भ दैत्य बहुत पाप करने लगा तो सारे देवताओं ने व्याकुल मन से चण्डी के पास जा कर प्रार्थना की। तब हे पतिदेव, उस देवी ने शेर पर चढ़ कर शत्रुओं को मार दिया।

आज भी सभी स्त्रियों को इसी प्रकार बलशाली होना चाहिये ।।२४।।

शौर्यं श्लाघ्यं भवति परमं योषितामद्यकाले
नेमाः सन्ति प्रिय च भुवने साम्प्रतं भोगवस्तु ।
सज्जां कृत्वा किमपि सुलभं कङ्कणैरस्ति नासां
धृत्वाऽस्त्राणि स्वकरवरयोश्चण्डिकाः सन्तु सर्वाः ।।२५।।

आज संसार में नारी की वीरता की ही प्रशंसा की जाती है, अब यह भोग की वस्तु नहीं है। अब चूड़ियां पहन कर सजावट करने से इन्हें कुछ भी लाभ नहीं है। अब यह सब हाथ में अस्त्र ले कर चण्डी का रूप धारण कर लें ।।२५।।

अल्पे काले त्वमपि सकलं वेत्स्यसे तथ्यमेत-
न्नार्या हस्ते दयित भविता शासनं भारतस्य ।
वाचं तस्याः श्रुतिमिव जनाः पालयिष्यन्ति सर्वे
भारं पुंसां शिरसि विधृतं स्कन्धयोर्द्रक्ष्यसि त्वम् ।।२६।।

हे पतिदेव, आप भी थोड़े समय में ही इस सचाई को जान लोगे कि भारत का शासन किसी नारी के हाथ में ही होगा। लोग उसकी बात को वेदवाक्य के समान माना करेंगे। पुरुषों ने जो भार सिर पर उठाया है वह कन्धों पर आ जाएगा ।।२६।।

भर्तः सर्वाः स्वपथि पतिता मातृभूमेः समस्या
यास्यन्त्येवं सरलविधिना वश्यतां मङ्क्षु तस्याः ।
संसारोऽयं प्रियतम तदा भारतस्याङ्गनाया
दृष्ट्वा शौर्यं मतिकुशलतां विस्मये मङ्क्ष्यतीव ॥२७॥

हे पतिदेव, तब मातृभूमि के मार्ग में पड़ी हुई सब समस्याएं शीघ्र ही उसके वश में हो जाएंगी। उस समय भारत की नारी की वीरता और बुद्धि की कुशलता को देख कर यह संसार विस्मय में डूब जाएगा ॥२७॥

इति षष्ठः सर्गः समाप्तः ॥

अथ सप्तमः सर्गः



शौर्यं स्मृत्वा दयित भवतो मानसं मोदते मे
भावावेशे चलितहृदया स्वागतं चिन्तयामि।
किं किं कार्यं प्रियतम मया गेहमध्ये त्वदर्थं
युद्धश्रान्तस्त्वमयि सदनं लम्बकालात् समैषि ॥१॥

हे पतिदेव, आपकी वीरता को याद करके मेरा मन प्रसन्न हो रहा है और भावों में वहती हुई मैं आपके स्वागत के बारे में सोच रही हूं। मुझे घर में आपके लिये क्या-क्या करना होगा। आप बड़ी देर के बाद युद्ध में थके हुए घर आ रहे हैं ॥१॥

एकं वर्षं दयित विगतं सद्मनस्ते प्रयाता-
दाशा यावन्मनसि विधृता गेहमायासि शीघ्रम्।
तावद् धृष्टः स कुटिलरिपुः स्फालयामास शस्त्रं
बाधा तेन प्रिय नु महती निश्चिते नो व्यधायि ॥२॥

हे पतिदेव, आपको घर से गये हुए एक वर्ष बीत गया है। जब मेरे मन में आपके घर आने की आशा बंधी थी तो

उस दुष्ट, कुटिल शत्रु ने शस्त्र हाथ में ले लिया। हे प्रियतम, उसने हमारे निश्चित कार्यक्रम में बहुत विघ्न डाला दिया ॥२॥

सम्प्रत्यत्र प्रिय च घटिका यान्ति वर्षेण तुल्याः
शत्रून् हत्वा विकलमनसो व्यग्रतां लोपयस्व।
सर्वं श्रेष्ठं दयित भविता चेत्समायासि जित्वा
नागन्तव्यं वरद सदनं वैरिणोऽमारयित्वा ॥३॥

हे वरदायक पतिदेव, अब एक एक घड़ी वर्ष के बरावर बीत रही है, आप शत्रुओं को मार कर मेरे मन की व्याकुलता को दूर करें। यदि आप बैरियों को मार कर आएंगे तो ही घर पर आपके लिये सब कुछ अच्छा रहेगा। इस लिये उनको बिना मारे घर न आना ॥३॥

श्रान्तं युद्धे विविधविधिभिस्त्वामहं तोषयिष्ये
श्वेताऽस्माकं भवति महिषी सा प्रसूता घटोध्नी।
आज्यं भर्तर् 'मण' परिमितं सञ्चितं ते करिष्ये
प्रातःकाले दयित भवते सेतिकाः साधयिष्ये ॥४॥

हे पतिदेव, मैं युद्ध में थके हुए आपको हर प्रकार से प्रसन्न करूंगी। घड़े के समान ऊहल वालो हमारी बूरी (सफेद रंग की) भैंस सू पड़ी है। मैं आपके लिये एक मन घी इकट्ठा करूंगी और हर प्रातःकाल आपके लिये सेमियां बना कर दिया करूंगी ॥४॥

एवं धेनुर्बहुगुणवती पालिताऽस्ति त्वदर्थं
रूपं यस्या धवलपयसा दृश्यते स्पर्धमानम् ।
दास्ये प्रातर् दयित सुरभेर्भास्करेऽस्ते महिष्याः
स्वादु क्षीरं सुभग भवते गेहमागच्छ मङ्क्षु ॥५॥

इसी प्रकार बहुत गुणों वाली एक गौ भी आपके लिये पाली हुई है जिसका रूप सफेद दूध से स्पर्धा करता हुआ दिखाई देता है। अर्थात् उसका रूप भी सफेद दूध के समान ही सुन्दर है। हे पतिदेव, मैं प्रातःकाल आपको गौ का और सायंकाल को भैंस का स्वादु दूध पिलाया करूंगी। आप जल्दी घर चले आएं ॥५॥

संयावं ते मधुरपयसा प्रत्यहं संप्रदास्ये
क्षीरञ्चापि प्रतिदिनमहं भोजने संस्करिष्ये ।
अन्यच्चापि प्रियतम तवादेशतोऽहं विधास्ये
हत्वा शत्रूनधिगतयशा गेहमागच्छ शीघ्रम् ॥६॥

मैं प्रतिदिन स्वादिष्ट दूध के साथ आपको हलवा दिया करूंगी और भोजन में हर रोज खीर भी बनाया करूंगी। हे प्रियतम, और भी मैं सब कुछ आपकी आज्ञा से किया करूंगी। आप शत्रुओं को जीत कर और यश प्राप्त करके जल्दी घर चले आओ ॥६॥

सर्वारम्भा दयित शरदो योजिताः सन्ति गेहे
यस्मात् किञ्चिन्न भवतु पते खिन्नतापादकं ते ।
जानाम्येतत्त्वमतिकठिने संप्रयुक्तोऽसि कार्ये
कर्तव्यं स्वं प्रियतम गृहे पालयिष्यामि सम्यक् ॥७॥

हे पतिदेव, मैंने शरद् ऋतु के अनुकूल सब योजनाएं घर में प्रारम्भ कर दी हैं जिससे आपके लिये घर में कोई भी अभाव खिन्नता पैदा करने वाला न हो। मैं अच्छी तरह जानती हूं कि आपको बड़े कठिन काम में लगाया गया है। इसी लिये मैं घर पर अपने कर्तव्य का अच्छी तरह पालन करूंगी ॥७॥

सर्वं गेहं विविधविधिभिर्भूषितं सङ्करिष्ये
दीर्घं भर्तर् हरितमजिरं गोमयेनोपलेप्स्ये ।
देहल्यां मे सुहारितशुभां स्थापयिष्ये च दूर्वां
कान्तालिन्दं रुचिरविशदैर्भूषयिष्ये सुरङ्गैः ॥८॥

मैं अपने घर को अनेक प्रकार से सजाऊंगी, अपने विशाल आंगन को हरे गोवर से लेपूंगी। देहल पर शुभकारक हरी हरी दूब रखूंगी और बाहर के चबूतरे को सुन्दर, निर्मल रंगों से सजाऊंगी ॥८॥

स्थाने स्थाने दयित सदने दीपकानां प्रकाशं
कृत्वा तेऽहं रघुपतिसमं स्वागतं साधयिष्ये ।
कालो नेतुं प्रिय न सुकरः साम्प्रतं भासते मे
कृत्वा शत्रून् रदनरहितान् गेहमागच्छ शीघ्रम् ॥९॥

हे प्रियतम, मैं घर में दीपकों का उजाला करके रामचन्द्र के समान आपका स्वागत करूंगी। अर्थात् जैसे रावण को मार कर अयोध्या आने पर राम का लोगों ने स्वागत किया था उसी प्रकार मैं आपका स्वागत करूंगी। हे पतिदेव, अब समय बिताना मेरे लिये कठिन हो गया है इस लिये आप शत्रुओं के दांत तोड़ कर जल्दी घर चले आओ ॥९॥

मुख्यद्वारे दयित कदलीस्तम्भमारोपयिष्ये
मध्ये मध्ये ललितहरिता आम्रवृक्षस्य शाखाः ।
वेश्माऽस्माकं सकलजनताऽऽयास्यति द्रष्टुमेत-
द्धत्वा शत्रूनधिगतयशा बल्लभायाहि गेहम् ॥१०॥

हे पतिदेव, मैं मुख्य द्वार पर केले के खम्भे गाड़ूंगी, बीच बीच में आम की हरी हरी सुन्दर टहनियां लगाऊंगी। इस दृश्य को देखने के लिये सारे लोग हमारे घर आएंगे। आप शत्रुओं को मार कर और यश प्राप्त करके जल्दी घर चले आओ ॥१०॥

सन्त्युद्याने विविधतरवः पुष्पभारैर्नता ये
दत्त्वा वारि प्रतिदिनमहं पालयामि प्रभूतम् ।
मालास्तेषां शुभसुमनसां कारयिष्ये त्वदर्थं
कण्ठे कृत्वा समरजयिनो गौरवं भूरि मंस्ये ॥११॥

बाग में जो अनेक प्रकार के पेड़ हैं वे फूलों के भार से झुक गये हैं। मैं उन्हें प्रतिदिन पानी देकर पाल रही हूं। हे प्रिय, उनके सुन्दर फूलों की मालाएं बनाकर

मैं युद्ध को जीतने वाले आपके गले में डाल कर बड़ा गौरव समझूंगी ॥११॥

उद्यानस्थौ प्रियतम यदाऽऽलापलीनौ भवावो
गुञ्जन्तोऽथो चपलगतयः पुष्पगुच्छेषु भृङ्गाः ।
वार्तालापे द्रुततरगतिं कान्त दास्यन्ति नूनं
हत्वा शत्रूनधिगतयशा वल्लभायाहि गेहम् ॥१२॥

हे प्रियतम, वाटिका में बैठ कर जब हम आपस में बातें करेंगे तो फूलों के गुच्छों पर बैठे हुए भ्रमर हमारे वार्तालाप को तेज गति देंगे। आप शत्रुओं को मार कर और यश प्राप्त कर के शीघ्र घर चले आओ ॥१२॥

कश्चित्कालं रुचिरनिलये साधु विश्रम्य तुष्टौ
यास्यावोऽथ प्रियतम पितुर्मन्दिरं सुन्दरं मे ।
माता भर्तर् मम च भवतो वीक्षते मार्गमुत्का
लोकैर्लोके श्वसुरसदनं कथ्यते स्वर्गतुल्यम् ॥१३॥

कुछ समय अपने रमणीक घर में अच्छी तरह विश्राम करके संतुष्ट हुए हम दोनों मेरे पिता के सुन्दर घर को चलेंगे। मेरी माता बड़ी उत्कण्ठा से आपके मार्ग को देख रही है। हे पतिदेव, लोग संसार में ससुर के घर को स्वर्ग के बराबर बताते हैं ॥१३॥

भर्तस्तत्र स्वगतिविधिभिस्तोषयिष्ये भवन्तं
भिन्नो मार्गो जनकसदने तोषणस्यास्ति पत्युः ।
भ्रातॄणां मे दयित दयिताः पाटवं नैव विद्युर्
ज्ञास्याम्येवं तव हि सकलाश्चेतसः कान्त चेष्टाः ॥१४॥

मैं वहां पर भी अपनी गतिविधियों से आपको सन्तुष्ट करूंगी। पिता के घर में पति को प्रसन्न करने का मार्ग भिन्न ही होता है। हे पतिदेव, जिस प्रकार मेरी भाभियां मेरी चतुराई को न समझ सकें मैं उस प्रकार आपकी सब चेष्टाओं को जानने का यत्न करूंगी ॥१४॥

अन्ये वृक्षा मधुरफलदा रोपिता ये त्वयाऽऽसँ-
स्तेषां चापि प्रिय सुविधिना पालनं सम्यगस्ति ।
एते सम्पद् भवति महती राष्ट्रमुन्नेतुमुच्चै-
रादेशोऽयं तव मनसि मे कान्त सत्यं दृढोऽस्ति ॥१५॥

हे पतिदेव, आपने जो दूसरे मीठे फलों को देने वाले पौदे लगाए हैं मैं उनका भी अच्छी तरह पालन कर रही हूं। राष्ट्र को ऊंचा उठाने के लिये ये पेड़ बड़ी भारी संपत्ति हैं, आपका यह आदेश मेरे मन में अच्छी तरह बैठा हुआ है ॥१५॥

सर्वे साला उपवनगता भूषिता नामपट्टै-
राकर्षन्ति प्रिय जनमनः पुष्पभारैर्नतास्ते ।
ज्ञानं तेषां भवति सुगमं वीक्ष्य नामावलीं तां
दृष्ट्वोद्याने मम कुशलतां लप्स्यसे भूरि मोदम् ॥१६॥

बाग के सारे पेड़ों पर मैंने नामपट्ट लगा दिये हैं, फूलों के भार से झुके हुए वह पेड़ लोगों के मन को आकर्षित कर रहे हैं। उस नामावली को देख कर पेड़ों का ज्ञान सुगमता से हो जाता है। हे पतिदेव, बाग में मेरी चातुरी को देख कर आप बहुत प्रसन्नता को प्राप्त करोगे ॥१६॥

कोणाः सर्वे दयित विहिताः सज्जिता वाटिकाया
मध्ये मध्ये भ्रमणकृतये प्रस्तरैर्मार्गभूषा।
पद्यास्वासु प्रियतम यदाऽऽदाय मां यास्यसि त्वं
मामिन्द्राणीममरपतिना मंस्यते नाथ लोकः ॥१७॥

मैंने बाग के सब कोणों को सजा दिया है, बीच बीच में चलने के लिये पत्थरों से रास्ते को सजा दिया है। हे प्रियतम, जब इन रास्तों में आप मेरे साथ चलोगे तो सारा संसार मुझे इन्द्र के साथ घूमती हुई इन्द्राणी समझेगा ॥१७॥

उद्यानेऽहं सुमधुरफलैः पूरयिष्ये दुकूलं
दत्त्वा तुभ्यं प्रियतम ततो मोदमाप्स्ये महान्तम्।
श्रोष्याम्येवं रणगतकथा वाटिकायां मुखात् ते
जेता भूत्वा सुखदवरदो बल्लभायाहि गेहम् ॥१८॥

मैं बाग में फलों से अपने दुपट्टे को भर लिया करूंगी फिर उन फलों को आपको देकर मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी।

वाटिका में मैं आपके मुख से युद्ध की कथाएं सुनूंगी। हे पतिदेव, आप विजय प्राप्त करके सुखदायक और वरदायक बन कर जल्दी घर चले आओ ॥१८॥

वीणाऽभ्यासं प्रतिदिनमहं सावधाना प्रकुर्वे
कृत्वाऽङ्के तां मधुरमधुरं वादयन्ती पते त्वाम् ।
युद्धश्रान्तं नियममनुगा प्रत्यहं तोषयिष्ये
हत्वा शत्रूनतुलयशसा सार्धमेहि द्रुतं त्वम् ॥१९॥

मैं प्रतिदिन बड़ी सावधान हो कर वीणा (सितार) का अभ्यास करती हूं। मैं उस वीणा को गोद में ले कर नियम पूर्वक मीठा मीठा बजाती हुई युद्ध से थके हुए आपको प्रतिदिन सन्तुष्ट करूंगी। आप शत्रुओं को मार कर अनुपम कीर्ति के साथ जल्दी घर चले आओ ॥१९॥

वेद्म्यारोहानहमतिशुभानेवमेवावरोहाँ-
स्तालज्ञानं प्रिय भवति मे शोभनं वा लयस्य ।
भावा भर्तस्तव हृदयगाः शृण्वतो मेऽथ गीतं
कूर्दिष्यन्ते विविधगतिभिर्वीचिमाला यथाऽब्धेः ॥२०॥

मैं आरोह और अवरोह-क्रम को अच्छे ढंग से जानती हूं, लय और ताल का भी मुझे अच्छी तरह ज्ञान है। हे पतिदेव, मेरे गीत को सुनते हुए आपके हृदय के भाव इस

प्रकार नाचेंगे जैसे समुद्र की तरंगें अनेक प्रकार से नाचती हैं ॥२०॥

शस्त्रस्पर्शाद् रुचिरकरयोस्त्वक् त्वदीया कठोरा
जानाम्येव प्रधनभुवि यज्जायते कान्त कष्टम् ।
आज्याभ्यङ्गं प्रतिदिनमहं हस्तयोस्ते करिष्ये
कृत्वा शत्रून् शमनशरणान् वल्लभायाहि गेहम् ॥२१॥

हे पतिदेव, लगातार शस्त्र पकड़ने से आपके हाथों की चमड़ी कठोर पड़ गई होगी। संग्रामभूमि में जो कष्ट होते हैं उन्हें मैं भली प्रकार से जानती हूं। मैं आप के हाथों में प्रतिदिन घी की मालिश किया करूंगी। आप शत्रुओं को यमराज के पास भेज कर घर चले आओ ॥२१॥

नेदं पत्रं भवति सुगमं तथ्यमाप्तुं यतेथा
यन्निर्दिष्टं तदतिकठिनं खड्गधारासमानम् ।
त्वं मां स्प्रष्टुं प्रभवसि पते पूर्तिमेतस्य कृत्वा
भीरोः स्पर्शं नहि वपुरिदं कान्त सोढा कदापि ॥२२॥

हे पतिदेव, आप तथ्य तक पहुंचने का प्रयत्न करें। यह पत्र आसान नहीं है। जो कुछ मैंने बताया है यह बहुत कठिन है, मानों तलवार की धार पर चलने के बराबर है। आप इसको पूरा करके ही मेरा स्पर्श कर सकते हैं।

हे प्रिय, यह मेरा शरीर डरपोक के स्पर्श को कभी भी सहन नहीं कर सकेगा ।।२२।।

काये मेऽस्मिन् भवति मृदुले केवलं तेऽधिकारो
जित्वा शत्रून् यदि सदनमायासि मानं त्वमाप्तः ।
मामादातुं सुषमभुजयोरर्हसि चेद् विजेता
भीरोः स्पर्शं नहि वपुरिदं कान्त सोढा कदापि ।।२३।।

हे पतिदेव, मेरे कोमल शरीर पर आपका तभी अधिकार है जब आप शत्रुओं को जीत कर और मान प्राप्त कर घर आओगे। आप विजेता हो कर ही मुझे अपनी सुन्दर भुजाओं में ले सकते हो। यह मेरा शरीर भीरु के स्पर्श को कभी भी सहन नहीं करेगा ।।२३।।

सिन्दूराक्तो दयित मनसः केशवेशो मदीयो
लीलास्थानं भवति नितरां वैरिणस्ते विजेतुः ।
नैवं शक्यं प्रियतम मरुः केवलं स्यात् त्वदर्थं
ज्ञात्वा सर्वं कुरु सुविहितं निश्चितं युद्धभूमौ ।।२४।।

हे पतिदेव, यदि आप शत्रुओं को जीत लोगे तो सिन्दूर से सजा हुआ मेरा सीमन्त (मांग) लगातार आपकी क्रीड़ा का स्थल होगा। यदि आप ऐसा न कर सकोगे तो यह आपके लिये मरुस्थल ही होगा। इसलिये सारी बात को समझ

कर युद्धभूमि में जो कुछ आपके लिये निश्चित है उसे अच्छी प्रकार पूरा करो ॥२४॥

केशा भर्तर् मम च शिरसस्तन्तवो हाटकस्य
ज्ञास्यन्तेऽथो विविधविधिभिर्गन्धतैलैः सुसिक्ताः ।
क्रूरान् शत्रून् प्रियतम न चेद् गेहमायासि जित्वा
वेत्स्यस्येतान् वहति शिथिला जीर्णखट्वेव रज्जूः ॥२५॥

अनेक प्रकार से सुगन्धित तेलों से सींचे हुए मेरे यह केश आपके लिये सोने की तारें (बहु मूल्यवान्) होंगे । परन्तु हे पतिदेव, यदि आप शत्रुओं को बिना जीते घर आओगे तो आपको यह इस प्रकार प्रतीत होंगे मानों कोई टूटी खाट ढीली रस्सियों को धारण करती हो ॥२५॥

शत्रूञ्जित्वा त्वमथ सुखदां लप्स्यसे कान्त वेणीं
लोकित्वा यां विगतसमये हर्षितः सर्वदाऽभूः ।
अस्या रूपं प्रिय न विकृतं ते कृते स्यात् कदाचि-
ज्ज्ञात्वा सर्वं परमविजयी युद्धभूमौ भवेस्त्वम् ॥२६॥

हे पतिदेव, मेरी जिस वेणी को देख कर भूतकाल में आप प्रसन्न होते रहें हैं वह अब शत्रुओं को जीतने पर ही आपके लिये सुखदायक होगी । कहीं इसका रूप आप के लिये

बिगड़ न जाये इस लिये सारी बात को समझ कर आप युद्धभूमि में विजेता बनो ।।२६।।

भर्तस्त्वं मे परममृदुलावीहसे चेत् कपोलौ
कर्तव्यं स्वं कुरु फलयुतं निश्चितं संप्रहारे ।
काठिन्यं न प्रियतम भवेदेतयोः कोपभावा-
देवं ज्ञात्वा रिपुविजयवान् युद्धभूमौ भवस्त्वम् ।।२७।।

हे पतिदेव, यदि आप मेरे कपोलों को कोमल ही रखना चाहते हो तो युद्ध में अपने निश्चित कर्तव्य को पूरा करो। ऐसा न हो कि क्रोध के कारण इनमें कठोरता आ जाय। इस लिये सारी बात को समझ कर युद्धभूमि में शत्रुओं को जीतो ।।२७।।

नेत्रे भर्तर् मम च सुखदे ते कृते चेद् विजेता
कृष्णापाङ्गे रुचिरचपले संस्कृते स्वञ्जनेन ।
द्रक्ष्यस्येते प्रियतम न चेद् वैरिणो जेष्यसि त्वं
गर्तौ सत्यं वपुषि निहितौ यत्र दुःखस्य वासः ।।२८।।

हे पतिदेव, कृष्ण प्रान्तों वाले, अच्छे अञ्जन से सजे हुए सुन्दर और चपल मेरे यह नेत्र आपके लिये तभी सुखदायक होंगे यदि आप शत्रुओं को जीत लोगे। यदि आप अपने वैरियों को न जीत सको तो इनको मेरे शरीर में पड़े हुए दो गढ़े ही समझोगे जहां केवल दुःख का ही निवास होगा ।।२८।।

दुग्धश्वेता दयित रदनास्ते करिष्यन्ति मोदं
श्लाघा येषां प्रियतम कृता यत्र तत्र प्रसङ्गे ।
जित्वा शत्रून् यदि न कुरुषे मानसं मे प्रसन्नं
लोकित्वैतांस्तव तु भविता विभ्रमो हिंस्रकास्थ्नः ॥२९॥

हे पतिदेव, दूध के समान सफेद मेरे यह दांत जिनकी जहां तहां प्रसंग में आप प्रशंसा करते रहे हैं, आपको प्रसन्नता देंगे। परन्तु यदि आप शत्रुओं को जीत कर मेरे मन को प्रसन्न न करोगे तो इन्हें देख कर आपको हिंसक जीव की हड्डी का ही भ्रम होगा ॥२९॥

ओष्ठावेतौ दयित मधुरौ वैरिणां चेद् विजेता
क्ष्वेडस्वादं प्रियतम तयोरन्यथा लप्स्यसे त्वम् ।
लाभालाभौ हृदयपटले चिन्तयित्वा पतेऽतो
युद्धक्षेत्रे कुरु समुचितं राष्ट्ररक्षानिमित्तम् ॥३०॥

मेरे होंठ आपके लिये तभी मधुर होंगे यदि आप शत्रुओं को जीत सकोगे, नहीं तो इनमें जहर का ही स्वाद पाओगे। इस लिये हे पतिदेव, अपने हृदय में लाभ-हानि का विचार कर के राष्ट्र की रक्षा के हेतु युद्धक्षेत्र में उचित काम करो ॥३०॥

वक्षो मे स्यात् प्रिय सुशयनं वैरिणां चेद् यमस्त्वं
नैवं शक्यं भवति यदि तत् स्रस्तरं कण्टकानाम् ।
एवं ज्ञात्वा कुरु निजहितं मातृभूमेश्च कार्यं
हत्वा शत्रून् गृहमभिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥३१॥

हे पतिदेव, यदि आप शत्रुओं के लिये यमराज सिद्ध हो सकोगे तो मेरा यह वक्षःस्थल आपके लिये अच्छी सेज होगी। यदि ऐसा न कर सको तो यह कांटों का ही विस्तर होगा। ऐसा जान कर मातृभूमि का काम भी करो और अपनी भलाई भी। आप शत्रुओं को मार कर घर आओगे तो मैं आपका स्वागत करूंगी ॥३१॥

नाभ्यावर्तः प्रिय तव कृते सागरः स्यात् सुधायाः
शत्रून् हत्वा प्रविशसि यदि स्वीयगेहं प्रशस्तः।
एवं कर्तुं प्रभवसि न चेत्पल्वलं पङ्कपूर्णं
ज्ञात्वा सर्वं सुविजययशो भारते त्वं लभेथाः ॥३२॥

हे पतिदेव, यदि आप शत्रुओं को जीत कर प्रशंसा पाकर अपने घर आओगे तो मेरा यह नाभि का आवर्त आपके लिये अमृत का समुद्र होगा। परन्तु यदि आप ऐसा न कर सको तो इसे कीचड़ से भरा हुआ छप्पड़ ही समझिये। इस प्रकार सारी बात को जान कर आप भारत में विजय के यश को प्राप्त करो ॥३२॥

काञ्ची भर्तर्मम जघनगा निर्मिता क्षौमसूत्रैर्
यस्याः स्पर्शे प्रिय तव करो हर्षमाप्नोदमन्दम्।
एषा रम्याऽतिशयसुखदा केवलं ते विजेतुर्
नैवं शक्यं समरभुवि चेद् बन्धनस्यास्ति रज्जुः ॥३३॥

रेशम के धागों से वनी हुई कटितट की मेरी यह कांची जिसके स्पर्श से आपके हाथ ने अनुपम हर्ष पाया है, अब शत्रुओं को जीतने पर ही आपके लिये सुन्दर और सुखदायक होगी। यदि युद्धभूमि में आप ऐसा न कर सको तो यह बन्धन की रस्सी ही होगी ॥३३॥

लाक्षारागो मम कररुहे ते प्रमोदस्य हेतुः
शत्रून् हत्वा दयित सदने दर्शनं दास्यसे चेत् ।
नैवं कर्तुं प्रभवसि रणे भासितं शोणितं स्याद्
ध्यात्वा सर्वं प्रिय सुविहितं निश्चितं मे कुरुष्व ३४॥

मेरे नाखूनों पर लगी हुई लाली आप को तभी प्रसन्नता देगी जब आप शत्रुओं को मार कर घर पर दर्शन दोगे। यदि युद्ध में आप ऐसा न कर सको तो आपके लिये उस लाली में खून का ही आभास होगा। इस लिये सारी बात का ध्यान करके मेरी निश्चित बात को पूरा करो ॥३४॥

नैवायासि प्रिय विजयवान् ख्यातिमाप्तः स्वराष्ट्रे
श्वेता त्वङ् मे वरद भविता कृष्णरागानुलिप्ता ।
यस्याः स्पर्शे प्रियतम नवां स्फूर्तिमाप्नोर्नवां त्वं
नोपालम्भो भवतु तव मे पूर्वमेवाभिभाषे ॥३५॥

हे प्रियतम, यदि आप विजय प्राप्त करके अपने राष्ट्र में प्रसिद्धि प्राप्त न करके घर आओगे तो मेरी यह सफेद चमड़ी जिसके स्पर्श में आप सदा नई स्फूर्ति पाते रहे हो, वह काली पड़

जाएगी। मुझे फिर उलाहना न देना, मैं आपको पहले ही बता रही हूं ॥३५॥

नैवालापे परिचितसुखं लप्स्यसे कान्त गेहे
हन्तुं शत्रून् प्रभवसि न चेन्मूलतो मातृभूमेः।
एवं ज्ञात्वा कुरु निहननं वैरिणां विग्रहे त्वं
हत्वा धूर्तान् गृहमधिगतं त्वामहं सत्करिष्ये ॥३६॥

हे पतिदेव, यदि आप मातृभूमि के सब शत्रुओं का मूल-नाश न करोगे तो घर पर मेरे साथ बातचीत में पहले जैसा सुख प्राप्त न करोगे। ऐसा जान कर युद्ध में बैरियों का विनाश करो। उन दुष्टों को मार कर जब घर आओगे तो मैं आपका स्वागत करूंगी ॥३६॥

बाह्वोः पाशं निजशुभगले मंस्यसे पुष्पमालां
जित्वा पापान् प्रियतम गृहं चेत् स्तुतः सन् समैषि।
नैतच्छक्यं भवति यदि ते बन्धनं पैतृराजं
पक्षापक्षौ मनसि मतिमँस्त्वं विचिन्त्याचराऽतः ॥३७॥

हे पतिदेव, यदि पापी शत्रुओं को मार कर और प्रशंसा प्राप्त कर घर आओगे तो आपके सुन्दर गले में मेरा बाहुपाश फूलों की माला होगी। यदि आप ऐसा न कर सको तो यह यमराज का बन्धन ही प्रतीत होगा। इस लिये हे बुद्धिमान् प्रियतम, अपने मन में पक्ष-विपक्ष को अच्छी तरह सोच कर काम करो ॥३७॥

स्पर्शं भर्तर् मृदुलवपुषः केवलं कर्तुमर्हो
रक्तेनारेर्यदि तव करौ पावनौ सम्पराये ।
युद्धे भीरोः प्रियतम सहे हस्तयोर्नाङ्गुलिं ते
ज्ञात्वा सर्वं रिपुबलहरः सम्भवः संख्यभूमौ ॥३८॥

हे पतिदेव, मेरे कोमल शरीर को आप तभी छू सकेंगे जब युद्ध में शत्रु के खून से आपके हाथ पवित्र हो चुके होंगे। यदि युद्ध में भीरुता दिखाओगे तो मैं आपकी उंगली भी सहन नहीं कर सकती हाथ की तो बात क्या? इस प्रकार सारी बात को जान कर युद्ध में शत्रु की सेना का संहार करो ॥३८॥

जानाम्येतद् भवसि विगतः पर्वतान् शीतयुक्तान्
कायस्योष्मा मम तु भविता कान्त तापाय तेऽत्र ।
किन्त्वेतत्ते भवतु विदितं सर्वमेतत्तदा स्यात्
सानूनां त्वं प्रियतम यदा पासि लज्जां गिरीणाम् ॥३९॥

हे पतिदेव, मुझे प्रतीत है कि आप कितने ठंडे पहाड़ों को गए हो। मेरे शरीर की ऊष्मा ही यहां आपको ताप देगी। किन्तु यह सब कुछ तभी होगा जब आप पर्वतों के शिखरों की लाज बचा लोगे ॥३९॥

एवं भर्तः शिथिलमिह मे कञ्चुकं स्यात्त्वदर्थं
स्नात्वा शत्रोर्लवणरुधिरे ते वपुश्चेत्पवित्रम् ।
वारं वारं कुटिलरिपुभिः पीडितं स्यान्न राष्ट्रं
कर्तव्यं स्वं कुरु सुविहितं मानमाप्तुं मदीयम् ॥४०॥

हे पतिदेव, मेरी चोली आपके लिये तभी ढीली होगी जब कि शत्रु के खारे खून में स्नान करके आपका शरीर पवित्र हो चुका होगा। कुटिल शत्रु बार-बार इस राष्ट्र को दुःखित न करें। मुझ से मान प्राप्त करने के लिये अपने कर्तव्य को पूरा करो ॥४०॥

आनन्दार्थं दयित भविता शिञ्जितं भूषणानां
पत्रं कृत्वा मम फलयुतं चेत् समायासि गेहम् ।
नैवं भर्तर् भवति सुकरं ते कृते चेत्समीके
श्रोष्यस्येतत् प्रियतम यथा निःस्वनं शृङ्खलानाम् ॥४१॥

हे पतिदेव, यदि मेरे पत्र को सफल बना कर घर आओगे तो मेरे भूषणों का शब्द आपके आनन्द के लिये होगा। यदि युद्ध में आप ऐसा न कर सको तो यह ऐसा मालूम होगा मानों लोहे की जंजीरों की खड़खड़ाहट हो ॥४१॥

सर्वः कायः प्रिय तव कृते वर्तते तूलतल्य-
श्चेदायासि त्वमिह सकलान् वैरिणो मारयित्वा ।
एवं कर्तुं प्रभवसि न चेत् काष्ठभूतं शरीरं
स्पृष्ट्वा दुःखं दयित भविता भोक्ष्यसे तत् कथं भोः ॥४२॥

हे पतिदेव, यदि सारे बैरियों को मार कर घर आओगे तो यह मेरा सारा शरीर आपके लिये रूई के समान होगा। परन्तु यदि ऐसा न कर सको तो लकड़ी के समान कठोर इस शरीर का स्पर्श करके दुःख ही होगा। आप उस कष्ट को कैसे भोगोगे ? ॥४२॥

देशेऽस्माकं भवतु मधुनो वर्षणं कान्त नित्यं
पत्रे पत्रे शुभमधुरताऽऽच्छादिता स्यादजस्रम् ।
दृष्टावयान्मधुरमधुरं सर्वमेव स्वराष्ट्रे
न स्याद् भर्तः किमपि कटु नः प्रार्थनेयं ममास्ति ॥४३॥

हे पतिदेव, मेरी यही प्रार्थना है कि हमारे देश में सदा मधु की वर्षा हो। इसके पत्ते पत्ते में सदा मधुरता ही छाई रहे। अपने राष्ट्र में सब कुछ मधुर ही मधुर देखने में आए। हमारी किसी भी बात में कटुता न हो ॥४३॥

ग्रामे ग्रामे भवतु मधुनो वर्षणं मातृभूमे-
रास्वाद्यैतन्मधुरमखिलास्तृप्तिमायान्तु लोकाः ।
निर्बाधं त्वं मधुमयमिदं स्वीयराष्ट्रं विधेहि
ज्ञास्याम्येवं तव कृतिमिमां स्नेहसद्भावयुक्ताम् ॥४४॥

हमारे राष्ट्र के प्रत्येक ग्राम में मधु की वर्षा हो। सब लोग इस मधुर मधु का आस्वादन कर तृप्त हो जाएं। आप अपने इस राष्ट्र को बिना किसी बाधा के मधुमय ही बना दें। मैं आपकी इस कृति को स्नेह और सद्भावना से भरी हुई समझूंगी ॥४४॥

कुर्युर्मेघा मधुरमधुनो वर्षणं भारते नो
नद्यां नद्यां तरतु मधु तत् सिञ्चनाय स्वभूमेः ।
वाप्यां वाप्यां स्रवतु तदथ स्नानहेतोर्जनानां
कूपे कूपे प्रसरतु ततस्तृप्तये मानवानाम् ॥४५॥

हमारे भारत में बादल मीठे मधु की वर्षा करें, वह मधु अपनी भूमि के सींचने के लिये नदी नदी में तैरने लग जाए। फिर वह लोगों के स्नान के हेतु प्रत्येक बौली में निकल आए तथा मनुष्यों की तृप्ति के लिये प्रत्येक कूएं में फूट पड़े ॥४५॥

शैले शैले दयित मधुनो वर्षणं स्यादभीष्टं
तेषूत्पन्नं भवतु मधुरं संसृतेर्मङ्गलाय।
वृक्षा भर्तर् मधुफलयुताः सन्तु सर्वे स्वदेशे
मध्वासिक्तं सकलभुवने भ्राजतां राष्ट्रमेतत् ॥४६॥

हे पतिदेव, हमारे प्रत्येक पर्वत में मधु की वर्षा हो। उनमें पैदा होने वाली प्रत्येक वस्तु संसार के कल्याण के लिये मधुर हो। हमारे देश के सभी पेड़ मीठे फल देने वाले हों। सब ओर से मधु से सिञ्चित किया हुआ यह भारत राष्ट्र सारे संसार में चमक जाये ॥४६॥

एतत्पत्रं किरतु मधुनो वर्षणं मानसे ते
स्फूर्तिं तुभ्यं ददतु समरे रक्तिमान्यक्षराणि।
भर्तः शीघ्रं लिपिकृतमिदं सार्थकं दर्शयित्वा
हत्वा शत्रून् मधुरिपुसमं दर्शनं देहि गेहे ॥४७॥

यह पत्र आप के मन में मधु की वर्षा करे, इसके लाल अक्षर आपको युद्ध में स्फूर्ति दें। हे पतिदेव, मेरे लिखे हुए

को शीघ्र ही सार्थक कर के, शत्रुओं को मार कर विष्णु भगवान् के समान घर पर दर्शन दो ॥४७॥

शस्त्रागारे भवतु विपुला संहतिरायुधानां
कीर्तिर्यायात् सकलभुवने पूर्ववद् वीरतायाः ।
स्वातन्त्र्यं नो गिरिवदचलं स्यादिदं प्रार्थयेऽहं
शत्रुः कश्चित् पुनरिह पते दृष्टिपातं न कुर्यात् ॥४८॥

हे पतिदेव, मेरी प्रार्थना है कि हमारे शस्त्रागार में शस्त्रों का भारी संग्रह हो। हमारी वीरता की कीर्ति पूर्वकाल के समान सारे संसार में फैल जाए। हमारी स्वतन्त्रता पहाड़ के समान अटल हो और हमारे राष्ट्र की ओर कोई भी आंख उठा कर न देखे ॥४८॥

एतद्राष्ट्रं प्रिय विजयतां संसृतौ भारतं नः
ख्यातिश्चास्य प्रसरतु सदा कौमुदीन्दोर्यथोर्व्याम् ।
स्वच्छं शीलं भजतु जनता विष्टपे श्लाघनीयं
पृथ्वी सर्वा गुरुमिव पुनः पूजयेद् देशमेनम् ॥४९॥

हे पतिदेव, इस भारत राष्ट्र की सारे संसार में विजय हो, इसकी प्रसिद्धि सारे संसार में चन्द्रमा की चांदनी के समान फैल जाए। हमारे लोग ऐसे स्वच्छ चरित्र को धारण करें जिसकी सारे संसार में प्रशंसा हो। यह सारा संसार पहले की तरह ही फिर इस देश की गुरु के समान पूजा करे ॥४९॥

शुद्धा बुद्धिर्भवतु जगतो नैव वैरं मिथः स्यात्
सर्वे देशाः सुखमनुगताः स्नेहपूर्वं वसन्तु ।
म्लाना दृष्टिः क्वचिदपि तथा नात्र कस्यापि भूया-
देतत्सर्वं सकलभुवनं सादरं स्वीकरोतु ॥५०॥

सारे संसार की अच्छी बुद्धि हो, आपस में किसी का विरोध न हो। सब देश सुख का भोग करते हुए प्रेम से रहें। इस संसार में किसी के प्रति किसी की मैली दृष्टि न हो। यह सारा भूमण्डल इन सभी बातों को आदर के साथ स्वीकार कर ले ॥५०॥

इति सप्तमः सर्गः समाप्तः ॥

